सिद्धान्तरत्नाकर

उपासनाखण्ड

षड्क्षरस्तोत्रं सभाष्यम्

संग्रहकर्ता

पं० कालिकेश्वरदत्त शर्मा

प्रकाशक

बाबू जीवेन्द्रनारायण राय देवशर्मा

मूल्य आठ आना

प्रथमावृत्ति १०००

मुद्रक : श्री लक्ष्मीनारायण नाथ
प्रवासी प्रेस, १२०।२, अपर सरकुलर रोड, कलकत्ता ।

भूमिका

सिद्धान्तरत्नाकरका यह चतुर्थ खण्ड उपासना खण्ड है वह उपासना दो प्रकारकी है एक स्थूलोपासना और दूसरी सूक्ष्मोपासना स्थूलोपासना मूर्तिमें होती है जैसे कि लिखा है।

स्थण्डिलेश्वा जले वह्नौ वाया वाकश एवबा गुरौ स्वात्मनिवा योमां पूजयेद्भक्ति तत्परः ॥ मूर्तिमें जल अग्नि वायु आकाशमें गुरूमें अथवाँ अपने शरीरमें ध्यानकर पूजन करना स्थूलोपासना द्वारा हीं मनुष्य सूक्ष्मोपासनामें पहुँचता है स्थूलोपासनाका माहात्म्य और देव दानव यक्ष गन्धर्व मनुष्य सब लोगोंने किया है यह लिंग पूजाके केवल भारतवर्षमे ही नहीं होती हिन्दू जातिसे अतिरिक्त जातियाँ भी विदेशोंमें लिंग पूजा करते हैं बाबू शिवप्रसादजीने वृहत्कलेवर नामक एक ग्रन्थ लिखा है जो काशी ज्ञानमण्डलसे प्रकाशित हुआ है जिसमें अपने आँखकी देखी हुई बात लिखी है और पं० कालूरामजीने मूर्तिपूजा नामक पुस्तकमें लिखा है पं० माधवाचार्य शास्त्रीने भी ॐकार शिवलिंग नामक पुस्तक लिखा है जिसमें शिवलिंग पूजन का अनादित्व व्यापकत्व सिद्ध किया है लिंगको बहुत नास्तिक लोग मुत्रेन्द्रिय मानकर मुर्खतावस परिहास करते हैं सो लिंग शब्द चिह्न वाचक है परमेश्वरका चिह्न है इन सब बिषयोंको प्रमाणके साथ लिखा गया है और सूक्ष्मोपासना योग द्वारा षटचक्रोंके अभ्याससे (सोहं) अजपा जपमें दृढ़ होकर शिवरूपको अपनेसे एकता मानकर अनिर्वाच्य आनन्दको प्राप्तकर द्वैतभावका नाश हो जाना जैसे कि

(सोहमर्कः परं ज्योतिः रकों ज्योतिरहं शिवः आत्मज्योतिरहं शुक्रः सर्वं ज्योतिरसावदोम् ।।) षटशतानि दिवारात्रौ सहस्त्राण्येक विंशतिः हंसः सोहमिमं मन्त्रं जीवोजपति सर्वदा इत्यादि)

सूर्यमे रहनेवाला शुद्ध ज्योतिरूप शिव मैं हूँ और सब ज्योति रूप मैं हूँ) इसी भावको लेकर एक्काइश हजार छः सब दफे यह जीव (सोहं) मन्त्रका दिन रात्रिमें जप करता है भाषाके कविने भी लिखा है कि (चिन्मात्र तू भरपूर है नहीं विश्व तुमसे अन्य है जब दूसरा है ही नहीं तो सोचका क्या काम है—विश्वासकर विश्वासकर मत मोहको तू प्राप्त हो नित्य आत्मा एक है अद्वैत है एक तत्व है) यह सब विषय प्रमाणयुक्त लिखकर इस ग्रन्थको समाप्त करता हूँ सज्जन महाशय सब जो कुछ त्रुटि हो उसपर ध्यान न दें निःपक्ष प्रमाणयुक्त जो हमने कहा है उस सिद्धान्त मार्गको ग्रहणकर हमारे परिश्रमको सफल करें सिद्धान्तका लक्षण इस प्रकार है—

सर्वं प्रमाणसिद्धोर्थो ध्रुवो यन्न विचाल्यते ।
सोऽयं सिद्धान्त इत्युक्तो नाध्रुवश्चाल्यते यतः ॥

इति शिवम्

शान्तिः शान्तिः शान्तिर्भवतु

आप लोगोंका शुभेच्छु
पं० कालिकेश्वर दत्त शर्मा
राज्य डुमराँव आरा

विष्णुकृत महिम्नस्तोत्रे श्रीविष्णुवाक्यम्

भवंतं देवेशं शिव मितर गिर्वाण सदृशं
प्रमादाद्यः कश्चिद्यदि वदतिचित्तेऽपिमनुते
सुदुःखं लब्ध्वान्ते नरकमपियाति ध्रुवमिदं
ध्रुवं देवाराध्य स्त्वमसि शरणं त्वां ध्रुवतरम्

श्रीमान्धीमा न्कीर्तिमा न्नीतिमान्यः
सद्भिर्मान्यो भक्तिमा न्भाग्यमान्यः
रायो पाख्यो जीवनारायणेन
सद्धर्मार्थं मुद्रितं भक्तियुक्तम्

दोहा

जिला मसुदाबादमें लालगोला एक राज
जीवेन्द्रनारायणने कियो मुद्रित धर्मके काज

विषय सूची

विषय सूची—२

विषय सूची—२

ग्रन्थकर्ता पंडित कालिकेश्वर दत्त शर्मा

श्री गणेशाय नमः

सिद्धान्तरत्नाकर

उपासनाखण्डे

श्री सदाशिव हैं परें कहत वेद पुराण ।
दरसायो इस खण्डमें दियो विविध प्रमाण ॥

श्रीगणेशाय नमः ॥ यस्येस्वरस्य विमलं चरणारविन्दं संशेव्यते सिद्धमधुव्रतेन ॥ निर्व्वाण शातक गुणाष्टक वर्गपूर्ण तं शंकरं सकलदुःखहरं नमामि ॥ १ ॥ शिव-पुराणे वायुसंहितायाम् ॥
शिवो१ माहेश्वर२ श्चैव रुद्रो३ विष्णुः४ पितामहः५ ॥
संसारवैद्यः६ सर्वज्ञः७ परमात्मेति८ मुख्यतः ॥

जिस परमेश्वरके चरणारविन्दको देव ऋषि असुर मनुष्य आदि सब सेवन करते हैं निर्वाण कैवल्य मुक्तिका दाता तथा सब दुःखोंका नाशक शंकरको मैं प्रणाम करता हूँ ॥१॥ शिवपुराणके ज्ञान संहितामें लिखा है कि शिव, महेश्वर, रुद्र, विष्णु, पितामह, संसार वैद्य,

नामाष्टक मिदंपुण्यं शिवस्यप्रतिपादकम् ॥२॥ अत्यन्त परिशुद्धात्म्ये त्यतोऽयं शिव उच्यते ॥ स एव प्रकृतौ लीनो भोक्तायः प्रकृतेर्मतः ॥३॥ तस्य प्रकृति लीनस्य यः परः समहेश्वरः ॥ रुद्दुखं दुःखहेतुर्वा तद्रावयति नः प्रभुः ॥ ४ ॥ रुद्र इत्युच्यते सद्भिः शिवः परम कारणम् ॥ व्याप्याधितिष्ठति शिव स्ततो विष्णुः प्रकीर्तितः ॥५॥ पितृभावेण सर्वेषां पितामह उदीरितः ॥ निदानज्ञो यथावैद्यो रोगस्य विनिवर्तकः ॥ संसारवैद्य इत्युक्तः सर्वतत्वार्थ वेदिभिः ॥ ६ ॥ यद्यथावस्थितं

सर्वज्ञ, परमात्मा, ये आठ नाम शिवको कहता है और महा पुण्य देनेवाला है ॥२॥ शिवके आठ नामोंका अर्थ आगे कहते हैं अत्यन्त शुद्ध तथा कल्याणकारी होनेसे शिव उनका नाम है और वही शिव मायायुक्त होनेसे महेश्वर कहाते हैं रु याने दुःख उसका (द्रावण) नाशक होनेसे रुद्र उनका नाम है अथवा (स्वस्मिन्भक्ति विवर्जितान् जनान् रोदयतीति रुद्रः) अपने भक्तिसे विमुख जनोंको रुलाते हैं अतः रुद्र उनका नाम हैं सब जगतमें व्यापक होकर रहते हैं अतः विष्णु उनका नाम है ॥३॥४॥५॥ देवासुर मनुष्य यक्ष गन्धर्व आदि सबका पिताके पिता हैं अतः पितामह उनका नाम है जैसे रोगका निदान समझकर वैद्य औषधसे रोग निवृत्त कर देता है वैसे हीं संसाररूपी

वरतु तत्तथैव सदाशिवः ॥ अयत्नेनैव जानाति तस्मा-त्सर्वज्ञ उच्यते ॥७॥ सर्वात्मा परमैरेभिर्गुणैर्नित्यं सम-न्वयात् ॥ स्वस्मात्परात्म विरहात्परमात्मा शिवः स्वयम् ॥८॥ अथान्यदप्युक्तम् ॥ स आदिः सर्वजगतां कोऽस्य वेदान्वयात्ततः ॥ सर्वं जगद्यस्य रूपं दिग्वसाः कीर्त्यतेततः ॥ ९ ॥ गुणत्रयमयं शूलं शूली यस्मा द्बिभर्ति सः ॥ अवद्धाः सर्वतो मुक्ता भूताएव स तत्पतिः ॥ १० ॥ स्मशानञ्चापि संसारस्तद्वासी कृपया-र्थिनाम् ॥ भूतयः कथिता भूति स्तां विभर्ति सभूति-

रोगका नाशक ज्ञानी सब उनको कहते हैं ॥६॥ सर्वत्र व्यापक होनेके कारण जहाँ जो कार्य हो रहा है सो सब उनके दृष्टिके आगे हो रहा है अतः सर्वज्ञ उनका नाम है ॥७॥ सब जीवरूप तथा सबका अधिपति होनेसे परमात्मा उनका नाम है ॥८॥ संसारके भीतर और बाहर शिव हैं तो उनका आवरण नहीं हो सकता अतः दिगम्बर कहाते हैं ॥९॥ रजोगुण, तमोगुण सत्त्वगुण तीनोंको धारण धारण करनेसे त्रिशूली उनका नाम है सब भूतों (जीवों) के पति होनेसे अथवा पृथ्वी, अप, तेज, वायु आकाश, पाँचो भूतोंकी उत्पत्ति आकाशसे है आकाशाधिपति शिव हैं अतः भूतनाथ उनका नाम है भूतिनाम ऐश्वर्य की है वह उन्हींके कृपासे होती है अतः

भृत् ॥११॥ वृषो धर्म इतिप्रोक्त स्तमारूढ स्ततोवृषी ॥ सर्पाश्च दोषाः क्रोधाद्या स्तान्विभर्ति जगन्मयः ॥१२॥ नानाविधान् कर्मयोगान् जटाजूटान्विभर्ति सः ॥ वेदत्रयी त्रिनेत्राणि त्रिपुर स्त्रिगुणम्वपुः ॥ १३ ॥ भस्मीकरोति तद्देव स्त्रिपुरघ्नस्ततः स्मृतः ॥ एवम्बिधं महादेवं विदुर्ये सूक्ष्मदर्शिनः ॥१४॥ ज्ञानाग्निः सर्व-कर्म्माणि भस्मसात्कुरुते किल ॥ तेनैवभस्मना गात्र मुद्धूलयति धूर्जटि ॥ १५ ॥

भुतिभृत उनका नाम है ॥१०॥११॥ यह जगत स्मशान है उसमें रहनेसे स्मशानवासी और संहार कालमें धर्म शिवके शरणागत हुए उनको वृषभ रूप बनाकर वाहन बनाये तस्मः वृषी हुये जगमय होगेके कारण काम क्रोधादि सर्पोंको धारण करनेसे सर्पभूषण नाम पड़ा ॥१२॥ अनेक प्रकारके कर्म्म समूह उनका जटाजूट है तीनों वेद उनका तीनों नेत्र है तीनों गुण उनमें रहता है वही त्रिपुर है उसका नाश करके निर्गुण होकर रहते हैं अतः त्रिपुरघ्न हैं सुक्ष्मदर्शी पुरुष इस प्रकार महादेवको जानते हैं ॥१३।१४॥ ज्ञानाग्निसे सब कर्मोंको भस्मकर उसी भस्मको सब अंगोंमें धारण करते हैं ॥१५॥ वेदान्त, सांख्य, योग, एही तीन उनका जटा है और सब ज्ञानी महर्षीयोंका उन्हींमें विश्राम है ॥१६॥ सोम, सुर्य, अग्नि एही तीन उनके नेत्र

विश्रामोऽयं मुनीन्द्राणां पुरातन वटोहरः ॥ वेदान्त सांख्य योगाख्या स्तिश्रस्तज्जटयस्मृताः ॥१६॥ आप्यायन स्तमोहन्ता विद्यया दोषदाकृत ॥ सोम-सूर्य्याग्निनयन स्त्रिनेत्र स्तेनशंकरः ॥१७॥ योगिनः पवनाहारा स्तथागिरिविलेशयाः ॥ निजरूपे धृतास्तेन भुजङ्गा भरणोहरः ॥१८॥ शान्ति वैराग्य वोधाख्यै स्त्रिभिरग्रै स्तरस्त्रिभिः ॥ त्रिगुणं त्रिपुरं हन्ति त्रिशूलेन त्रिलोचनः ॥१९॥ ब्रह्माद्या यत्रनारूढा स्तमारोहति शंकरः ॥ समाधिं धर्ममेव्वाख्यं तेनायं वृषवाहनः ॥२०॥ नित्यंक्रीड़ति यश्चाऽयं स्वयं संसार भैरवः ॥

हैं ज्ञानरूपी प्रकाशसे तमका नाशक आत्मविद्यासे दोषका दहन करनेवाले हैं ॥१७॥ योगी सब पर्वतके कन्दरारूपी विलमें वासकर वायु पीकर रहते हैं उसी रूपमें सर्प भी रहते हैं अतः भुजंग भूषण उनका नाम है ॥१८॥ शान्ति, वैराग्य, बोध, इन तीनोंसे त्रिगुण सत्व, रज, तम, तीनोंका नाश करते हैं अतः त्रिपुरघ्न त्रिलोचन हैं ॥१९॥ ब्रह्मा, विष्णु, इन्द्र, आदि देवगण जिसपर नहीं चढ़े वही धर्म रूप वृषभ उनका बाहन है और उनके ध्यानसे धर्म मेघ नामक समाधि प्राप्त होती है ॥२०॥ संसाररूपी स्मशानमें नित्य क्रीड़ा

तत्रस्मशाने संसारे शिवः सर्वत्र दृश्यते ॥२१॥ अगस्त्य संहितायां तृतीयाध्याये ॥ सर्वेश्वरं स्सर्वमयः सर्वभूत हितेरतः ॥ सर्वेषामुपकाराय साकारोभून्निराकृतिः ॥२२॥ लैङ्गेऽपि ॥ द्यौमूर्द्धाहि विभोस्तस्य खंनाभिः परमेष्ठिनः सोमसूर्याग्नयो नेत्रेदिशः श्रोत्रेमहात्मनः ॥२३॥ वक्त्राद्वै ब्राह्मणाजात्ता ब्रह्माच भगवान्विभुः ॥ इन्द्रविष्णु भुजाभ्यांतु क्षत्रियाश्च महात्मनः वैश्या श्चोरूप्रदेशात् शूद्राः पादात्पिनाकिनः ॥२४॥ सूतसंहितायां यज्ञवैभवखण्डे सप्तविंशे ध्याये ॥ नचनामानि रूपाणि शिवस्य परमात्मनः ॥

करते हैं और सर्वत्र व्यापक होकर रहते हैं ॥२१॥ अगस्त्य संहिताके तीसरे अध्यायमें लिखा है कि सर्वेश्वर सर्वमय सब जीवोंके हितकारी परमात्मा साकार शिवरूप हुये ॥२२॥ लिंगपुराणमें लिखा है कि परमात्मा शिवका मस्तक स्वर्ग है नाभी आकाश नेत्र सोम सूर्य अग्नि कान दशोदिशा हैं ॥२३॥ उनके मुखसे ब्राह्मण और ब्रह्मा हुये वाहुसे इन्द्र विष्णु क्षत्रिय जाती हुई उरूसे वैश्य पादसे शूद्र जाति हुई ॥२४॥ सूतसंहिता यज्ञ वैभवखण्डके सत्ताइवें अध्यायमें लिखा है कि परमात्मा शिवका नाम रूप नहीं है परन्तु उपासनाके लिये

तथापि मायया तस्य नामरूपे प्रकल्पिते ॥२५॥ शिवो रुद्रो महादेवः शंकरो ब्रह्म सत्परम् ॥ एवमादिनी नामानि विशिष्टानि परस्यतु ॥२६॥ तत्रैव पञ्चविंशत्यध्याये विष्णुवाक्यम् ॥ नाहं संसार मग्नानां सात्ता-त्ससार मोचकः ॥ ब्रह्मादिदेवा श्यान्येऽपि नैव संसार मोचकाः ॥२७॥ अहं ब्रह्मादिदेवाश्च प्रसादा-त्तस्य शूलिनः ॥ प्रशादेनहि संसार मोचका नात्र-संशयः ॥२८॥ नामत श्चार्थतश्चापि महादेवोमहेश्वरः ॥२९॥ शिवपुराणेऽपि ॥ त्तरन्त्य विद्याघमृतं विद्येति

उनका कल्पित नाम रूप माना गया है ॥२५॥ शिव, रुद्र, महादेव, शंकर, ब्रह्म, सत्य, आदि ये सब नाम उसी परमात्माका है ॥२६॥ वहाँ ही अध्याय पचीसमें विष्णु भगवानका वचन है कि इस ससारसे पार करनेवाला मैं नहीं हूँ और न ब्रह्मा इन्द्र आदि देवता हैं शिवहीके प्रसादसे हम सब मुक्ति दाता कहे जाते हैं ॥२७॥ नामतः अर्थात महादेव ही महेश्वर हैं ॥ मैं और ब्रह्मा इन्द्र आदि देवता शिवहीके प्रसादसे मुक्तिदाता हैं नामतः अर्थतः महादेव महेश्वर ही हैं ॥२८॥२९॥ शिवपुराणमें भी लिखा है कि विद्या अविद्या दोनोंसे परे महेश्वर हैं तीनों गुणोंसे अलग चतुर्व्यूह (चार

परिगीयते ॥ ते उभे ईशतेयस्तु सोऽन्यः खलुमहेश्वर ॥३०॥ देवोगुणत्रयातीत श्चतुर्व्यूहो महेश्वरः ॥ सकलस्सकलाधारो शक्तेरूत्पति कारणम् ॥३१॥ वायु संहितायाम् ॥ षष्टाध्याये ॥ एकएवतदारुद्रो नद्वितीयोऽस्ति कश्चयन ॥ विश्वतश्चक्षुरेवाय मुतायं विश्वतोमुखः ॥ शंकर पुरुषाः सर्वे स्त्रियः सर्वा महेश्वरी ॥३२॥ रुद्रो उपनिषद ॥ रुद्रोनर उमानारी तस्मै तस्यै नमोनमः ॥ रुद्रो ब्रह्मा उमा वाणी तस्मै० ॥ रुद्रोविष्णु रुमालक्ष्मी तस्मै० ॥ रुद्रोसूर्य्य उमाछाया तस्मै० ॥ रुद्रोदिवा उमा रात्रि तस्मै तस्यै नमोनमः ॥३३॥ यस्य यस्य पदार्थस्य या या शक्ति रुदीरिता ॥

आवरण) साकार शक्तिको उत्पन्न करनेवाले महेश्वर हैं ॥३०॥३१ वायु संहिता अध्याय छमें लिखा है कि सब तरफसे मुख तथा सब ओरसे नेत्रवाले रुद्र हैं उनके अतिरिक्त दूसरा नहीं है सब पुरुष शिव हैं और स्त्री भगवती हैं ॥३२॥ रुद्रोपनिषदमें लिखा है कि जगतमें जो पुरुष हैं सो सब रुद्र हैं और जितनी स्त्रियाँ हैं सो उमा रूप हैं ब्रह्मा रुद्र हैं सरस्वती उमा हैं विष्णु रुद्र लक्ष्मी उमा सूर्य रुद्र छाया उमा दिन रुद्र रात्रि उमा हैं इन दोनोंको मैं नमस्कार करता हूँ ॥३३॥

सा सा सर्वेश्वरी शक्तिः स स सर्वो महेश्वरः ॥३४॥ नास्तमेति नचोदेति नशान्तो नविकारवान् ॥ सर्व-भूतान्तरश्चरो भानुर्भर्ग इतिस्मृतः ॥३५॥ स्कान्दे विष्णु वाक्यम् ॥ स्रष्टात्वं सर्वजगतां रक्षितासर्वदेहि-नाम् ॥ हर्ताच सर्वभूतानां त्वाम्विनैवास्ति कोपरः ॥३६॥ अणुनामप्यणीयांस्त्वं महांस्त्व महतामपि ॥ अन्तर्बहिस्त्वमे वैतद् जगदाक्रम्यवर्तते ॥३७॥ निगमा यस्यनिःश्वाश्वासाविश्वंते शिल्पवैभवम् ॥ परेशः परतः शास्ता सर्वानुग्राहकः शिवः ॥३८॥ महाभारते शान्ति

अण्डज, पिण्डज, उष्मज, स्थावर, चारों प्रकारके जीवोंका पुरुष महेश्वर और स्त्री उमा हैं ॥ ३४ ॥ शिवका नाम सूर्य है परन्तु यह सूर्य उदय लेता है अस्त होता है ग्रहण आदि विकारोंसे मलीन होता है वह सूर्य एकसाँ रहता है कभी विकार युक्त नहीं होता है ॥३५॥ स्कन्द पुराणमें विष्णु भगवानका वचन है कि हे शिव ? आप ही जगतका सृष्टि कर्ता रक्षक नाशकर्ता हैं आपके अतिरिक्त दूसरा कोई नहीं है ॥३६॥ छोटासे भी छोटा और बड़ासे भी बड़ा जगतके बाहर भीतर व्यपक होकर आप ही रहते हैं ॥३७॥ वेद आपका श्वासरूप है और यह जगत आपकी कारिगरी है सबसे परे सबके अनुग्रह करनेवाले आप हैं ॥३८॥ महाभारतके शान्ति

पर्वणि ॥ ईश्वरश्चेतनःकर्ता पुरुषः कारणं शिवः ॥ विष्णु ब्रह्मा शशी सूर्य्यः शक्रो देवाश्च सान्वयाः ॥३९॥ सृज्यन्ते ग्रस्यतेचैव तमोभूत मिदंजगत् ॥ अप्रज्ञातं जगत्सर्वं तदाह्येको महेश्वरः ॥४०॥ सुरेश्वर कृत वार्तिकायाम् ॥ यदीयैश्वर्य्य विप्रुड्भि ब्रह्म विष्णु शिवादयः ऐश्वर्यवन्तो भासन्ते स एवात्मा सदाशिवः ॥४१॥ श्रीमद्भागवते षष्ट स्कन्दे पार्वती वाक्यम् ॥ एषामनुध्येय पदाब्जयुग्मं जगद्गुरुं मङ्गलमङ्गलस्वयम् ॥४२॥ तत्रैव तृतीयस्कन्दे दितिकृत शिवस्तोत्रम् ॥ नमोरुद्रायमहते देवायोग्राय मीढुषे ॥ शिवायन्यस्त-

पर्वमें लिखा है कि ईश्वर, चेतन, कर्ता, पुरुष, सबका कारण शिव हैं विष्णु, ब्रह्मा, चन्द्रमा, सूर्य, इन्द्र, आदि देवोंको उन्होंने बनाया पुनः अन्तमें सबका नाश करके एक महेश्वर वही रह जाते हैं ॥३९ ४०॥ सुरेश्वराचर्यकृत वार्तिकमें लिखा है कि जिनके एक ऐश्वर्यके लेशमें ब्रह्मा, विष्णु रुद्र आदि देव ऐश्वर्यमान भासमान होते हैं वही अत्मा सदाशिव हैं ॥४१॥ श्रीमद्भागवतके छठवें स्कन्दमें पार्वतीका वचन है कि जगद्गुरु मंगलके भी मंगल करनेवाले शिवके चरण युगल ध्यानकरने योग्य है ॥४२॥ पुनः वहाँ ही तृतीयस्कन्दमें दितिकृत स्तुति है कि दण्ड धारण किये जो रुद्र

दण्डाय धृतदण्डाय मन्यवे ॥४३॥ तत्रैव चतुर्थ-स्कन्दे षष्ठाध्याये ब्रह्मवाक्यम् ॥ जानेत्वामीश विश्व-स्य जगतोयोनिवीजयोः शक्तेः शिवस्यच परं यत्तद्ब्रह्म निरन्तरम् ॥ त्वमेव भगवन्नेतच्छिव शक्योः स्वरुप-योः ॥ विश्वंसृजसि पास्यास्सि क्रिड़न्नूर्णपटोवथा ॥४४॥ महाकविकालिदास वाक्यम् ॥ अकिञ्चनः सन्प्रभवः ससम्यदाम् ॥ त्रिकोलनाथः पितृसद्म गो-चरः ॥ सभीमरुपः शिव इत्युदीर्य्यते ॥ नसन्ति याथा-र्य्यं विदः पिनाकिनः ॥४५॥ महाभारते अनुशासन-

उग्रदेव सब कार्य करनेमें समर्थ उनको मैं नमस्कार करती हूँ ॥४३॥ वहाँ ही चतुर्थस्कन्दमें ब्रह्माका वचन है कि हे शिव ! आपको मैं जानता हूँ कि जगतका वीजरूप आप और योनिरूप शक्ति हैं एही दोनों परब्रह्म हैं और आप ही दोनों विश्वके बनानेवाले रक्षा करने वाले और संहार करनेवाले हैं जैसे मकरी अपने मुखसे जाल फैलाती है पुनः सब अपनेमें खींच लेती है ॥४४॥ महाकवि कालिदासका वचन है कि अपने तो दरिद्र हैं तीनों लोकके धनके अधिपति हैं महा भीमरूप शिवको यथार्थमें किसीने नहीं जाना ॥४५॥ महाभारत-के अनुशासन पर्वमें अर्जुनके प्रति भीष्म पितामहका वचन है कि महादेवके गुणानुवाद कहनेमें मैं असमर्थ हूँ जो सब जगह रहते हैं

निके पर्वणि अर्ज्जुनम्प्रप्रति भीष्म वाक्यम् ॥ अश-
क्तोऽहं गुणान्वक्तु महादेवस्य धीमतः ॥ योहिसर्वगतो
देवो नच सर्वत्रदृश्यते ॥४६॥ ब्रह्म बिष्णु सुरेशानं
श्रष्ठाच प्रभुरेवच ॥ ब्रह्मादयः पिशाचान्ता यंहिदेव
मुपासते ॥४७॥ कोहिशक्तो गुणान्वक्तुं महादेवस्य
धीमतः ॥ गर्भ जन्मजरायुक्तो मर्त्यो मृत्यु समन्वितः ॥
ऋते नारायणत्युत्र शंखचक्र गदाधरात् ॥४८॥ शिव-
पुराणे ज्ञानसंहितायां विष्णुम्प्रति शिववाक्यम् ॥
त्रिधाभिन्नो ह्यहंविष्णो ब्रह्म विष्णु हराख्यया ॥ सर्ग-

और देखनेमें नहीं आते ॥४६॥ ब्रह्मा, विष्णु, इन्द्र, आदि देवोंके
उत्पन्न करनेवाले और उन सर्वोका प्रभु हैं ब्रह्मासे लेकर पिशाच
पर्यन्त जिनका उपासना करते हैं ॥४७॥ गर्भ जन्मजरा मृत्युसे युक्त
मनुष्य उनका गुणानुवाद नहीं कह सकता एक शंख चक्र गदाधारी
कृष्णको छोड़कर उनका महात्म्य कौन कह सकता है अतः उन्हींसे
पूछो ॥४८॥ शिवपुराणके ज्ञानसंहितामें विष्णुके प्रति शिवका वचन
है कि हे विष्णु ! मैं ही ब्रह्मा, विष्णु, रूद्र, होकर पालन, सृष्टि,
संहार, करता हूँ वस्तुतः मैं त्रिगुणातीत निर्गुण हूँ तीनो रूपमें मैं ही
हूँ तथापि शिवरूप जो हमारा है सो सत्य ज्ञान अनन्त और सबका

रत्नालय गुणैर्निष्कलोऽपि सदाहरे ॥४६॥ तथापी-हम दीयम्बै शिवरूपं सनातनम् ॥ मूल भूतं सदाप्रोक्तं सत्य ज्ञान मनन्तकम् ॥ ५० ॥ मनु वाक्यम् ॥ द्विधाकृतात्मनोदेह मर्द्धेन पुरुषो भवत् ॥ अर्द्धेन नारी तस्यां स विराज मसृजत्प्रभुः ॥५१॥ अथान्यदप्युक्तम् ॥ कीटो भ्रमर योगेन भ्रमरो भवति ध्रुवम् ॥ मानवः शिवयोगेन शिवो भवति निश्चितम् ॥५२॥ ज्ञानं शिवमयं भक्तिः शैवीध्यानं शिवात्मकम् ॥ शैवव्रतं शिवार्चेति शिवयोगोहि

मूल भूत है ॥४६॥५०॥ मनुका भी वचन है कि वही परमेश्वरकी जब सृष्टिकी इच्छा होती है तब आधे देहसे पुरुष आधेसे स्त्री होकर उत्पन्न होता है ॥५१॥ और भी किसीका वचन है कि जैसे कीट भ्रमरके योगसे भ्रमर हो जाता है वैसे ही यह जीव शिवके ध्यानसे शिव हो जाता है ॥५२॥ सब जो कुछ देखनेमें आता है सो सब शिवरूप है १ मनकर्म वनचनसे शिवकी भक्ति २ शिव आत्मा परब्रह्म हैं ऐसा ध्यान ३ कालाष्टमी शिव चतुर्दशी प्रदोष एकादशी आदि शिव व्रत करना ४ चतुःषष्ठ्युपचार द्वारां त्रिशदुप-चार षोड़शोपचार यथालाभ शिवपूजन करना ५ यह पाँच शिव

पंचधा ॥ ५३ ॥ सौरोपपुराणे सप्तचत्वारिंशेऽध्याये ॥ निकटाएव दृश्यन्ते कृतान्तः नगर द्रुमाः ॥ शिवं स्मरशिवं ध्याय शिवञ्चिन्तय सर्वदा ॥ ५४ ॥ शिव-धर्म्मोपपुराणे एकादशाध्याये ॥ गच्छन् तिष्ठन् स्वपन् जाग्रन् उन्मिषन् निमषन्नपि ॥ शुचिर्वाप्यशुचिर्वाऽपि शिवं सर्वत्र चिन्तयेत् ॥ ५५ ॥ शिवपुराणे॥ वृक्ष-मूलस्यसेकेन शाखाः पुष्यन्ति वै यथा ॥ शिवस्य पूजयातद्वत् पुष्यन्त्यस्य वपुर्जगत् ॥ ५६ ॥ सर्वाभय प्रदानञ्च सर्वानुग्रहणं तथा ॥ सर्वोपकारकरणं शिव-

योग है ॥५३॥ सौर उपपुराणके अध्याय सत्ताइसमें लिखा है कि यमपुर जानेका समय निकट आ रहा है अतः शिवका स्मरण ध्यान चिन्तन सर्वदा करो ॥५४॥ शिव धर्म उपपुराणके अध्याय एगारहमें लिखा है कि चलते बैठते सुतते जागते आँख खोलते बन्द करते पवित्र तथा अपवित्र रहते सबकालमें सब जगह शिवका ध्यान करो ॥५५॥ शिवपुराणमें लिखा है कि जैसे वृक्षके मूल सींचनेसे उसका शाखा पत्र प्रस्फुलित होता है वैसे हीं शिवके पूजनसे उनका शरीररूप जगत प्रस्फुलित होता है ॥५६॥ सब पापोंसे अभय देनेवाला सब प्रकारका उपकार करने वाला और

स्याराधना द्विजाः ॥५७॥ आदित्योपपुराणे ॥ विश्वेश्वरमुमाकांत विश्वांतर्य्यामिणं शिवम् ॥ न ब्रह्माद्यैः समं ब्रूयाच्छक्तिभिश्चापिपार्वतिम् ॥५८॥ ब्रूयाद्यदि शिवं साम्वं ब्रह्मविष्णवादिभिः समम् ॥ यः कश्चित्तमसाविष्टः कदाचिन्नैव तं स्पृशेत् ॥५९॥ स्कादे रेवाखण्डे पञ्चविंशेध्याये ॥ शम्भुर्नपूज्यते यत्र रुद्रभागो न दीयते ॥ देशेतस्मिन्नवावृष्टि दुर्भिक्षं मरणं ध्रुवम् ॥६०॥ शारदा तिलके ॥ निर्गुणः सगुणश्चेति शिवो ज्ञेयः सनातनः ॥ निर्गुणः प्रकृतेरन्यः सगुणः सकलस्मृतः ॥६१॥ वल्लभाचार्य्येण

अनुग्राहक एक शिव पूजन है ॥५७॥ आदित्य उपपुराणमें लिखा है कि विश्वेश्वर उमाकान्त शिवको ब्रह्मा विष्णु आदि देवोंके बराबर नहीं कहना और उनकी शक्ति पार्वतीको लक्ष्मी सरस्वती आदि शक्तियोंके बराबर नहीं कहना ॥५८॥ जो तमोगुणी अज्ञानी पुरुष ब्रह्मा विष्णुके समान शिवको मानते हैं उनको भूलसे भी नहीं छूना ॥५९॥ स्कन्द पुराण रेवाखण्डके अध्याय पचीसमें लिखा है कि जिस देश वा ग्राममें शिवपूजा न होती हो और जिस यज्ञमें शिवका भाग न हो वहाँ अनावृष्टि मरण दुर्भिक्ष आदि उपद्रव अवश्य होते हैं ॥६०॥ शारदातिलकमें लिखा है कि शिव दो प्रकारके हैं एक निर्गुण दूसरा सगुण निर्गुण मायारहित परब्रह्म सगुण मूर्तिमान हैं ॥ ६१ ॥

पत्रावलम्बनग्रन्थे प्युक्तम् ॥ स्थापितो ब्रह्मवादोहि सर्ववेदान्त गोचरः ॥ काशीपतिस्त्रिलोकेशो महादेवस्तु तुष्यतु ॥ ६२ ॥ कालिदाश वाक्यम् ॥ नमो विश्व-सृजे पूर्वं विश्वं तदनु विभ्रते ॥ अथविश्वस्य संहर्त्रे तुभ्यं त्रेधात्मने नमः ॥ ६३ ॥ वाग्भट्ट कृतस्तुतिः ॥ रजोजुषे जन्मनि सत्ववृत्तये स्थितौ प्रजानां प्रलये तमः स्पृशे ॥ अजाय सर्गस्थिति नाशहेतवे त्रयीमयाय त्रिगुणात्मने नमः ॥ ६४ ॥ स्कान्दे नोपालखण्डे पञ्चपञ्चाशत्यध्यायये ॥ शिवार्चन प्रभावेण तदैक-शरणेन च मार्कण्डेयः कल्पवासी देहेनैव गतिं

वल्लभाचार्यने पत्रावलम्बन नामक ग्रन्थमें लिखा है कि तीनों लोकके अधिपति महादेवके प्रसन्न होनेके लिये मैंने सब वेदान्तका सिद्धान्त ब्रह्मवादका स्थापन किया ॥ ६२ ॥ महाकवि कालिदासजी कहते हैं कि जगतका सृष्टिपालन संहार करनेवाले शिवको मैं प्रणाम करता हूँ ॥६३॥ वाग्भट्टने स्तुति किया है कि रजोगुणसे सृष्टि सतोगुणसे पालन तमोगुणसे नाश तीनों गुण रूप और तीनों वेदरूप शिवको मैं नमस्कार करता हूँ ॥६४॥ स्कन्द पुराण नेपालखण्डके अध्याय पचपनमें लिखा है कि अनन्य भक्त होकर शिव पूजाके प्रभावसे मार्कण्डेय कल्पवासी हुये और इसी

गतः ॥ ६५ ॥ तदर्चन प्रभावेण श्वेतो मृत्युञ्जितः पुरा ॥ चन्द्राङ्गदोऽपि राजर्षि निंमग्नो यमुना जले पत्न्या तदर्चनं कृत्वा पुनः प्राप्ता निजं पतिम् ॥६६॥ राजपुत्रोऽपि चाल्पायु रभिषेकैः शतायुषः ॥ सञ्जातोऽन्येपि बहवः स्व स्वाभीष्टं यथेप्सितम् ॥ देवता सार्वभौमस्तु शंकरः सर्वकामदः ॥६७॥ पद्मपुराणे पाताल-खण्डे एकशत नवतितमे ध्याये ॥ इष्टान्भोगानवाप्याथ शिवलोके महीयते ॥ ब्रह्मा विष्णुर्महेन्द्राद्यास्त-

देहसे स्वर्गको गये ॥६५॥ और शिवपूजाके प्रभावसे श्वेत नामक ऋषि मृत्युको हटा दिये चन्द्रांगद नामक राजा दैववश यमुनामें डूबकर पातालको चले गये उनकी सीमन्तिनी नामकी स्त्री सोमवार व्रत तथा शिव पूजाके प्रभावसे पुनः अपने पतिको प्राप्त हुई ॥६६॥ एक राज पुत्र अल्पायु रुद्राभिषेकसे शतायु हो गया और सब देव दानव यक्ष गन्धर्व मनुष्य आदि सबोंने शिव पूजासे मनोवांछित फल प्राप्त किये सब ऐहिक पारलौकिक फलदाता सार्वभौम शिव हैं ॥ ६७॥ पद्मपुराणके पाताल खण्डमें लिखा है कि जो पुरुष नित्य-नियम पूर्वक अनन्यभक्तिसे शिवका पूजन करते हैं वे यहाँके सब मनोवांछित फल भोगकर बाद मरनेके शिवपुरमें जाते हैं और वहाँ शिवके आज्ञासे ब्रह्मा, विष्णु, इन्द्र, आदि देवगण उसका दाश

त्पुरद्वारपालकाः ॥६८॥ लक्ष्मी सरस्वती देव्यौ देहल्पाद्य-र्चनेत्थितेः ॥ नियुक्ते देवदेवस्य देवाश्च सुरयोषितः ॥ दास्यो देवाः समस्ताश्च दाशास्तस्य महात्मनः ॥६९॥ महाभारते अनुशाशनिके पर्वणि द्विषष्ठितमे ध्याये ॥ अशुभैः पापकर्म्माणो ये नरा कलुषी कृताः ॥ ईशानं न प्रपद्यते तमो राजस वृत्तयः ॥ ७० ॥ स्कान्दे रेवा-खण्डे उनषष्टितमे ध्याये ॥ अप्येकदिवसंयावच्छिव भक्ति परायणः ॥ शिवधर्मपरस्तस्य धर्मस्यान्तो न विद्यते ॥ ७१ ॥ महाभारते अनुशासनिके पर्वणि द्वादशाध्यायेऽपि ॥ जन्तोर्विगतपापस्य भवेद्भक्तिः

होकर सेवा करते हैं और लक्ष्मी, सरस्वती, इन्द्राणी, आदि देव पत्नियोंने भी छत्र चामर लेकर दाशी होती हैं ॥६८॥६९॥ महाभा-रत अनुशासन पर्वके अध्याय वासठमें लिखा है कि जो पुरुष अशुभ पापकर्मोंमें रत हैं और राजस तामस वृत्तिवाले हैं उनके हृदयमें शिवभक्ति उत्पन्न नहीं होती है ॥७०॥ स्कन्दपुराणके रेवा-खण्डमें लिखा है कि जो पुरुष शैव धर्मसे युक्त होकर एक दिन भी शिवभक्ति करता है उसका पुण्यका अन्त नहीं है ॥७१॥ महाभारत अनुशासन पर्वके अध्याय बारहमें लिखा है कि मनुष्यका जब सब पाप दूर हो जाते हैं और भावी कुछ अच्छा होनेवाली होती है तब

प्रजायते ॥ उत्पन्नाच भवेभक्तिरनन्या सर्वभावतः ॥ भाविनः करणेचास्य सर्वयुक्तस्य सर्वथा ॥ ७२ ॥ ऋग्वेदे ॥ ६-४६-१० ॥ भुवनस्यपितरं गीर्भिराभी-रुद्रं दिवावर्धया रुद्रमशक्तौ बृहन्त मृष्वमजरं सुषुम्न मृदग्धुवेम कविनेषितासः ॥ तत्रैव ॥ ६-२८-७ ॥ रुद्रः परमेश्वरस्य तत्रैव ॥ २-१-६ ॥ त्वदग्ने रुद्रो असुरो महादिव स्त्वंशर्धोमारुत पृत्त इतिशिशे त्वं वातै ररुणैर्यासि शङ्गय स्त्वं पूषा विधतः पासि नुत्मना ॥१॥ तत्रैव ॥ ५-४२-११ तमुष्टुहि यः स्विषुसुधन्वा यो

शिवमें अनन्य भक्ति उत्पन्न होती है ॥७२॥ ऋग्वेदमें लिखा है कि जो रुद्र अग्नि आदि देवोंको उत्पन्न करनेवाला भुवनका पिता विश्वका एकमात्र स्वामी महाज्ञानी वह हमें शुभबुद्धि दे और जो रुद्र सबमें व्यापक होकर भुवनको बनाता है उस तेजस्वी रूद्रको हमारा नमस्कार हो ॥ पुनः वहाँ ही लिखा है कि रुद्र परमेश्वरको हमारा नमस्कार हो ॥ पुनः वहाँ ही द्वितीय काण्डमें लिखा है कि हे अग्निदेव ! रूद्ररूप होकर सब देवोंको हवि पहुँचानेवाले आप मेरा रक्षा करें ॥१॥ वहाँ ही काण्ड पाँचवेंमें लिखा है कि जो रुद्र संसाररूपी रोगका औषध है उनको सौमनस्य नामक यज्ञसे पूजन करके

विश्वस्य क्षयति भेषजस्य यक्ष्मामहे सौमनसाय रुद्रं नमोभिर्देव मसुरं दुरवस्य ॥ २ ॥ तत्रैव ॥ १-३६-१४ ॥ सविताहरः सवितापश्चात्सविता पुरस्तात्सवितोत्तरस्तात्सविताधारात् सवितानः सुवतु सर्वतातिं सवितानो रासतां दीर्घ मायुः ॥ ३ ॥ अथर्व वेदे ॥ १३-६ ॥ सधाता विधर्ता सोऽर्यमा स रुद्रः स महादेवः सएव मृत्युः सरक्षकः सरुद्रः ॥ ४ ॥ तत्रैव ॥११-२-३-॥ रुद्रः परमेश्वरः ॥ ७-९२-१ ॥ जगत्सृष्टा सर्वजगदनु प्रविष्टः रुद्रः ॥ १-१९-३ ॥ रुद्रः संहर्तादेवः ॥ ५ ॥ तत्रैव ॥ का० ११-अ० ५ सू० १५-१६ ॥ मुखायते पशुपते यानि चक्षुंषि ते

नमस्कार करता हूँ ॥२॥ पुनः वहाँ ही काण्ड पहलामें लिखा है कि सविता नाम हरका है जो सबका रक्षक वही सविता आगे पीछें दोनों बगलमें नीचे उपर और सब जगहोंमें व्याप्त होकर हमको दीर्वायु करे ॥३॥ अथर्व वेद काण्ड १३ में लिखा है कि वही रुद्र धाताविधाता अर्यमाँ महादेव मृत्यु रक्षक सब वही है ॥४॥ पुनः वहाँ ही काण्ड ७ और ११ में लिखा है कि रुद्र ही परमेश्वर है जगतको बनाकर उसमें प्रविष्ट होकर वही रहता है ॥ संहार करने वाला रुद्रदेव हैं ॥५॥ हे रुद्र ! हे पशुपति ! आपके मुखको नेत्रको

भव त्वचे रुपाय संदृशे प्रतीच्चिनाय ते नमः नमः सायं प्रातर्नमो रात्र्या नमो दिवा भवाय सर्वाय चोभाभ्या मकरं नमः ॥ ६ ॥ भवःशर्वौ मृड़तंमाभियातं भूतपती पशुपती नमो वाम् ॥ प्रतिहिता मायतां माविश्राष्टं मानो हिंसिष्ट द्विपदो माचतुः पदः ॥ ७ ॥ तत्रैव ॥ ७-१२-१ ॥ योग्नौरुद्रो योअप्स्वन्तर्य ओषधीर्वीरुधआविवेश यइमा विश्वाभुवनानि चाक्लृपे तस्मै रुद्राय नमो स्त्वग्नये ॥८॥ अथर्व शिरउपनिषदि तृतीय खण्डे ॥ यत्सूक्ष्मं तद्वैद्युतं यद्वैद्युतं तत्परब्रह्म यत्परब्रह्म स एकः य एकः सरुद्रः योरुद्रः स ईशानः

त्वचाको रूपको और प्राचीन नवीन रूप आपको मेरा नमस्कार है हे शर्व ! हे भव ! सायं प्रातः रात्रिमें दिनमें सर्व कालमें आप दोनोंको मैं नमस्कार करता हूँ ।।६।। हे भव ! हे शर्व ! हे मृड़ ! हे भूपपति ! हे पशुपति ! आप दोनोंको मेरा नमस्कार है धनुष धारण किये दोनों देवसे प्रार्थना करता हूँ कि हमारे द्विपद चतुःपदोंको मत मारिये ।।७।। जो रुद्र अग्नि, जल, औषधी आदि सबमें विद्यमान है और चौदहो भुवनमें व्याप्त है उस अग्निरूपको रुद्रको मैं नमस्कार करता हूँ ।।८।। अथर्वशिर उपनिषदके तृतीय खण्डमें लिखा है कि जो सूक्ष्म है वही विद्युत है और वही परब्रह्म है जो परब्रह्म

य ईशानः स भगवान्महेश्वरः ॥६॥ यजुर्वेदे ॥ एक एवरुद्रो न द्वितीयाय तस्थे आखुस्ते रुद्रपशुस्तं जुषस्वैषते भाग सहस्वस्राम्बिकया तंजुषस्व ॥ १० ॥ ऐतरेय ब्राह्मणे ॥ अग्निर्वा रुद्रः तस्यैद्वेतन्वौ घोराऽन्या च शिवान्या च ॥११॥ मुण्डकोपनिषदि ॥ अग्निमूर्धा चक्षुंषि चन्द्रसूर्यौ दिशः श्रोत्रे वाग्विवृताश्च वेदाः वायुः प्राणो हृदयं विश्वमस्य पद्भ्यां पृथिवी ह्येष सर्व भूतान्तरात्मा ॥१२॥ सामवेदे कौथुमी शाखायाम् ॥ १-७-७ ॥ आवोराजान मध्वरस्य रुद्रं होतारं सत्य

है वही एक है जो एक है वही रुद्र है और वही ईशान है, जो ईशान है वही भगवान महेश्वर है ॥६॥ यजुर्वेदमें लिखा है कि एक रुद्र है दूसरा नहीं है और वही अग्निका शक्तिके साथ होकर सबका नियामक (शासन) करनेवाला होता है ॥१०॥ ऐतरेय ब्राह्मणमें लिखा है कि अग्नि दो रूप हैं और उनका दो शरीर है एक घोर (संहारकर्ता) दूसरा शिव (कल्याणकर्ता) ॥११॥ मुण्डकोपनिषदमें लिखा है कि उस परमेश्वरका मस्तक अग्नि हैं चन्द्र सूर्य्य नेत्र दशो दिशा कर्ण है वेद उनका वाक्य है वायु प्राण हैं यह जगत उनका हृदय है पृथ्वी चर हैं यही सर्व भूतान्तरात्मा है ॥१२॥ सामवेद कौथुमी शाखामें लिखा है कि हे

यजं रोदस्योः ॥ १३ ॥ शिव पुराणे कैलाशसंहितायां अष्टमाध्याये ॥ शिवो वा प्रणवोह्येष प्रणवो वा शिवस्मृतः॥ वाच्य वाचकयोर्भेदो नात्यन्तं विद्यते यतः ॥ तस्मादेकाक्षरं देवं शिवम्परम कारणम् ॥१॥ विधेश्वरसंहितायाम् षोड़शाध्यापि अस्मा त्पञ्चाक्षराद्यज्ञे वोधकं सकलस्य तत् ॥ अकारादि क्रमेणैव नकारादि यथाक्रमम् ॥२॥ प्रोहि प्रकृतियातस्य संसारस्य महोदधेः नवं नवान्तरमिति प्रणवम्वै विदुर्बुधाः ॥ प्रकर्षेण नयेद्यस्मा न्मोक्षं वः प्रणवं विदुः ॥ ३ ॥ कैलाश संहिताया मंपि ॥

रुद्ररूप अग्निदेव ! इस यज्ञका राजा आप यहाँ आइए हविको ग्रहण कीजिये ॥१३॥ शिवपुराण कैलाशसंहिताके अध्याय आठमें लिखा है कि वाच्य वाचक रूपसे जो ॐकार है वही शिव हैं जो शिव हैं वही ॐकार है एकाक्षर देव परमकारण शिव हैं ॥१॥ विद्येश्वर संहिताके अध्याय सोलहवेंमें लिखा है कि शिव पञ्चाक्षर (ॐ नमः शिवाय) से सब उत्पन्न हुआ अकारसे लेकर नकारके भीतर सब है ॥२॥ प्रणव शब्दका अर्थ प्र माने (प्रकृति) माया जिससे उत्पन्न हुआ जगत नव माने नित्य नया-नया इसका नाम प्रणव है, जिसके जपसे प्रमाने प्रकर्ष (विशेष) करके नयेत (प्रापयेत) मोक्षको अतः प्रणव उसका नाम पड़ा ॥३॥ पुनः कैलाशसंहितामें सूतजी

ब्रह्मादिस्थाः वरान्तन्च सर्वेषां प्राणिनां खलु ॥ प्राणः प्रणव एवायं तस्मात्प्रणव ईरितः ॥ ४ ॥ दक्षिणं बाहु-मुधृत्य शपथं प्रब्रवीमि वः ॥ सत्यं सत्यं पुनः सत्यं सत्यं सत्यं पुनः पुनः ॥ प्रणवार्थः शिवसाक्षात्प्राधा-न्येन प्रकीर्तितः ॥५॥ अथान्य दप्युक्तम् ॥ एकाक्षराय रुद्राय अकारायात्मरूपिणे उकारायादि देवाय विद्या देवाय वै नमः ॥ तृतीयोय मकाराय शिवाय परमा-त्मने सोमसूर्याग्नि वर्णाय यजमानाय वै नमः ॥६॥ ब्रह्माण्ड पुराणे ॥ ब्रह्म विष्णवग्निशक्रार्क जलभूमि पुरोगमाः ॥ सुराऽसुराः सम्प्रसूतास्ततः सर्वे महेश्व-

सौनकादि महर्षियोंके प्रति प्रतिज्ञापूर्वक कहा है कि हे महर्षियों ! मैं दक्षिण बाहु उठाकर शपथपूर्वक सत्य-सत्य-सत्य और बारम्बार सत्य कहता हूँ कि प्रणवका अर्थ प्रधान रूपसे शिव है ॥४॥५॥ और भी किसीका वचन है कि ॐ एकाक्षर वाच्यदेव शिव हैं अकार आत्मा-रूप उकार आदि विद्यादेव तृतीय मकार शिव परमात्मा एवम्भूत सोम सूर्य अग्निरूप सर्व यज्ञ पूज्य शिवको मैं नमस्कार करता हूँ ॥६॥ ब्रह्माण्डपुराणमें लिखा है कि ब्रह्मा, विष्णु, अग्नि, इन्द्र, सूर्य, जल, पृथ्वी, सुर, असुर आदि सब शिव ही से उत्पन्न हुये

रात् ॥७॥ महाभारते आश्वमेधीय पर्वे ॥ विशेषाद्-ब्राह्मणान्सर्वान्पूजयामास चेश्वरम् ॥ यज्ञेन यज्ञहंतारं अश्वमेधेन शंकरम् ॥ ८ ॥ श्रीमद्भागवते चतुर्थस्कन्दे देवानां वाक्यम् ॥ नाहं नयज्ञो नच यूयमन्ये येदेह भाजो मुनश्चतत्वम् ॥ विदुः प्रमाणं वलवीर्य्ययोर्वा तस्यात्म तन्त्रस्य कथं विधित्सेत् ॥ ९ ॥

इति श्रीमद्योगिवर्य्यं विप्रराजेन्द्र स्वाम्यात्मज पं० कालिकेश्वर दत्त संगृहीते सिद्धान्तरत्नाकरे चतुर्थ उपासनाखण्डे प्रथमस्तरङ्गः ॥

॥७॥ महाभारतके आश्वमेधीय पर्वमें लिखा है कि युधिष्ठिरके अश्वमेध यज्ञमें विशेष रूपसे ब्राह्मण लोग दक्षयज्ञ नाशकर्ता शिवका ही पूजन किये ॥८॥ भागवतके स्कन्द चौथामें दक्षयज्ञमें देवताओंके प्रति ब्रह्माका वचन है कि हम और यज्ञकर्ता ब्राह्मण सब और देवता सब देहधारी कोई उनका बलवीर्य नहीं जान सकता है तो उनका स्तुतिः कैसे हो सकता है ॥९॥

इतिश्री भाषाटीकायां चतुर्थ उपासनाखण्डे प्रथमस्तरङ्गः

द्वितीयस्तरंग:

श्रीगणेशायनमः ॥ अथ द्वितीयस्तरङ्गः ॥ रमानाथंदेवं सकलजगतां रक्षणपटुं भजेऽहंदेशं सुरवरनतं भक्त सुखदम् ॥ सदा सिद्धैः शेव्यं भवभयहरं विष्णुमनघं वसन्तं वैकुण्ठे पशुपति वराल्लब्ध विभवम् ॥१॥ शिवपुराणे विद्येश्वरसंहितायां तृतीयाध्याये ॥ श्रवणादित्रिकेऽसक्तो लिङ्ग वेरञ्च शांकरम ॥ संस्थाप्य नित्यमभ्यर्य्य तरेत्संसार सागरात् ॥२॥ पुनस्तत्रैवो-

दोहा—शक्तिरूप श्रीविष्णुके चरणनमें शिर नाय।
सब देवोंमें पूज्यको आगे कहौं बुझाय ॥

जो विष्णु शिवके वरदानसे सर्वज्ञ ईश्वर सर्वपूज्य हुये उनको मैं नमस्कार करता हूँ सब जगतका रक्षक सब देवोंसे पूज्य संसाररूपी रोगका महौषध वैकुण्ठवासी भगवानका मैं भजन करता हूँ ॥१॥ शिवपुराण विद्येश्वर संहिताके अध्याय तृतीयमें लिखा है कि श्रवण, मनन, निदिध्यासन करनेमें जो असमर्थ हैं उनको शिवका लिंग और वेर (मूर्ति) की पूजा करनी चाहिये ॥ २ ॥ पुनः वहाँ ही लिखा है कि शिव दो प्रकारके हैं एक निराकार

क्तम् ॥ शिवोहि द्विविधः प्रोक्तो निष्कलः सकल-
स्तथा ॥ निष्कलत्वान्निराकारं लिङ्गं तस्य प्रपूज्यते
॥३॥ सकलत्वात्तथा वेरं साकारन्तस्य संगतम् ॥
आब्रह्मत्वाच्च जीवत्वा तथाऽन्ये देवतागणाः ॥४॥
सर्वे सकलमात्रत्वा दर्च्यते वेरमात्रके ॥ शिवस्योभय
रूपत्वाल्लिङ्गे वेरेच पूज्यते ॥५॥ लैङ्गे पूर्वार्द्धे एकविंश-
त्यध्याये ॥ वरं प्राणपरित्यागः च्छेदनं शिरसोपिवा ॥
नत्वनभ्यर्च्य भुञ्जीयाद्भ गवन्तं सदाशिवम् ॥६॥
तत्रैव षट्चत्वारिंशे ध्यायेऽपि ॥ सर्वलिंगमयो लोकः

और दूसरा साकार निराकार होनेसे आकार रहित लिंगकी पूजा
होती है और साकार होनेसे वेर (मूर्ति) की पूजा होती है। ब्रह्मासे
लेकर सब देवता गणोंमें जीवत्व होनेसे सगुण हैं निराकार नहीं है
अतः उन सबोंकी मूर्ति पूजी जाती है लिंग नहीं शिव दोनों रूपमें
है अतः उनका लिंग और मूर्ति दोनोंकी पूजा होती है ॥३॥४॥५॥
लिंग पुराण पूर्वार्द्ध अध्याय एकइशमें लिखा है कि प्राण त्याग करना
तथा शिर काट देना अच्छा है परन्तु बिना शिव पूजन किये भोजन
करना अच्छा नहीं है ॥६॥ पुनः वहाँ ही अध्याय छियालिसमें
लिखा है कि सब जगत लिंगमय है और लिङ्ग योनिसे जगतके सब
जीवोंकी उत्पत्ति है अतः अर्घाके साथ लिङ्गको स्थापन कर पूजन

सर्वं लिङ्गेप्रतिष्ठितम् ॥ तस्मात्सवेदिकं लिंग स्थापये त्पूजयेच्चतत् ॥७॥ ब्रह्मवैवर्तें प्रकृतिखण्डे षष्ठाध्याये कृत्वालिंग सकृत्पूज्य वसेत्कल्यायुतं दिवि ॥ प्रजा-वान् भूमिमान् विद्वान् पुत्रवान् धनवांस्तथा ॥ ज्ञान-वान् मुक्तिमान साधुः शिवलिंगार्चनाद्भवेत् ॥८॥ स्कान्दे महेश्वरखण्डे ॥ पीठिका विष्णु रुपस्या स्त्रिङ्ग-रुपी महेश्वरः ॥ तयोः सम्पूजनादेव देवी देवः सम-र्चितौ ॥९॥ आकाशं लिंगमित्याहुः पृथ्वी तस्यच पीठिका ॥ आलयः सर्वदेवानां लयनाल्लिङ्ग मुच्यते ॥१०॥ यस्य ब्रह्माच विष्णुश्च इन्द्रश्च सहदैवतैः ॥

करे ॥७॥ ब्रह्मवैवर्त प्रकृतिखण्ड अध्याय छः में लिखा है कि एक वार भी श्रद्धापूर्वक जो शिवलिंगका पूजन करते हैं सो अयुत (दश हजार) कल्प स्वर्गमें रहते हैं और प्रजावान् भूमिमान् विद्वान पुत्रवान् धनवान् ज्ञानवान् मुक्तिमान् साधु होते हैं ॥८॥ स्कन्द-पुराणके महेश्वर खण्डमें लिखा है कि अर्घा--विष्णु हैं लिंग शिव हैं दोनोंके पूजनसे देवी और शिव पूजनका फल होता है ॥९॥ आकाश लिंग है पृथ्वी अर्घा है और उसीके भीतर सब देवता रहते हैं तथा नाशको प्राप्त होते हैं अतः उसका नाम लिंग है ॥१०॥ ब्रह्मा, विष्णु, इन्द्र, सब देवता, जिसका लिंग पूजन करते हैं तो

अर्चयेथाः सदालिंग तस्माच्छ्रेष्टतमो नहि ॥११॥
शिवरहस्ये ॥ लयनात्सर्वजगतां लिंगमित्युच्यते बुधैः ॥
लीनमर्थं गमयति तस्मात्तल्लिंग मुच्यते ॥१२॥ सन-
त्कुमार संहितायाम् शिववाक्यम् ॥ योर्चयार्चयते-
देवि पुरुषो मां गिरे सुते ॥ नमेतस्मात्प्रियतरः प्रियो-
वा विद्यतेततः ॥१३॥ लैंगे उत्तरार्द्धे चतुर्विंशेध्याये ॥
मूर्द्धि पुष्पं निधायेवं नशून्यं लिंगमस्तकम् ॥ यस्य-
राष्ट्रेतु लिंगस्य मस्तकं शून्य लक्षणम् ॥ तस्या
लक्ष्मीर्महारोगो दुर्भिक्षस्त्वा धनक्षयः ॥१४॥ शिव-
रहस्ये ॥ जलधारा मुक्तिधारा पाप धारापहारिणी ॥

उनसे बड़ा कौन हो सकता है ॥११॥ शिव रहस्यमें लिखा है कि
सब जगत जिसमें लय हो अथवा लीन (गुप्त) अर्थको प्रकाश करने-
वाला लिंग हैं ॥१२॥ सनत्कुमार संहितामें शिवका भगवतीके प्रति
बचन है कि हे पार्वती ! जो पुरुष विधिपूर्वक मेरे लिङ्गका अर्चन
करता है उससे अधिक प्रिय हमको दूसरा नहीं है ॥१३॥ लिंग
पुराण उत्तरार्द्ध अध्याय चौविसमें लिखा है कि शिव लिंगका मस्तक
शून्य नहीं रहना चाहिये पत्र पुष्प आदि कुछ रहना चाहिये जिस
राजाके राज्यमें लिंगका मस्तक शून्य रहे उसके राज्यमें दुर्भिक्ष,
मरण, रोग, धनक्षय, आदि पीड़ा होता है ॥१४॥ शिव रहस्यमें

घारारूपाणि पापानि नश्यन्ति जलधारया ॥१५॥ भविष्ये ॥ शिवलिंग समीपस्थं यत्तोयं पुरतःस्थितम् ॥ शिवगङ्गेति विख्यातं तत्रश्नात्वा दिवंब्रजेत् ॥१६॥ शिवपुराणे ज्ञानसंहितायाम् ॥ लिंगा दुत्पादयामास त्रीन्लोकान्स चराचरान् ॥ ब्रह्माणमसृजत्पुत्रं प्राजापत्ये भ्यषेचयत् ॥ पुनर्विष्णुञ्च सृजते लीलया गर्भसम्भवम् ॥१७॥ वायु संहितायाम् ॥ लिंगवेदी महादेवी लिंग साक्षान्महेश्वरः ॥ तयोस्सम्पूजनादेव देवी देवः समर्चितौ ॥१८॥ पुनः ज्ञान संहितायां पञ्चमाध्यायमारभ्य उनत्रिंशदध्याय पर्यन्तम् ॥ गुणेष्वपिच

लिखा है कि जलधारा शिव लिंगपर देनेसे मुक्तिकी धारा है और धारारूप पापोंका नाशक है ॥१५॥ भविष्य पुराणमें लिखा है कि शिव लिंगके समीप वापी, कूप, तडाग, आदि जो जलाशय हो वह शिव गङ्गा है उसमें स्नान करनेसे स्वर्ग प्राप्त होता है ॥१६॥ शिव पुराणके ज्ञान संहितामें लिखा है कि सब चराचर जगत लिंग हीसे उत्पन्न किये और ब्रह्माको पुत्र उत्पन्न कर प्रजापति पद दिये विष्णुको खेल हीमें गर्भसे बनाये ॥१७॥ वायुसंहितामें लिखा है कि अर्वा भगवती लिंग शिव हैं दोनोंके पूजनसे शिवशक्तिकी पूजा होती है ॥ १८ ॥ पुनः ज्ञानसंहितामें

यःप्रोक्त स्तामसः प्राकृतोहरे ॥ वैकारिकाश्च विज्ञेयो योऽहंकार उदाहृतः ॥ नामतो वस्तुतोनैव तामसः परिचक्षते ॥१९॥ पापञ्चतुर्विधं ताव द्यावन्नार्चयते शिवम् ॥ सम्पूजिते शिवेदेवे सर्वंदुखं विनश्यति ॥२०॥ वस्तुतो निर्गुणस्साक्षात्सगुणः कारणेनच ॥ कुतो जातिर्भवत्तेस्य निर्गुणस्य परात्मनः ॥२१॥ सर्वासामपि विद्याना मधिष्ठानं सदाशिवः ॥ उच्छ्वासरूपिणो वेदा दत्तास्तु विष्णवेपुरा ॥२२॥ ज्वर प्रताप शान्त्यर्थं जलधारा शुभावहा ॥ शतरुद्रीपमन्त्रेण रुद्र

पाँचवें अध्यायसे लेकर उनतीसवें अध्याय तक लिखा है कि रुद्रको कहुँ कहुँ तामस लिखा है सो संहार करनेके हेतु क्योंकि जैसे अग्निमें दाहकत्व शक्ति है सो क्रोधवश नहीं है स्वभावतः वस्तुतः श्वेतवर्ण होनेसे सात्विक हैं ॥१९॥ चतुर्विध पाप तबहीं तक गरजते हैं जब तक मनुष्य शिवपूजा नहीं करता है और उनका पूजा करनेसे सब दुःख नष्ट हो जाते हैं ॥२०॥ शिव वस्तुतः निर्गुण हैं भक्तोंके उपकारार्थ सगुण होते हैं अतः उनकी कोई जाति नहीं है ॥२१॥ अष्टादशो विद्याओंका आदिकर्ता कवि सदाशिव हैं और उनके श्वाससे वेद हुआ जो पूर्वकालमें ब्रह्मा विष्णुको दिये ॥२२॥ ग्यारह आवृत्ति शतरुद्रिय मन्त्रसे जलधारा देनेसे ज्वर दाह शान्त

एकादशेनतु ॥२३॥ मृत्युञ्जयेन मन्त्रेण गायत्र्याष्ट सहस्रकेम् ॥ सुख सन्तान वृद्धसर्थं धारापूजन मुतम् ॥२४॥ सिद्धान्तशेखरे ॥ कुष्माण्डस्य फलाकारं रानङ्गस्य फलोपमम् ॥ काकडिम्ब फलाकारं गोललिंग मितिस्मृतम् शंखाभं मस्तकं लिङ्गं वैष्णवं तदुदाहृतम् ॥ पद्माभं मस्तकं ब्राह्मयं छत्राभं शक्र मुच्यते ॥२६॥ शिरोयुग्मं तदाग्नेयं त्रिपदं याम्यमीरितम् ॥ खड्गाभं नैऋतं लिङ्गं वारुणं कलसा कृतिम् ॥ २७ ॥ वायव्यं ध्वज-लिङ्गं तु कौवेरन्तु गदान्वितम् ॥ ईशानस्य त्रिशूलाभं

होता है ॥२३॥ मृत्युञ्जय मन्त्रसे तथा आठ हजार गायत्री मन्त्रसे धारा पूजा करनेसे सुख सन्तानकी वृद्धि होती है ॥२४॥ सिद्धान्त शेखरमें लिखा है कि कुष्माण्ड फलके आकार तथा नारंगी फलके आकारका कडिम्ब (इनारून) फलके सदृश लिङ्ग गोल लिङ्ग है ॥२५॥ जिस लिंगके मस्तकपर शंखकी आकृति हो वह वैष्णव लिंग है कमलके चिह्नसे युक्त ब्राह्मय लिंग है छत्र चिह्नसे युक्त शाक्र लिंग है ॥२६॥ दो शिरका अग्निरूप तीन चरणका यमरूप तलवारके चिह्नसे युक्त नैऋत्य कलशके आकृतिसे वारुण लिंग है ॥२७॥ ध्वजाके चिन्हसे वायु गदाके चिन्हसे कौवेर त्रिशूल चिन्हसे युक्त

लिङ्गानां लक्षणन्तु तत् ॥२८॥ मत्स्य सूक्ते ॥ पार्थिवं भुक्तये शस्तं मुक्तये चानुषङ्गतः ॥ २९ ॥ विश्वसार तन्त्रे ॥ मृत्तिका तोलकं ग्राह्यं अथवां तोलकद्वयम् ॥ स्वांगुष्ठ पर्वमात्रन्तु लिङ्गं कृत्वा प्रपूजयेत् ॥ ३० ॥ वीर मित्रोदये ॥ वस्त्रपूतं जलैर्नित्यं स्नापयित्वा तु भक्तितः ॥ लक्षाणा मश्वमेधानां फलमाप्नोति मानवः ॥३१॥ नलिङ्गा राधनादन्यत्पुरावेदे चतुर्ष्वपि ॥ विद्यते सर्वशास्त्राणा मेषएव सुनिश्चयः ॥३२॥ मत्स्य-सूक्ते षोड़शपटले ॥ अश्वमेध शहस्राणि वाजपेय

ईशान लिंग है ॥२८॥ मत्स्य सूक्तमें लिखा है कि पार्थीव लिंगके पूजासे इहलोकके धनपुत्रादि मनोवांछित फल तथा मुक्ति प्राप्त होती है ॥२९॥ विश्वसार तन्त्रमें लिखता है कि पार्थिव लिंग बनानेके लिये मिट्टी एक तोला अथवा दो तोला लेना और अपने अंगुठाके पर्वके वरावर लिंग बनाकर पूजन करना ॥३०॥ वीरमित्रोदयमें लिखा है कि जो पुरुष वस्त्रसे छानकर जल शिवलिंगपर चढ़ाते हैं उनको एक लक्ष अश्वमेध यज्ञ करनेका फल प्राप्त होता है ॥३१॥ चारो वेद छः शास्त्रोंका एक निश्चय यही है कि शिवलिंगकी पूजा करनी इससे बढ़कर दूसरा धर्म नहीं है ॥३२॥ मत्स्यसूक्तके सोलहवें पटलमें लिखा है कि शिवपूजासे जो फल प्राप्त होता है उसके सोलह

शतानिच ॥ महेशार्चन पुरायस्य कलानार्हन्ति षोड़सिम् ॥२३॥ प्रातरूत्थाय जोभक्त्या शिवंसम्पूज्यते क्वचित् ॥ कपिलानां शतंदत्त्वा यत्फलं तदवाप्नुयात् ॥२४॥ मध्यंदिनकरेप्राप्ते योलिङ्गं प्रतिपूजयेत् ॥ सम्पूर्णां पृथिविं दत्त्वा यत्फलं तदवाप्नुयात् ॥२५॥ लैङ्गेऽपि ॥ स्वर्गे मर्त्येच पाताले येदेवाः सम्वसन्ति-हि ॥ तेषाम्पूजा भवेद्देविशम्भुनाथस्य पूजनात् ॥२६॥ मातृकाभेद तन्त्रे पारदलिङ्गस्यार्थः ॥ पकारं विष्णु रूपञ्च आकारं कलिकास्वयम् ॥ रेफंशिवं दकारञ्च ब्रह्मरूपं नचान्यथा ॥ पारदं परमेशानि ब्रह्म विष्णु

अंशमें एक अंश फल हजार अश्वमेध और सब पाजपेय यज्ञ करनेसे नहीं प्राप्त होता है ॥२३॥ प्रातःकालमें जो शिवलिंगका पूजन करते हैं उनको सब कपिला गौ दान करनेका फल प्राप्त होता है ॥२४॥ मध्यान्हमें जो शिवलिंगका पूजा करते हैं उनको सम्पूर्ण पृथ्वी दानका फल होता है ॥२५॥ लिंगपुराणमें लिखा है कि स्वर्ग, मर्त्य पातालमें जो देवता रहते हैं उन सबोंकी पूजा हो जाती है शिव लिंगके पूजनसे ॥२६॥ मातृकाभेद तन्त्रमें पारद लिंगका अर्थ किया है कि पकार विष्णु आकार कालिका रकार शिव दकार ब्रह्मा अतः

शिवात्मकम् ॥३७॥ अथ कामनाभेदेन लिङ्गपूजन फलं वीरमित्रोदये ॥ विद्यार्थी शतसाहस्त्रं कन्यार्थीच शतत्रयम् ॥ विद्वान्लिङ्गायुतं कुर्या त्सर्वपाप हरंपरम् ॥ पुत्रार्थी सार्द्धसाहस्त्रं धनर्थी मर्द्धलक्षकम् ॥ मोक्षार्थी कोटि गुणितं भूतिकामः सहस्त्रकम् ॥ मारणार्थे सप्तशतं मोहनार्थं शताष्टकम् ॥३८॥ मासभेदेन लिंगभेद मप्युक्तम् शिवपुराणे ॥ मासे भाद्रपदेचैव पद्मरागमयं शुभम् ॥ आश्वयुज्याञ्च विधिवद् गोमेदक मयम्परम् ॥३९॥ कार्तिक्यां वैद्रुमं लिङ्गं वैदूर्य्य

पारद लिंग ब्रह्म विष्णु शिवात्मक लिंग है ॥३७॥ वीरमित्रोदयमें लिखा है कि कामना भेदसे लिंगकी संख्या लिखी है कि विद्यार्थी एक लक्ष लिंग पूजन करे कन्यार्थी तीन सव और अयुत (दशहजार) लिंग पूजासे सब पाप दूर हो जाते हैं ॥ पुत्रार्थी डेढ़ हजार धनार्थी आधा लाख मोक्षार्थी एक कड़ोर ऐश्वर्य्यार्थी एक हजार मारणार्थी सातसव मोहनार्थी आठ सव लिंगोंका पूजन करे ॥३८॥ शिवपुराणमें मास भेदसे लिंग भेद लिखा है कि भादोमें पद्मरागमणिका कुआरमें गोमेदमणिका कार्तिकमें विद्रुममणिका अगहनमें वैदूर्यमणिका पूसमें पुष्पराग मणिका माघमें द्युमणिका फागुनमें चन्द्रकान्त मणिका चैत्रमें पद्मरागका वैशाखमें गोमेदका ज्येष्ठमें विद्रुमका आषाढ़में वैदूर्य

मार्गशीर्षके ॥ पुष्यरागमयं पौषे माघे द्युमणिजन्तथा ॥४०॥ फाल्गुने चन्द्रकान्तोत्थं चैत्रे तद्व्यत्ययो भवेत् ॥ सर्वमासेषु रत्नाना मलाभे हैममेववा ॥४१॥ हैमाभावे राजतम्वा ताम्रंशैलजमेववा ॥ मृण्मयम्वा यथालाभं क्षणिकं चान्यदेववा ॥ जपित्वा शक्तितो मूलं ध्यात्वा साम्बं त्रिअम्बकम् ॥४२॥ शिवरहस्ये सप्तमांशे ॥ यदिप्रमादः पूजायां तदा व्यर्थन्तु जीवनम् ॥ अवै अर्थ्यं जीवनस्य केवलं शिव पूजया ॥४३॥ तदेवजीवनं धन्यं येनशंकर पूजनम् ॥ क्षण-मात्रं क्षणार्धंवा किमन्यदधिक मत्रद ॥४४॥ नपश्यति

मणिका लिंग बनाकर पूजन करे और सब मासोंमें रत्न न मिले तो सुवर्णका लिंग बनाकर पूजन करे ॥३९॥४०॥४१॥ सुवर्ण भी न मिले तो चाँदी तामा पत्थर अथवा मृतिकाका बनाकर पूजन करे शिवका ध्यानकर यथाशक्ति पंचाक्षर मन्त्रका जप करे ॥४२॥ शिव रहस्यके अंश सातमें लिखा है कि यह मनुष्य जन्म तभी सफल है कि शिव पूजामें जिसकी प्रीति है यदि शिव पूजामें आलस्य हुआ तो यह जीवन व्यर्थ हो गया ॥४३॥ एक क्षणमात्र अथवा आधा क्षण भी जो शिवपूजन करते हैं उन्हींका जीवन धन्य है ॥४४॥ महादेव

महादेवः साधनानि विशेषतः ॥ भक्तिमात्रं स्वभक्तस्य स्वार्चनाय प्रपश्यति ॥४५॥ दृढाभक्तिः सुधाधारा शिवलिङ्गे शिवात्मके ॥ यदि तर्हि जितंतेन सकलं खलुभूतलम् ॥४६॥ आयुः प्रतिक्षणं क्षीण मायुर्वृद्धिः कदापिन ॥ तद्वृध्यर्थं मुपायोऽपि श्रीमहादेव पूजनम् ॥४७॥ शरीरंश्वः परश्वोवा स्थास्यतीति ननिश्चयः ॥ अतः शिवार्चनं कार्य्यं त्वरया सादरं मुहुः ॥४८॥ यद्दिने यन्मुहुर्तेवा जीवनं यस्य निश्चितम् ॥ तदायत्नेन कर्तव्यं शिवलिङ्गार्चनं नृप ॥४९॥ नशिवाराधनादन्य

जी बहुत आडम्बर नहीं देखते हैं केवल भक्तिमात्रसे प्रसन्न होते हैं ॥४५॥ जिसकी शिवमें दृढ़ भक्ति धारारूपसे हो उसने सब भूमण्डलको जीत लिया ॥४६॥ यह आयु दिन-दिन क्षीण हो रही है इसके बढ़नेकी उपाय एक शिवपूजाके अतिरिक्त दूसरा नहीं हैं ॥४७॥ यह शरीर आज है कल रहेगा कि नहीं इसका निश्चय नहीं है अतः जहाँ तक शीघ्र हो सके शिव पूजा करनी चाहिये ॥४८॥ किसी राजर्षिके प्रति व्यासजी कहते हैं कि हे नृप ? जिस दिन जिस मुहूर्तमें यह जीव शरीरको त्यागकर परलोकको जानेवाला है सो अवश्य होगा अतः यत्नपूर्वक शिवलिंगार्चन करो ॥४९॥ इस लोकमें मनोवांछित फल देनेवाला शिवाराधनसे अन्य दूसरा कर्म

च्छ्रोके सर्वार्थ साधकम् नशिवात्परमोदेवः सर्वाभीष्ट प्रदायकः ॥५०॥ यद्गृहे वाणलिङ्गस्या च्छिवक्षेत्रंहि तत्स्मृतम् ॥ तत्रैवमरणं जन्तोरपि कीटपिपीलिकाम् ॥ मच्छ्रोके निवसेद्देवि पुनरावृत्ति दुर्लभम् ॥५१॥ वाणलिङ्गन्तु शूद्रेण यदिदेवि प्रतिष्ठितम् ॥ सर्वेषां दर्शनार्चासु अधिकारो भविष्यति ॥५२॥ सूक्ष्मं मदीयं लिङ्गंत त्पश्यन्ति शिवयोगिनः ॥ कथमन्येऽपि-पश्यन्ति नानाकामैक कामिनः ॥५३॥ नसंप्रोक्षण संस्कारो नप्रतिष्ठाहि पार्वती ॥ सपीठ मुक्तपीठम्वा

नहीं है और शिवसे परे सब अभीष्ट फलदाता दूसरा देवता नहीं हैं ॥५०॥ जिस गृहमें नर्मदेश्वर लिंगकी पूजा होती हो वह शिवक्षेत्र है वहाँपर कीट, पशु, पक्षी, मनुष्य, आदि जो मरें सो शिवलोकको जाते हैं पुनः गर्भ वास नहीं होता ॥५१॥ शिवजी पार्वतीसे कहते हैं कि हे पार्वती ! नर्मदेश्वर लिंग यदि शूद्र भी स्थापन किया हो तो उसका दर्शन पूजन सब कर सकता है ॥५२॥ सूक्ष्म जो हमारा लिंग है उसको शिवयोगी लोग देखते हैं अनेक कामनाओंसे युक्त मलीन पुरुष नहीं देख सकते हैं ॥५३॥ अंगन्यास पंचगव्य स्नान आदि नहीं भी किया गया हो अर्घाके साथ हो अथवा बिना अर्घाका हो तो भी नर्मदेश्वर लिंग पूजनीय है

नार्मदं लिङ्ग मर्चयेत् ॥५४॥ स्कन्दपुराणे अम्बिका-खण्डे श्रीसदाशिव वाक्यम् ॥ ब्रह्मलोकं विष्णुलोकं गोलोकं मामकं तव ॥ अव्याहताश्चरन्त्येव लिङ्गार्चन रतानराः ॥५५॥ ब्रह्म विष्णु विवादे तयोर्विवाद सम-नार्थं लिङ्गाविर्भाव स्तदुक्तं देवी भागवते पञ्चमस्कन्दे त्रयस्त्रिंशत्यध्याये ॥ मध्येलिङ्गं सुधाश्वेतं विपुलं दीर्घ मद्भुततम् आकाशे तरसातत्र वागुवाचा शरीरिणी ॥५६॥ ब्रह्मविष्णो माविवादं कुरुताम्वै परस्परम् ॥ लिङ्ग-स्यास्य परम्पारं अधस्तादुपरिध्रुवम् ॥ योयाति युवयो-

॥५४॥ स्कन्दपुराणके अम्बिका खण्डमें श्री सदाशिवका वचन है कि लिंगार्चनमें रत पुरुष ब्रह्म लोक, विष्णु लोक, गोलोक, हमारा लोक, उमालोक, इन सब लोकोमें बिना रोकटोकके बिहार करता है ॥५५॥ देवीभागवत स्कन्द पाँचके अध्याय तैंतीसमें लिखा है कि एक समय ब्रह्मा विष्णु दोनों आपुसमें युद्ध करने लगे ब्रह्मा कहते रहे कि मैं सृष्टि करता हूँ तुम पालन करते हो तो तुम हमारा चौकीदार हो अतः मैं बड़ा हूँ और विष्णु कहते रहे कि हम पालन न करें तो तुमारी सृष्टि जिवीत न रहे अतः मैं बड़ा हूँ दोनोंमें घोर युद्ध सव वर्ष तक हुआ फागुन कृष्ण चतुर्दशीको आधी रातके समय दोनोंके वीचमें पृथ्वी फोड़कर एक श्वेत लिंग उत्पन्न हुआ

मध्ये सश्रेष्ठो वां सदैवहि ॥५७॥ लैङ्गे असीतितमे ध्याये ॥ सर्वं व्याप्नोति यस्तस्मा त्सर्वव्यापी सनातनः ॥ ब्रह्माहरिश्च भगवा नाद्यन्तं नोप लब्धवान् ॥५८॥ स्कान्दे प्रभासखराडान्तर्गत अर्बुदखराडे चतुस्त्रिंशत्यध्याये ॥ युद्धाद्ब्रह्मन्निवर्तस्व त्वञ्चविष्णो ममाज्ञया ॥ एतन्माहेश्वरं लिङ्गं योऽस्यचान्ते गमिष्यति॥ सज्येष्ठः सविभुः कर्ता युवयो र्नात्रसंशयः ॥५९॥ पुनस्तत्रैव तयोर्युद्ध महद्दिव्यं अव्दानान्वश्चशतं-

जो बढ़कर आकाशको चला गया और आकाशवाणी हुई कि हे ब्रह्मा ? हे विष्णु ? तुम दोनों परस्पर युद्ध मत करो इस लिंगके एक उपर जावो और एक नीचेको जावो जो अन्त ले आवे वही बड़ा है ॥५६॥५७॥ पुनः इसी बातको लिंगपुराण अध्या असीमें लिखा है कि सबमें व्यापक होकर रहनेवाले सनातन शिव हैं जिनके लिंगका अन्त ब्रह्मा हरि नहीं पाये ॥५८॥ स्कन्दपुराणके प्रभास खराडके अन्तर्गत अर्बुद खराडमें अध्याय चौतीसवेंमें लिखा है कि दोनोंके बीच माहेश्वर लिंग उत्पन्न हुआ और आकाशवाणी हुई कि हे ब्रह्मा विष्णु ? तुम दोनों हमारे आज्ञासे युद्ध छोड़कर इस माहेश्वर लिंगका अन्त ले आवो जो अन्त ले आवेगा वही विभु कर्ता श्रेष्ठ माना जायगा ॥५९॥ पुनः वहाँ ही लिखा है कि दोनोंमें घोर युद्ध

पुरा ब्रह्मणा प्रेरितास्त्रस्य ज्वालापेतुः समंततः ॥६०॥ तदस्त्रज्वालया दग्धं त्रैलोक्य मखिल न्तथा ॥ विष्णुनाप्रेरितास्त्रश्च ब्रह्माणं हन्तुमागतम् ॥६१॥ ज्वालामाल समाग्नौ ब्रह्मविष्णु स्थितौतदा ॥ पितायः सर्वलोकानां ब्रह्मविष्णोश्च यः पिता सशिवः सर्बलो-कानां कृपाञ्चक्रे तयोरपि ॥६२॥ आदित्योपपुराणे ॥ माघकृष्ण चतुर्दश्यां तयोर्मध्ये महानिशि ॥ आत्मानं दर्शयामास लिङ्गरूपी महेश्वरः ।६३। तदूर्धंग तवान्ब्रह्मा हंसरूपी तदाकिल ॥ बाराहरूप मासाद्य अधोद्रष्टुंग-तोहरिः ॥६४॥ भविष्यपुराणे तृतीयपादे चतुर्थाध्याये

सव वर्ष तक हुआ ब्रह्माने जो अस्त्र विष्णुको मारनेके लिये चलाया उससे चराचर जगत जरने लगा और विष्णुने जो अस्त्र ब्रह्माको मारनेके लिये चलाया सो ब्रह्माके पास आया ॥६०॥६१॥ दोनों अस्त्रके ज्वालासे मोहित हो पड़े रहे तब तक सब लोकका पिता और ब्रह्मा विष्णुका भी पिता शिव कृपाकर लिंगरूपसे आविर्भाव हुए ॥६२॥ आदित्य उपपुराणमें लिखा है कि माघ कृष्ण चतुर्दशी (शिवरात्री) को निशीथमें (आधी रातमें) ब्रह्मा विष्णुके मध्य लिंग आविर्भाव हुआ ॥६३॥ लिंगका अन्त ले आनेके हेतु हंसरूप होकर ब्रह्मा ऊपर गये और वाराहरूप होकर विष्णु नीचेको गये ॥६४॥

ऽपि ॥ ज्योतिर्लिंगश्च भयदो योजनानन्त विश्रुतः ॥ हंसरुपं तदाब्रह्मा वाराहो भगवान्प्रभुः ॥६५॥ शताद्ब्दं तौ प्रयत्नेन यात श्चोर्ध्वमधः क्रमात् ॥ लज्जितौ पुनरागत्य तदा तुष्टुवतुर्मुदा ॥६६॥ तत्रैव ॥ ब्रह्माण्डे येस्थितादेवा स्तेषां स्वामी महेश्वरम् ॥ विवाहे तस्य सम्प्राप्ते सर्वेंदेवाः समाययुः ॥६७॥ उशनसोपपुराणे लक्ष्मी वाक्यम् ॥ हरिणा ब्रह्मणाचैव वर्षाणान्तु सहस्रकम् ॥ तवपारो नवैलब्धः अनन्तं बर्ण्यते ह्यतः ॥६८॥ स्कान्दे ब्रह्मखण्डान्तर्गत सेतुमाहात्म्ये चतुर्दशा-

भविष्य पुराण तृतीयपादके अध्याय चारमें लिखा है कि महा भयंकर ज्योतिलिंग दोनोंके बीच अनन्त योजन बड़ा प्रगट हुआ हंसरूप ब्रह्मा वाराहरूप विष्णु होकर गये ॥६५॥ वे दोनों वायुवेगसे उपर नीचेको गये अन्त न पाकर लौट आये और स्तुति करने लगे ॥६६॥ पुनः वहाँ ही शिव विवाह कथा प्रसंगमें लिखा है कि ब्रह्माण्डमें जितने देवता हैं उनका स्वामी शिव हैं अतः उनके विवाहमें सब देवता वारात करनेको आये ॥६७॥ उशनस उपपुराणमें लक्ष्मीका वचन है कि हरि ब्रह्मा हजारों वर्ष तक लिंगका अन्त ले आनेको गये अन्त न पाये अतः हे शिव ! आप अनन्त हैं ॥६८॥ स्कन्दपुराण ब्रह्मखण्डके अन्तर्गत सेतु माहात्म्य अध्याय चौदहमें

ध्याये ॥ यस्मात्सत्यमवोचस्त्वं कमलायाः पतेहरेः ॥ तस्माच्ते मत्समापूजा भविष्यति न संशयः ॥६९॥ उत्पत्तितन्त्रे चतुःषष्ठि पटले ॥ शैवोवा वैष्णवोवापि सौरोवा गणपोऽथवा ॥ शिवार्चनविहीनस्य कुतःसिद्धि-र्भवेत्प्रिये ॥७०॥ पर्वताग्र समंदेवि मिष्टान्नादि क्रमेण हि ॥ फलानि बहुधान्येव पुष्पाण्येव यथाविधि ॥७१॥ सुमेरु सदृशं नाना विधमन्नं महेश्वरी ॥ यदत्तं पुष्प-नैवेद्यं सर्वं विष्ठामयम्भवेत् ॥ ७२ ॥ लिङ्गपूजां विना देवि अन्य पूजां करोति यः ॥ विफला तस्य पूजास्या

लिखा है कि ब्रह्मा विष्णु दोनों लिंगका अन्त न पाकर लौट आये परन्तु ब्रह्माने झूठ कहा कि मैं अन्त पाया विष्णुने सच कह दिया कि मैं अन्त नहीं पाया सत्य बोलनेसे विष्णुको शिवने वर दिया कि तुम्हारी पूजा लोकमें हमारे सदृश होगी ॥६९॥ उत्पत्ति तन्त्रके चौसठवें पटलमें पार्वतीके प्रति शिवका वचन है कि रुद्रभक्त, विष्णु भक्त, गणेश भक्त, सूर्य भक्त, आदि भक्तोंको शिव पूजनसे विमुख होनेसे सिद्धि नहीं होती है ॥७०॥ पर्वतके सदृश मिष्टान्नादि बहुत प्रकारके फल पुष्प आदि और सुमेरुके सदृश अनेक प्रकारके अन्न नैवेद्य जो अर्पण किया जाय सो सब मलके सदृश हो जाते हैं ॥७१॥ ॥७२॥ लिंग पूजा छोड़कर जो अन्य देवका पूजन करते हैं उनका

दन्ते नरक माप्नुयात् ॥ ७३ ॥ यद्राज्यं लिंग पूजाया रहितं सततं प्रिये ॥ तद्राज्यं पतितं मन्ये विष्ठाभूमि समंस्मृतम् ॥७४॥ ब्रह्म विट् क्षत्रियो देवि यदिलिंगं न पूजयेत् ॥ तत्क्षणात्परमेशानि त्रय श्चाण्डता मीयुः ॥ ७५ ॥ उक्तमन्यत्रापि ॥ यावन्नयाति मरणं यावन्नाक्रमते जरा ॥ यावन्नेन्द्रियवैकल्यं तावत्पूजय शंकरम् ॥ ७६ ॥ वीरमित्रोधृत स्कान्दे ॥ शिवलिंगं समुल्लंघ्य योर्चये दन्यदेवताम् ॥ सनृप स्सहदेशेन रौरवं नरकं व्रजेत् ॥ ७७ ॥ शिवधर्म्मोपपुराणे ॥

पूजा व्यर्थ हो जाता है और अन्तमें नरक प्राप्त होता है ॥७३॥ जिस राज्यमें लिंग पूजा नहीं होती हो वह राज्य विष्ठा भूमि (पैखाना) के सदृश हैं ॥७४॥ ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, यह तीनों शिव पूजन नहीं करें तो चाण्डाल हो जाते हैं ॥७५॥ और किसी भक्तका वचन है कि जब तक मृत्यु मारता नहीं जब तक वृद्धता सताती नहीं और जब तक ईन्द्रि सब निर्बल नहीं होते तब तक शिव पूजन करो फिर पीछे क्या करोगे ? ॥७६॥ स्कन्द पुराणके वीरमित्रोदयमें लिखा है कि शिवलिंगको छोड़कर जो राजा अन्य देवका पूजन करता है वह राजा उस देशके साथ रौरव नरकको जाता है ॥७७॥ शिव धर्म उपपुराणमें लिखा है कि जीवोंको मारे

छित्वाभित्वाच भूतानि हत्वा सर्व्वमिदं जगत् ॥ यजेदेकं विरूपाक्षं नसपापै र्विलिप्यते ॥ ७८ ॥ विष्णुना रावणं हत्वा ससैन्यं ब्रह्मणः सुतम् ॥ स्थापितं विधिवद्भक्त्या लिङ्गं तीरे नदीपतेः ॥ ७९ ॥ कृत्वा पाप सहस्राणि हत्वा विप्रशतन्तथा ॥ ५ापात् समाश्रिते लिंमे मुच्यते नात्र संशयः ॥८०॥ विश्वेदेवाः समरुतः पशवः पक्षिणो मृगाः ॥ ब्रह्मादिस्थावरान्तं च सर्व्वं लिंगे प्रतिष्ठितम् ॥ ८१ ॥ तोड़ल तन्त्रे ॥ शैव वैष्ण वदौर्गार्क गाणपत्येन्द्र सम्भवाः ॥ आदौ शिवम्पूजयित्वा अन्यदेवं प्रपूजयेत् ॥८२॥ अन्यदेवम्पूजयित्वा

अथवा सब जगतको मार डाले परन्तु शिवका यजन (पूजन) करनेसे सब पाप छूट जाते हैं ॥७८॥ रामचन्द्रने ब्रह्माके सन्तान रावणको सैन्यके साथ मारा और ब्रह्म हत्या छूटनेके निमित्त समुद्रके तीरमें लिंग स्थापन की है ॥७९॥ जहारों पाप शैकड़ों ब्रह्महत्या छूट जाते हैं शिवलिंगके शरणागत होनेसे ॥८०॥ विश्वदेव वायु पशु पक्षी मृग आदि सब चराचर लिंगहीमें प्रतिष्ठित हैं ॥८१॥ तोड़ल तन्त्रमें लिखा है कि रुद्र भक्त, विष्णु भक्त, शक्ति भक्त, सूर्य भक्त, गणेश भक्त, इन्द्र भक्त, आदि सब देव भक्त प्रथम शिव पूजा करके बाद अपने इष्टदेवका पूजन करें ॥८२॥ अन्य देवोंका

शिवं पश्चाद्यजेद्यदि ॥ तस्य पूजाफलं व्यर्थं भुज्यते राक्षसैरिति ॥८३॥ स्कान्दे विष्णु वाक्यम् ॥ योम-हादेव मन्येन हीनदेवेन दुर्मतिः ॥ सकृत्साधारणं ब्रूते सोऽन्त्यजानां त्यजोऽन्त्यजः ॥ ८४ ॥ कर्ताऽहं सर्वलो-कानां ममकर्ता महेश्वरः ॥ तस्य देवाधिदेवस्य कर्ता कोपि न विद्यते ॥ ८५ ॥ सौर संहितायाम् ॥ सर्वान् देवान्परित्यज्य यजेत्पञ्चास्य मीश्वरम् ॥ सर्वान्मन्त्रा-न्परित्यज्य जपेत्पञ्चाक्षरीम्पराम् ॥ ८६ ॥ शिवमेकं परित्यज्य योऽन्यदेव मुपासते ॥ तृषितो जाह्नवीतीरे

पूजा करके जो पीछे शिवका पूजन करते हैं उनका पूजाका फल राक्षस सब खा जाते हैं ।।८३।। स्कन्द पुराणमें विष्णु भगवानका वचन है कि जो दुष्टबुद्धि पुरुष महादेवको हीन देवोंके बराबर एक बार भी कहते हैं वे चाण्डालोंके चाण्डाल हैं ।।८४।। सब जगतका कर्ता मैं हूँ और मेरा कर्ता महादेव हैं और उस देवाधिदेवका कर्ता कोई नहीं है ।।८५।। सौरसंहितामें लिखा है कि सब देवोंको छोड़कर पंचवक्त्र ईश्वरका पूजन करना और सब मन्त्रोंको छोड़कर मन्त्रा-धिराज राज पंचाक्षर (नमः शिवाय) का जप करना चाहिये ।८६। शिवको छोड़कर जो अन्य देवोंका उपासना करते हैं सो पीयासे

कूपं खनति दुर्मतिः ॥ ८७ ॥ तोड़ल तन्त्रे ॥ आदौ शिवम्पूजयित्वा शक्तिपूजा ततः परम् ॥ अन्यथा मूत्रवत्सर्वं गंगातोयम्भवेद्यदि ॥ ८८ ॥ कामदेवेन सर्वदेवसमं शिवं मत्वा भस्मसादभूव तदुक्तं शिवरहस्ये सप्तमांशे ॥ भालाक्षभालसम्भूतश्चित्रभानु र्भयङ्करः ॥ स पावकः समागत्य जज्वाल कुसुमायुधम् ॥८९॥ भस्मावशेषं कृत्वैव प्रशान्त स्तदनन्तरम् ॥ समन्मथ स्ततोनीत स्तदैव यमकिंकरैः ॥९०॥ पातितश्चाति घोरेषु नरकेषु प्रयत्नतः ॥ अतो नान्यसमं शम्भुं अन्यतुल्यतया भ्रमात् ॥ येऽभिजानन्ति दुर्वृत्ता स्तेषामेतादृशी

हुए गंगाके तीरमें कूँआँ खोदते हैं ॥८७॥ तोड़ल तन्त्रमें लिखा है कि पहले शिवका पूजन करके शक्तिकी पूजा करनी चाहिए अन्यथा गंगाजल भी मूत्रवत हो जाता है ॥८८॥ कामदेवने सब देवोंके सदृश शिवको समझा कि सबको अपने वसमें कर दिया तो शिवको भी कर दूँगा ऐसा समझकर शिवके समीप आया और उनको भी बस करना चाहा परन्तु शिवके तृतीय नेत्रके ज्वालासे भस्म हो गया सो लिखा है शिवरहस्य अंश सातमें लिखा है कि भालाक्ष (महादेव) के ललाटसे भयंकर अग्नि निकलकर कामदेवको बिल्कुल

गतिः ॥ ९१ ॥ महादेवोऽखिलाराध्यः सर्वदेव शिखा मणिः ॥ नततोस्त्यधिको विप्र नततुल्योऽथवा ध्रुवम् ॥ ॥९२॥ महादेवोत्तमं देवं अन्यान्येवै वदन्ति ते ॥ भूयो-भूयो मविष्यन्ति चाराडालाएव सर्वथा ॥९३॥ कः कृतान्त कृतान्तान्तं न चिन्तयति सन्ततम् ॥ पूतः स्वान्ते सम्वसन्तं नितान्तं श्रुति सम्वतम् ॥९४॥ अतः सन्तः सावधानाः सततं शान्तचेतना ॥ उमा-कान्तं प्रयत्नेन भजन्ति भवभीरवः ॥९५॥ शिवधर्मोप-

भस्म कर शान्त हुई और कामदेवको यमदूतोंने पकड़कर अति घोर नरकमें ले गये अतः शिवको जो भ्रममें पड़कर अन्य देवोंके सदृश जानते हैं उनकी ऐसा ही गति होती है ॥८९॥९०॥९१॥ सब देवोंका शिखामणि महादेव सर्वपूज्य हैं उनसे अधिक वा उनके बराबर दुसरा कोई देवता जगतमें नहीं है ॥९२॥ महादेवसे उत्तम जो अन्य देवोंको कहते हैं वे बार-बार चाराडाल योनिमें जन्म लेते हैं ॥९३॥ महादेव पवित्र हृदय पुरुषोंके अन्तःकरणमें रहते हैं ऐसा श्रुति कहती है और यमराजका भी नाश करनेवाले शिवका कौन अधम नहीं चिन्तन करेगा ? ॥९४॥ अतः संसारके बन्धन भयसे डरकर सन्तोने सावधान चित्तसे उमाकान्त शिवका भजन करते हैं ॥९५॥ शिवधर्म उपपुराणमें लिखा है कि महेश्वरका बनाया

पुराणे ॥ महेश्वर कृतं सर्वं त्रैलोक्यं सचराचरम् ॥ ते कृतघ्ना भविष्यन्ति येन भक्ता महेश्वरे ॥ ९६ ॥ सिद्धशंकर तन्त्रे प्रथम पटले ॥ वैद्यम्विना निरानन्दाः क्लिश्यन्ति रोगिणो यथा ॥ शिवम्विना निरानन्दं क्लिश्यन्तेहि जगत्तथा ॥९७॥ मातृकाभेदतन्त्रे प्रथम पटले ॥ त्रिपुरा परमाविद्या महाविद्या पतिव्रता ॥ पतिपूजां विनापूजा न गृह्णाति कदाचन ॥ ९८ ॥ शिवरहस्ये ॥ आदौलिंगं प्रपूज्येत विल्वपत्रैश्च नारद ॥ अन्यथा मूत्रवत्सर्वं शिवपूजां विना कृतम् ॥९९॥ व्यतिक्रमन्तु योमोहा दर्पाद्वापि समाचरेत् ॥ सोऽधः

चराचर सब जगत है वे कृतघ्न हैं जो शिवका भजन नहीं करते ।९६। सिद्धशंकर तन्त्रमें लिखा है कि वैद्यके विना जैसे निरानन्द हो रोगी क्लेशमें पड़े रहते हैं वैसे ही शिवके जानने विना यह जगत क्लेशमें पड़ा है ॥९७॥ मातृकाभेद तन्त्रके प्रथम पटलमें लिखा है कि त्रिपुरा (काली) महाविद्या पतिव्रता हैं पतिपूजाके विना पूजा नहीं ग्रहण करती हैं ॥९८॥ शिवरहस्यमें लिखा है कि पहले विल्वपत्रसे शिवलिंगका पूजन करके बाद और देवताओंका पूजन करना अन्यथा शिवपूजाके विना सब मूत्रवत् हो जाता है ॥९९॥ भूलसे अथवा अभिमानसे पहले जो दूसरे देवका पूजन करते हैं वे पापी नीचेको

पतति पापात्मा तस्यार्चा निष्फलाभवेत् ॥१००॥ तारानिगमे महाकालेकेश्वर तन्त्रेच॥ पार्थिवं नार्चयित्वा तु कालिं तारां च सुन्दरीम् ॥ अर्चयेद्यस्त्रिलोकस्थः स याति यमयातनाम् ॥१॥ त्रिपुरा कल्पेऽपि ॥ यावन्न पूजयेत् लिंगं पार्थिवं कामसाधकः ॥ तावत् पूजां नगृह्णाति सुन्दरी तारकासिता ॥२॥ सनत्कुमार संहितायाम्॥ अनभ्यर्च्य महादेवं योश्नाति फलमम्बु वा सप्राप्नोति मुहुर्जन्म क्षुद्र चाण्डाल योनिषु ॥३॥ पाद्मे ॥ यो न पूजयते लिंग ब्रह्मादीनां प्रकाशकम् ॥

जाते हैं और उनका पूजन निष्फल हो जाता है ॥१००॥ तारानिगममें और महालिंगेश्वर तन्त्रमें लिखा है कि पार्थिव लिंगको बिना पूजा किये जो काली, तारा, सुन्दरी, आदि देवियोंका पूजन करते हैं सो यमलोकको जाते ॥१॥ त्रिपुरा कल्पमें भी लिखा है कि पार्थीव लिंगका विना पूजाके सुन्दरी तारा काली आदि देवी पूजा नहीं ग्रहण करती हैं ॥२॥ सनत्कुमार संहितामें लिखा है कि विना शिवपूजा किये जो फल जल आदि खाते पीते हैं सो वार-वार चाण्डाल योनिमें जन्म लेते हैं ॥३॥ पद्मपुराणमें लिखा है ब्रह्मा आदि देवोंका प्रकाश करनेवाला शिवलिंग है उसका जो पूजन नहीं करते वे छः शास्त्र चारों वेदोंको जाननेवाले भी हो तो पशुके सदश

शास्त्रवि त्सर्ववेत्तापि चतुर्वेदी पशुस्तुसः ॥४॥ शिव-पूजार्थ मालस्यं यः करिष्यति मूढधीः ॥ सोष्णत्क्षीर स्विहायैव मूत्रं पिवति सर्वदा ॥५॥ ईशान संहिता-याम् ॥ यस्यनास्ति गृहे नित्यं शिवलिङ्गार्चनं शिवे ॥ तद्गृहं चराड चाण्डाल गृहमेव नसंशयः ॥६॥ शिवलिङ्गार्चनं यस्तु नकरिष्यति दुर्मतिः ॥ तत्स्पर्शे भानुमालोक्य सचैलं जल माविशेत् ॥७॥ शिवलिङ्गा-र्चने यस्य नास्ति साधारणा मतिः ॥ सचाण्डाल इतिज्ञेयः सर्वधर्म वहिष्कृतः ॥८॥ अत्यन्त दुलभं जन्म कलौ प्राप्यापि मानुषम् ॥ यदि नाराधये

हैं ॥४॥ जो मूढ़ शिव पूजामें आलश्य करता है सो गरम दूधको छोड़कर मूत्रको पीता है ॥५॥ ईसान संहितामें लिखा है कि जिसके गृहमें शिवपूजा न होती हो उसका गृह महा चाण्डालके गृहके सदृश है ॥६॥ जो दुष्टबुद्धि शिवलिंगका पूजन नहीं करते हैं उनसे छू जानेपर सचैल स्नानकर सूर्यका दर्शन करना चाहिये ॥७॥ शिव-लिंगके पूजनमें जिसकी सदा प्रीति न रहती हो सो चाण्डाल हैं और सब धर्म कर्मोंसे बाहर करने योग्य हैं ॥८॥ इस कलियुगमें अत्यन्त दुर्लभ मनुष्य जन्म पाकर यदि शिवका आराधन नहीं किया

च्छम्भु स्तस्य जन्म निरर्थकम् ॥९॥ लिंगपूजां विहा-
यैव भोक्तुमिच्छति योनरः ॥ तमानीयायसैर्दण्डै सन्ता-
पयति भास्करिः ॥१०॥ लैङ्गेऽपि ॥ लिङ्गपूजा म्वि-
हायैव यदिभुङ्क्ते भ्रमाद्द्विजः ॥ तदातदन्नं निष्कास्य
चरेच्चान्द्रायणाष्टकम् ॥११॥ लिंगार्चनं विहायैव
भुक्तमेतैर्दुरात्मभिः ॥ पश्यैता न्कृमिकुण्डस्थान् किमि-
भक्षण तत्परान् ॥१२॥ ब्रह्मोत्तरखण्डे ॥ वरम्प्राण
परित्यागः छेदनं शिरसोऽपिवा ॥ नत्वनभ्यर्च्य भुञ्जीया
द्भगवंतं सदाशिवम् ॥१३॥ वायुसंहितायाम् ॥

तो उसका जन्म व्यर्थ ही बीत गया ॥९॥ लिंगपूजा छोड़कर जो
भोजन करते हैं उनको यमराज तप्त लौह दण्डसे खातिरदारी करते
हैं ॥११०॥ लिंग पुराणमें लिखा है कि शिवलिंग पूजा भ्रमसे भी
यदि एक दिन छूट जाय और भोजन करले तो उस अन्नको वमनकर
आठ चान्द्रायण व्रत करनेसे शुद्ध होता है ॥११॥ लिंगपूजा छोड़कर
भोजन करनेवाले दुरात्मा पुरुष क्रिमिकुण्डमें क्रिमी भक्षण करते हैं
॥१२॥ ब्रह्मोत्तरखण्डमें लिखा है कि प्राण त्याग कर देना श्रेष्ठ है
शिर काट देना उत्तम है परन्तु विना शिवपूजा किये भोजन करना
अच्छा नहीं है ॥१३॥ वायुसंहितामें लिखा है कि जब तक शरीरमें

असम्पूज्य नभुञ्जीत शिवमाप्राण सञ्चरात् ॥ यदि पापेन भुञ्जीत्त स्वैरं तस्य ननिष्कृतिः ॥१४॥ प्रमादेन-तु भुञ्जीत तुदुग्दीर्य्यं प्रयत्नतः ॥ स्नात्वा द्विगुणमभ्य-र्च्यं देवं देवी मुपोष्यच ॥१५॥ मातुर्विक्रयणं शस्तं शिरसोवाऽपि कर्तनम् ॥ नचैवापूज्य भुञ्जीत शिवलिंगे महेश्वरम् ॥१६॥ स्कान्दे प्रभासखण्डे दशमाध्याये ॥ सशिवः परमं शैव्यो अनादिनिधनो विभुः ॥ तस्मा-त्परतरं नास्ति सर्वशास्त्रा गमेषुच ॥ सिद्धान्तागम वेदान्त दर्शनेषु विशेषतः ॥१७॥ कौर्म्मेऽपि ॥ नार्च-

प्राण चलता रहे तब तक विना शिवपूजन किये भोजन नहीं करना यदि पापबुद्धि होकर भोजन कर ले तो उसका उद्धार नहीं होता ॥१४॥ भूलसे यदि भोजन कर ले तो उस अन्नको वमनकर स्नानकर शिव भगवतीका द्विगुण पूजन कर उस दिन उपवास करनेसे शुद्ध होता है ॥१५॥ माताको विक्रय करना शिर काटना श्रेष्ठ है परन्तु विना पूजन किये भोजन करना ठीक नहीं है ॥१६॥ स्कन्दपुराण प्रभास-खण्डके अध्याय दशमें लिखा है कि वही परम शिव अनादि नाश-रहित सदाशैव्य हैं उनसे परें सब शास्त्र आगम (तन्त्र) वेदवेदान्त आदि दर्शनोंमें कोई दूसरा नहीं है ॥१७॥ कूर्मपुराणमें भी लिखा है कि देवताओंसे वन्दित शिवका जो पूजन नहीं करते उनका ज्ञान

यन्तिच येरुद्रं शिवं त्रिदश वन्दितम् ॥ तेषां ज्ञानं तपो मोक्षो वृथा जीवित मेवच ॥१८॥ योमोहा दथवालोभाद् कृत्वा शिवपूजनम् ॥ भुंक्ते सयाति नरकं चान्तेशूकरताम्व्रजेत् ॥१६॥ शिवरहस्ये सप्तमांशे ॥ व्यापारान्सकलान्त्यक्त्वा पूजध्वं सदाशिवम् ॥ शिव धर्मपरोभूत्वा यावज्जीवं प्रतिज्ञया ॥२०॥ अर्चयेत्तं महादेव मापन्नोपि सदाबुधः ॥ पत्र पुष्पादिभि र्नित्यं चिरं वेदोक्त वर्त्मना ॥२१॥ शिवलिङ्ग मनभ्यर्च्य योभुक्ते मोहसंगतः ॥ सयाति नरकं घोरं यावदाचन्द्र तारकम् ॥२२॥ शिवलिङ्गार्चनं कार्य्यं

तप मोक्ष जीवन व्यर्थ है ॥१८॥ जो पुरुष भूलसे अथवा लोभसे शिवपूजा विना किये भोजन करते हैं वे नरकको जाते हैं अन्तमें शूकर योनिमें जन्म लेते हैं ॥१६॥ शिवरहस्यके अंश सातमें लिखा है कि सव कामोंको छोड़कर शिवभक्त होकर यावज्जीवन पर्यन्त शिव पूजन करो ॥१२०॥ मरणापन्न होनेपर भी वेदोक्त मार्गमें होकर पत्रपुष्पादि सामग्रियोंसे शिवपूजाको मत त्याग करो ॥२१॥ शिवलिंगका विना पूजन किये जो मोहवस भोजन करते हैं वे जब तक चन्द्र सूर्य आकाशमें रहते हैं तब तक घोर नरकमें रहते हैं ॥२२॥

त्यक्त्वा कार्य्यं मशेषतः॥ यदि त्यजति मोहेन प्रत्यवैति नसंशयः ॥२३॥ पुनस्तत्रैव विष्णुवाक्यम्॥ यः शंकरं विहायान्यं सुरेमर्चितु मिच्छति ॥ सपरित्यज्य विप्रत्वं चाण्डाल त्वञ्च गच्छति ॥२४॥ सर्वोत्तमं महादेवं विदित्वा योर्चयिष्यति ॥ नमस्तस्मै नमस्तस्मै नमस्तस्मै नमोनमः ॥२५॥ मुग्धेन्दु करुणा तरणिम्विहाय खद्योतव द्विधिहरीन्द्र मुखान्सुरांश्च ॥ सेवन्ति गाढतमसैक विनाश हेतून् मूढाहिते दृढतरा मृड़भक्ति हीनाः ॥२६॥ वृहज्जावालोपनिषदि ॥ तदनभ्यर्च्यना श्नीयात्फलम-

अतः सब कामोंको छोड़कर शिवका पूजन करना चाहिये मोहवश त्याग करनेसे पापी होता है ॥२३॥ पुनः वहाँ ही विष्णु भगवानका वचन है कि जो महादेवको छोड़कर अन्य देवोंका पूजनका इच्छा करते हैं सो ब्रह्मणत्वसे च्युत होकर चाण्डालत्वको प्राप्त होते हैं ॥२४॥ सर्वोत्तम महादेव हैं ऐसा समझकर जो शिवका पूजन करते हैं उनको बार-बार मैं नमस्कार करता हूँ ॥२५॥ चन्द्रशेखर करुणानिधिरूपी नौकाको छोड़कर घोर अन्धकार दूर करनेके लिये जो पुरुष खद्योतवत (भगजोगनीके सदृश) ब्रह्मा हरि इन्द्र आदि देवोंका उपासना करते हैं वे मूढ़ शिवभक्तिसे हीन हैं ॥२६॥ वृहज्जावाल उपनिषदमें लिखा है कि विना शिवका पूजन किये

न्नमन्य द्वा यदश्नीयात् तत्तुरेतो भद्मी भवेत् ॥ नापः पिवेत् यूयपो भवेत् प्रमादेनैकदा अनभ्यर्च्य भुक्त्वा भोजयित्वा वा केशान्वापयित्वा पञ्चगव्यान् संगृह्यो पोष्य जले रुद्रस्थाने वा जपेत् त्रिवारं शतरुद्रीयमादित्यं पश्य नभिध्यायन् स्वकृतं कर्म्मततो रौद्रैर्मन्त्रै र्मार्जिनं कुर्य्या त्ततो भोजयित्वा ब्राह्मणान् पूतो भवति ॥२७॥ भस्म जावालोपनिषदि ॥ अहरहरभ्यर्च्य विश्वेरलिङ्गं तत्र रुद्रसूक्तै रभिषिञ्च्य तदेवस्नपनं पयः स्त्रिः पीत्वा महापातकेभ्यो विमुच्येत ॥ २८ ॥ अथर्व वेदे का० ११ अनु० ४ सूक्त १० मं० ॥१७॥

भोजन वीर्यके सदृश जल पीवके समान है भूलसे एक दफे भी भोजन कर ले तो केशोंको मुड़ाकर पंचगव्य पीये और रूद्रस्थानमें अथवा जलमें खड़ा होकर उपवाशकर तीन बार शतरूद्री मन्त्रोंका जप कर सूर्यमुख होकर अपने निन्दित कर्मोंका ध्यान कर रूद्रमन्त्रोंसे मार्जन कर ब्रह्मणोंको भोजन करानेसे शुद्ध होता है ॥२७॥ भस्मजावाल उपनिषदमें लिखा है कि विश्वेश्वर लिंगको रूद्र सूक्तसे नित्यनित्य अभिषिंचनकर उस जलको तीन दफे पीनेसे महापातक छूट जाते हैं ॥२८॥ अथर्व वेद काएड एग्गारहमें लिखा है कि ईश

सर्वे देवा उपाशिक्षन् तदजानाद्वधूः सती ईशावशस्य जाया सास्मिन् वरणमाभरत् ॥ २६ ॥ यजुर्वेदे तृतीयाध्याये मन्त्र ॥६०॥ त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिम्पुष्टिवर्धनम् ॥ उर्वारुक मिवबन्धनान् मृत्योर्मुक्षीयमामृतात् ॥ ३०॥ कृष्ण यजुर्वेद अनुवादक ॥१६॥ मन्त्र

(शिव) में ये सब जगत है जो सबको पालन करते हैं और उनका सब देवतागण उपासना करते हैं ॥२६॥

अस्य मन्त्रस्य सायणकृत भाष्ये ॥ पार्वतीपते त्वां यजामहे पूजयामः इत्यादि ॥ महीधर भाष्ये ॥ त्र्यम्बकं त्रिनेत्रोपेतं रूद्रं यजामहे पूजयामः इत्यादि ॥ ऋग्वेद भाष्ये ॥ ब्रह्म विष्णु रूद्राणा मम्बकं पितरं सदाशिवं यजामहे पूजयामः इत्यादि ॥ तथा श्रीमद्योगिवर्य विप्र राजेन्द्रेणापि रौद्रकल्प भाष्ये ॥ तत्रतावत्प्रति वक्त्राणित्रीण्यम्बकानि नेत्राणि यस्य तं सदाशिवं यजामहे तथा कथम्भूतं शोभना गन्धा यशांसि यस्य तमित्यर्थः एवमिहामुत्रकैवल्यफलै र्जगतां पुष्टिवर्द्धन मित्यर्थः ॥ उवारुकमिति ॥ तत्रताव द्यथोर्वारुकं कर्कटीफलं परिपक्वो त्तरं स्वयमेव त्यजति तद्वद्धे शिव ममापीह सर्वाभीष्टं प्रदर्श्य मृत्यो र्जन्ममरणादिबन्धना न्मुक्षीय मानत्वमृतादित्यर्थः ॥१३०॥

भाषार्थः

तीन नेत्रवाले अथवा ब्रह्मा, विष्णु, रूद्र, तीनोंका अम्बक (पिता) उनका मैं पूजन करता हूँ जो हमको इस मृत्युरूपी संसारसे ककरीके फलके सदृश अनायास मुक्त कर दें ॥१३०॥

१६।। सुवर्णलिङ्गाय नमः जललिङ्गाय नमः शिव-लिंगाय नमः स्थापयति पाणिमन्तं पवित्रम् ।। ३१ ।। शुक्ल यजुर्वेदे षोड़शाध्याये मन्त्र ।। ४९ ।। यातेरुद्र शिवातनूः शिवाविश्वाहा भेषजी तया नो मृड़ जीवसे ।।३२।। तत्रैव मन्त्र २।। याते रुद्रशिवातनू रघोरा

सायणकृत भाष्यम्

कनकनिर्मित लिङ्गाकाराय सुवर्णादि लिङ्गाय भूलोके विद्यमान द्वादश ज्योतिर्लिङ्गाय पूज्यमान शिलामयादि लिंगाकाराय नमः शिव-लिंग पूजनस्य कल्याणकारित्वत् ।।३१।।

भाषार्थः

कृष्णायजुर्वेद अनुवाक १६ मन्त्र १६ में लिखा है कि सुवर्ण आदि धातुओंका लिंग जल आदि पंचतत्वोंका लिंग जो पृथ्वीपर द्वादश ज्योतिर्लिंगरूपसे वर्तमान हैं उनको नमस्कार करता हूँ क्योंकि उसके पूजनसे कल्याण होता है ।।३१।।

भाष्यम्

हे रूद्र ! यातेतव ईदृशी तनूः शरीरं तया तन्वानोऽस्मान् जीवसे जीवितुं मृड़य सुखय कीदृशी शिवा शान्ता अघोरा विश्वानिच तान्यहानिच विश्वाहा कालाध्वनोरत्यन्तसंयोगेति, सूत्रेण द्वितीया तस्या आकारः सर्वेष्वहस्सु सर्वदा शिवा कल्याणकारिणी भेषजी औषधरूपा संसारव्याधि निवृत्तिका रूतस्य शरीरव्याधेः शिवा समी-चीना भेषजी निवर्तिकौषधि ।।३२।।

पापकाशिनी ॥ तयानस्तन्वा शन्तमया गिरीशन्ता भिचाकशीहि ॥ ३२ ॥ अथर्व वेदे दशमखराडे आवाहन मन्त्रः ॥ एह्यस्मान मातिष्ठ अस्मा भवतु ते तनू,

भाषार्थः

शुक्ल यजुर्वेदके अध्याय सोलहमें लिखा है कि हे रूद्र ? जो आपका कल्याणरूप शरीर उससे हम सबोंको सुख दीजिए वह आपका शरीर संसाररूप रोगका परम औषध है ॥३२॥

भाष्यम्

हे रुद्र ? यातेतव इदृशी तनूः शरीरं हे गिरिशन्त ? तया तन्वा नोऽस्मान् अभिचाकशीहि अभिपश्य 'चाकशीति पश्यतिकर्मा, निघण्टुः ३-११-८॥ कीदृशी तव कः शिवा शान्ता मंगलरूपा यतो अघोरा अविषमा सौम्या अतएव आपापकाशिनी अपापं सुखं काशयति प्रकाशयति अपापकाशिनी नपाप काशिनी पुण्यफलमेव ददाति न पापफलमित्यर्थः गिरौ कैलाशेस्थितः सं सुखं प्राणिनां तनोतिविस्तारयति गिरिशन्त इत्यादि ॥३३॥

भाषार्थः

यजुर्वेद अध्याय दूसरेमें लिखा है कि हे रुद्र ? कल्याणरूप जो आपका शरीर पुनः शान्तरूप जो आप हैं हे कैलाशवासी ? उस देहसे हम सबोंको देखिये जिससे हम लोगोंका कल्याण हो ॥३३॥ अथर्व वेद खगड १० मन्त्र १० में लिखा है कि हे परमेश्वर ? आप यहाँ आइये इस पत्थरके मूर्तिमें बैठिये यह पत्थरकी मूर्ति

॥ ३४ ॥ तत्रैव खं १३-मं० ४ ॥ मुखायते पशुपते यानि चक्षुंषिते त्वचेरूपाय संदृशे प्रतीचीनायते नमः ॥ अङ्गेभ्यस्ते उदराय जिह्वायास्यायते यद्भ्यो गन्धायते नमः ॥३५॥ यजुर्वेदे षष्ठाध्याये ॥ अर्चन्त अर्चन्त प्रियमेधसो अर्चन्त अर्चन्तु पुत्रका उत्पुरं न धृष्णं वर्चत ॥ ३६ ॥ तत्रैव ॥ १३-४ ॥ हिरण्यगर्भंछं समवर्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेष आसीत् सदाधारं पृथिविं द्यावा मुते मांकस्मै देवाय हविषा विधेम ॥३७॥

आपका शरीर हो जाय ॥३४॥ पुनः वहाँ हीं खण्ड १३ मन्त्र ४ में लिखा है कि पशुपति ? रुद्र देव तेरे मुखको नमस्कार है हे भव ? महादेवजी तेरे तीनों नेत्रोंको नमस्कार है और आपकी त्वचाको नमस्कार है प्रातीचीन जो आप हैं सो आपके उदर जिह्वा नासिका-को नमस्कार है ॥३५॥ यजुर्वेदके अध्याय छः में लिखा है कि हे अध्वर्जु आदि जनों ? तुम उस परमात्मा इन्द्रका पूजन करो हे प्रियमेधस ? तुम पूजन करो हे पुत्रों ? तुम पूजन करो जैसे घर्षण पुरुषको पूजते हो ॥३६॥ पुनः वहाँ हीं खण्ड १३ मन्त्र चारमें लिखा है कि जो हिरण्य गर्भ नामक ईश्वर (शिव) सबसे प्रथम शरीरधारी होकर भूत (जीव) मात्रका स्वामी हुआ और जो द्यौसे दिवलोक तथा इस पृथ्वीको सदा धारण करता है उस प्रजापतिको

नमः सायं नमः प्रातर्नमोरात्र्यां नमो दिवा भवाय च सर्वाय चोभाभ्या मकरन्नमः ॥ ३८ ॥ मनुस्मृतौ पञ्चमाध्याये ॥ नित्यंस्नात्वा शुचिः कुर्य्या द्देवर्षि पितृतर्पणम् ॥ देवता भ्यर्चन ञ्चैव समिदाधानमेव च ॥ ३९ ॥ महाभारते जैमिनियांश्वमेध पर्वणि भीम-

हवि देते हैं ॥३७॥ पुनः वहाँ हीं लिखा है कि हे रुद्र ! आपको सायंप्रातः और रात्रिमें दिनमें मैं भवदेव तथा रुद्रदेव दोनोंको नमस्कार करता हूँ ॥३८॥

अस्यार्थस्तु गोविन्दराजेनोक्तम् ॥ देवानां हरिहरादीनां पुष्पादिभि रर्चन मिति ॥ प्रतिमाना मेतत्पूजन मिति मेधातिथिः ॥ (देवशब्दः पिनाकीति निघण्टुः) देवार्चनं पुष्पाद्यैरिति सर्वज्ञनारायणः ॥ प्रतिमादिषु हरिहरादिदेवपूजन मितिकुल्लूभटः ॥

भाषार्थः

मनुस्मृतिके अध्याय पाँचमें लिखा है कि नित्यस्नानकर पवित्र होकर देव, ऋषि, पितृ, तर्पण करना और देवपूजन अग्निहोत्र करना इसका अर्थ गोविन्दराजने किया है कि फुलमालाओंसे शिव विष्णु आदि देवोंका पूजन करना ॥ मेधातिथिने लिखा है कि देवताकी प्रतिमा पूजन करना ॥ सर्वज्ञनारायणने लिखा है कि देवशब्द पिनाकी (शिव) को कहता है ऐसा निघंटुका वचन है अतः शिवपूजन करना ॥ कुल्लू भट्टने लिखा है कि मूर्तिमें शिव विष्णु आदि देवोंका पूजन करना ॥३९॥ महाभारत आश्वमेधीय पर्वके अध्याय दोमें

प्रतिज्ञा वाक्यम् ॥ एककूपोदकग्रामे ये वसन्ति द्विजा-
तयः ॥ नवेदाध्ययन यत्र न तथा शिवपूजनम्
॥१४०॥ क्षणमात्रन्तु तद्ग्रामे वसतां यागतिर्भवेत् ॥
सा गतिः प्राप्नुयान्मह्यं यदि चाश्वं नचानये ॥४१॥
ब्रह्मवैवर्ते केदारखण्डे ॥ द्विजो वा द्विजनारीवा त्यक्त्वा
शंकर पूजनम् ॥ यदि भुंक्ते तदायोनिं चाण्डालिं
प्राप्यते ध्रुवम् ॥४२॥ पुनस्तत्रैव ॥ शिव वाक्यम् ॥
मन्माया मोहिताः सर्वे ममभाया दुरत्यया ब्रह्म विष्णु
मुखा देवा मामाराध्य पदेस्थिता ॥४३॥ मां न जानाति

भीमका प्रतिज्ञा वचन है कि एक कूपवाले ग्राममें जो द्विजाति रहते
हों और शिवपूजा वेदाध्ययन न होता हो उस ग्राममें क्षणमात्र रहनेसे
जो पाप हो वह पाप हमको लगे यदि अश्व न ले आउँ तो ॥१४०-
४१॥ ब्रह्मवैवर्तके केदारखण्डमें लिखा है कि द्विज अथवा द्विजकी
स्त्री दोनों विना पूजन किये भोजन करते हैं तो चाण्डाल योनिमें
जाते हैं ॥४२॥ पुनः वहाँ ही शिवका वचन है कि ब्रह्मा विष्णु
आदि देवता हमारा पूजन करते हैं परन्तु हमारे मायासे मोहित होकर
हमको ब्रह्मरूप नहीं जानते हैं अतः ब्रह्म विष्णवादि पद भोगके
अन्तमें जन्मभागी होते हैं और जो ब्रह्मरूप जानते हैं सो हमारे ही

तत्वेन ज्ञाते मुक्ता भवन्ति ते ॥ न ज्ञाते मयिभो-
गान्ते जन्मभाजः पुनर्ध्रुवम् ॥४४॥ स्कान्दे शिवरहस्ये
ऽपि ॥ जनना सौचमध्येपि कर्तव्यं शिवपूजनम् ॥ शा-
वासौचेऽपि कर्तव्यं विना स्पर्शं प्रयत्नतः ॥४५॥ प्रशवो
जायते यस्या तयातु शिवपूजनम् ॥ कर्तव्यं मानसं
नित्यं दशाहान्तं यथाक्रमम् ॥ ४६ ॥ श्रौते कर्मणि
नाशौचं अश्रौते च क्वचिद्भवेत् ॥ श्रौतकर्म परित्या-
गः सूतकेऽपि न सर्वथा ॥४७॥ दर्शस्य पौर्णमासस्य
शिवलिंगार्चनस्य च ॥ प्रमादात्सूतकेत्यागान्नरकं प्रति

में लीन हो जाते हैं पुनः जन्म नहीं लेते हैं ॥४३॥४४॥ स्कन्द
पुराण तथा शिवरहस्यमें भी लिखा है कि जिसका नित्यनियम है कि
विना पूजन किये जल नहीं पीना उसको जननाशौच मरणाशौच
दोनोमें शिवपूजन करना परन्तु मरणाशौचमें बिना छूये उपर ही
उपर सब वस्तु चढ़ाना ॥४५॥ और जिस स्त्रीको लड़का हुआ हो
अथवा जो दाह कर्म किया हो उसको दश दिन तक मानस पूजा
करना चाहिये ॥४६॥ वेदविहित कर्ममें अशौच नहीं है अवैदिक
कर्ममें अशौच है अतः वैदिक कर्म अशौचमें भी नहीं त्याग करना
॥४७॥ दर्शयाग, पौर्णमासयाग, शिवलिंगार्चनको प्रमादवश जो

पद्यते ॥४८॥ यावज्जीवं श्रुतिस्तत्र प्रबलातन्न सूतकम् ॥ तिरस्कृतं भावनापि तन्न गृह्णाति सूतकम् ॥ ४९ ॥ मन्त्रमहोदधौ ॥ लक्षपार्थिवलिंगानां पूजना भुक्ति-मुक्तिभाक् ॥ लक्षन्तु गुड़लिंगानां पूजना त्पार्थिवो भवेत् ॥५०॥ नवनीतस्य लिंगानि सम्पूज्येष्ट मवा-प्नुयात् ॥ भस्मना गोमयेनापि वालुकाया स्तथा फलम् ॥५१॥ योलिंगं पूज्येन्नित्यं शिवभक्ति परा-यणः ॥ मेरुतुल्योपि तस्याशुः पापराशि र्लयंब्रजेत् ॥५२॥ दोग्ध्रीणान्तु गवांलक्षं योदद्या द्वेदपाठिने ॥

सूतकमें त्याग करते हैं वे नरकगामी होते हैं ॥४८॥ यावज्जीवन पर्यन्त शिवपूजन करना यह श्रुति कहती है तो इसके बीचमें सूतक आना असम्भव है ॥४९॥ मन्त्रमहोदधिमें लिखा है कि एक लक्ष पार्थिव लिंग पूजनसे भोग मोक्ष दोनों प्राप्त होता है और एक लक्ष गुड़का लिंग पूजनेसे राजा होता है ॥१५०॥ और मखन, भस्म, गोगर, बालुका, लिंग बनाकर पूजनेसे अभीष्ट सिद्धि होती है ॥५१॥ जो पुरुष नित्यनियमसे शिवपूजन करते हैं उनके सुमेरु सदृश पापोंकी राशि नष्ट हो जाती है ॥५२॥ वेदपाठी ब्राह्मणको एक लक्ष दुग्धवती गौ देनेवाला और पार्थिव लिंग पूजन करनेवाला दोनोंमें लिंगार्चन

पार्थीवं योर्चयेल्लिङ्गं तयोर्लिंगार्चको वरः ॥५३॥ पद्मपुराणे उत्तरखण्डे ॥ सकृल्लिङ्गं समभ्यर्च्य शालग्रामशिलाञ्चयः ॥ पीठे संस्थापयित्वातु श्राद्धं यः कुरुते नरः ॥ पितरस्तस्य तिष्ठन्ति कल्पकोटि शतं दिवि ॥५४॥ शंकर संहितायाम् ॥ यो हस्तपीठे निजमिष्ट लिंगं विन्यस्य तल्लीनमन प्रचारः ॥ वाह्यक्रिया संकुलनिस्पृहात्मा सम्पूजयत्यङ्ग स वीर शैवः ॥५५॥ तदेव हस्ताम्बुज पीठमध्ये निधाय लिंगं परमात्म चिह्नम् ॥ प्रपूजये दैक्य धियोपचारैः नरस्तु वाह्यान्तर भेदभिन्नैः ॥ ५६ ॥ निर्णयसिन्धौ भविष्य

करनेवाला पुरुष श्रेष्ठ है ॥५३॥ पद्मपुराणके उत्तरखण्डमें लिखा है कि एक बार भी शिवलिंग अथवा शालग्रामका पूजन करके और उनको सिंहासनमें रखकर पितृ श्राद्ध जो करते हैं उनके पितर कोटि कल्प तक तृप्त रहते हैं ॥५५॥ शंकर संहितामें लिखा है कि जो पुरुष अपने हाथपर शिवलिंगको रखकर बाह्यवृत्तिको छोड़कर उन्हींमें लीन हो पूजन करते हैं सो वीरशैव हैं ॥५५॥ कमलके सदृश हाथ पर परमात्मा (शिव) का चिह्न (लिंग) को रखकर अपनेसे शिवसे अभेद मानकर पूजन करना चाहिये ॥५६॥ निर्णयसिन्धु धर्मशास्त्रमें भविष्यपुराणका वचन लि० कि मृत्तिका, गोवर, भस्म, आटा, तामाँ,

वचनम् ॥ मृद्भस्म गोशकृत्पिष्ट ताम्र कांस्य मयं तथा ॥ कृत्वा लिंगं सकृत्पूज्य वसेत् कल्पायुतं दिवि ॥५७॥ आयुष्मान् वलवान् श्रीमान् पुत्रवान्धनवान्सुखी ॥ वरमिष्टं लभेल्लिङ्गं पार्थिवं यः समर्चयेत् ॥५८॥ गो भू हिरण्य वस्त्रादि वलि पुष्पं दिने दिने ॥ ज्ञेयो नमः शिवायेति मन्त्रः सर्वार्थ साधकः ॥ सर्वमन्त्राधिक श्चाय मोंकाराद्यः षडक्षरः ॥५९॥ तत्रैव शूलपाणि वचनम् ॥ सूतके मृत्तिके चापि नत्याज्यं शिवपूजनम् ॥ शिवपुराण वचनम् ॥ पूजयित्वा महादेवं पितृश्राद्धं प्रकल्पयेत् ॥१६०॥ तत्रैव माधवीय

काँस, आदि धातुओंका लिंग बनाकर जो पूजन करते हैं सो अयुत (दश हजार) वर्ष स्वर्गमें रहते हैं ॥५७॥ वहाँ ही नन्दीश्वरोप पुराणका वचन है कि जो पार्थिव लिंगका अर्चन करते हैं सो आयुष्मान् वलवान् लक्ष्मीवान् पुत्रवान् सुखी होते हैं ॥५८॥ गौ, भूमी, सुवर्ण, वस्त्र, वलि, पुष्प, आदि सब वस्तु ॐ नमः शिवाय, इस मन्त्रसे अर्पण करनेसे सब मनोरथ सिद्ध होते हैं ॐकारयुक्त पंचाक्षर षड्क्षर होता है यह षड्क्षर मन्त्र सब मन्त्रोंसे श्रेष्ठ है ॥५९ पुनः वहाँ ही शूलपाणिका वचन है कि सूतक (जन्माशौच) मृतक (मरणाशौच) दोनोंमें शिवपूजा नहीं त्याग करना और शिवका

वचनम् ॥ न पूजयति देवेशं रुद्रं त्रिभुवनेश्वरम् ॥ जन्तुर्जन्मसहस्रेषु भ्रमते नात्र संशयः ॥ ६१ ॥ वर्षे-वर्षे महादेवि नरो नारी पतिव्रता ॥ शिवरात्रौ महादेवं नित्यं भक्त्या प्रपूजयेत् ॥६२॥ माघमासस्य शेषेया प्रथमा फाल्गुनस्य च ॥ कृष्णा चतुर्दशी सातु शिवरात्रिः प्रकीर्तिता ॥६३॥ यानि कान्यत्र लिङ्गानि स्थावराणि चराणि च ॥ तेषु संक्रमतेदेवस्तस्यांरात्रौ यतो हरः ॥ शिवरात्रिस्तु साख्याता तेनसा हरवल्लभा ॥६४॥ स्कान्दे कालिका खण्डे व्यासम्प्रति श्रीशंकर वाक्यम् ॥ पश्यमल्लिङ्ग मुत्कृष्टं सर्वेषां पूज्यमेव हि ॥

पूजन करके पितृ श्राद्ध करना ॥१६०॥ पुनः वहाँ ही माधवीयका वचन है कि तीनों लोकका ईश्वर देव-देव शिवका जो पूजन नहीं करते हैं सो हजारों जन्म भ्रमते हैं ॥६१॥ वर्ष-वर्षमें नर नारी पतिव्रता भक्तिपूर्वक शिवरात्रिको पूजन करें ॥६२॥ माघका शुल्कपक्ष फाल्गुनका कृष्णपक्ष माघ है उसमें कृष्णपक्षकी चतुर्दशी शिवरात्रि है ॥६३॥ इस पृथ्वीपर जो चल अचल और संस्कार किया अथवा बिना संस्कार किया लिंग वर्तमान हैं उन सब लिंगोंमें महा शिवरात्रिके रात्रिमें शिव साक्षातरूपसे रहते हैं अतः शिवरात्रि उसका नाम है ॥६४॥ स्कन्दपुराणके कालिका खण्डमें व्यासके प्रति

विष्णु ब्रह्मादिकान्देवान्पश्यमल्लिङ्ग पूजकान् ॥६५॥ मानिन्दयस्व मद्भक्ता न्भस्मरुद्राक्ष एव च ॥ मदुत्कर्षोहि सर्वेषु पुराणेषु प्रदर्शय ॥६६॥ शिवरहस्ये आख्यायिका मप्याह ॥ आर्य्यावर्ते द्विजः कश्चिद्ब्राह्मणोवेद वित्तमः ॥ सर्वसौभाग्य सम्पन्नः सर्व-शास्त्र विशारदः ॥६७॥ कदाचित्क्षुधितः श्रान्तो-विस्मृत्य शिवपूजनम् ॥ चकार भोजनमतः प्रदोषे वालवद्वली ॥६८॥ ततः सदैवयोन पञ्चत्व मगमद्द्वि-जः ॥ ततो यमभटैर्नीतः शूलैः संताडितस्तदा ॥६९॥ यमदूता उचुः ॥ यमायं ब्राह्मणः पूर्वं विहाय शिव

शंकरजीका वचन है कि हमारे उत्तम लिंगको देखो जो सबसे पूज्य है और हमारे लिंगपूजक ब्रह्मा विष्णु आदि देवोंको देखो हमारे भक्तका भस्म रुद्राक्षका निन्दा मत करो हमारा श्रेष्ठता सब पुराणोमें कहो ॥६५॥ शिवरहस्यमें एक कथा लिखी है कि आर्यावर्त देशमें सब शास्त्रोंका पंडित सौभाग्ययुक्त एक ब्राह्मण रहा ॥६७॥ एक समय क्षुधासे पीड़ित हो प्रदोषकालमें बालकके सदृश बिना पूजन किये भोजन कर लिया ॥६८॥ वाद कुछ दिनके मरनेपर यमदूतोंने शूलसे ताड़ना करते हुए यमके पास ले जाकर बोले कि ॥६९॥ हे यम ! यह ब्राह्मण एक दिन बिना पूजन किये भोजन किया ॥७०॥

पूजनम् ॥ उवासैक दिनं मत्तः शंकरं स्मरणम्बिना ॥ ॥७०॥ अनेन भुक्तं मत्तेन श्रान्तेन क्षुधितेन च ॥ शिवाय नार्पितं दिव्यमन्नं स्वप्रिय मादरात् ॥ ७१ ॥ कियत्पर्यन्तमेतस्य नरके वसतिर्मता ॥ कीदृशे नरके यो ज्यो वद सर्वमशेषतः ॥ ७२ ॥ इति तेषां वचः श्रुत्वा विचार्य बहुधा यमः ॥ धर्मशास्त्रा विरोधेन वचः प्राह विचक्षणः ॥७३॥ पञ्चवत्सर पर्य्यन्तं तप्त-तैले निरन्तरम् ॥ तिष्ठत्वयं ततो भूमौ स्वयमेव पतित्यति ॥ ७४ ॥ शिवरहस्ये सप्तमांशे ऋषिन् प्रति व्यास वाक्यम् ॥ अर्चयध्वं महादेवं विष्णु ब्रह्मादि वन्दितम् ॥ त्रिकालमप्रमादेन विल्वपत्रादि साधनैः

इसने क्षुधासे पीड़ित होकर शिवको बिना अर्पण किये ही भोजन किया है ॥७१॥ किस नरकमें कितना दिन तक रहेगा सो कहिए ॥७२॥ ऐसा दूतोंका वचन सुन धर्मशास्त्रसे बहुत विचारकर यमराज बोले कि पाँच वर्ष तक तप्त तैलकुण्डमें रहकर पीछे स्वयं पृथ्वीपर जन्म लेगा ॥७३॥७४॥ शिवरहस्य अंश सातमें ऋषियोंके प्रति व्यासजीका वचन है कि ब्रह्मा, विष्णु आदि देवोंसे बन्दित शिवको त्रिकाल बिल्वपत्रसे पूजन करो ॥ और उनका भजन करो पञ्चाक्षर

॥ ७५ ॥ भजध्वमप्रसादेन शिवं ब्रह्मादि वन्दितम् ॥ जयध्व मनिशं यत्ना च्छिव पञ्चाक्षरं परम् ॥ ७६ ॥ उद्धूलनं त्रिपुंड्रंच तथा रुद्राक्ष धारणम् ॥ मात्यजध्वं मात्यजध्वं निद्राकालेऽपि सर्वथा ॥७७॥ स्कान्दे ऋषिन् प्रति व्यास वाक्यम् ॥ शिवएव स्वयं लिङ्गं लिङ्गं गमक एवहि ॥ शिवेन गम्यते सर्वं शिवो नान्येन गम्यते ॥ ७८ ॥ जडंहि गम्यतेऽन्येन नाजडं मुनि पुङ्गवाः ॥ शिवोनैव जडः साक्षात् स्वप्रकाशैक लक्षणः ॥ ७९ ॥ शिरोहि मन्दिरम्प्रोक्तं जिह्वोपरियतः शिवः ॥ रन्ध्राज्जलामृतैः सिंचन् जिह्वा घंटाध्वनि निर्य्यतः ॥ ८० ॥ स्कन्दौ पीठं भवेतत्राप्याधारं नाभि

मन्त्रका अहर्निश जप करो ॥७५॥७६॥ उद्धूलन त्रिपुंड्र रुद्राक्ष धारण शयन कालमें भी मत त्याग करो मत त्याग करो ॥७७॥ स्कन्दपुराण में ऋषियोंके प्रति व्यासजीका वाक्य है कि लिंगके द्वारा शिवको सब जानते हैं शिवको ब्रह्मरूपसे कोई नहीं जानते हैं ॥७८॥ जड़ वस्तुको सब जानता है जड़ किसीको नहीं जानता है अतः शिव जड़ नहीं हैं स्वप्रकाश रूप हैं ॥७९॥ शिर मन्दिर है जिह्वके ऊपर घाँटी शिव लिंग है ब्रह्मरन्ध्रसे जलधारा आ रहा है जिह्व घंटा है ॥८०॥ स्कन्द

मण्डलम् ॥ सोमसूत्रन्तु मूत्राद्यं प्रोक्तमेतच्छिवा-
लयम् ॥ ८१ ॥ शिवस्थाने शरीरेस्मिन संस्थितः
स्वात्ममायया ॥ दुःखादि सागरे घोरे मुह्यमानश्च
सोचति ॥८२॥ ।

॥ इति शिवम् ॥

इति श्री मद्योगिवर्यविप्रराजेन्द्र स्वाम्यात्मज पं० कालिकेश्वर दत्त
संग्रहीते सिद्धान्तरत्नाकरे चतुर्थ उपासनाखण्डे द्वितीयस्तरङ्गः

अर्घा है सबका आधार नाभी है पैखाना पेशाब सोमसूत्र (मोरी) है
यह शरीर शिवालय है ॥८१॥ शिवस्थान शरीरमें रहकर यह जीव
मायासे मोहित होकर दुःखमें पड़ा हुआ है ॥८२॥

इति श्री भाषाटीकायां चतुर्थ उपासनाखण्डे द्वितीयस्तरङ्गः ॥

तृतीयस्तरंगः

श्रीगणेशाय नमः ॥ अथ तृतीयस्तरङ्गः ॥ ध्यात्वा रघुपतिं क्रुद्धं कालानलसमप्रभम् ॥ चीर कृष्णा जिन धरं भस्मोद्धूलित विग्रहम् ॥ रणेरिपून् रावणादीन् स्तीक्ष्णमाकर्ण वृष्टिभिः ॥ संहरन्तं महावीर मुग्र मैन्द्रर-थस्थितम् ॥१॥ अथ विष्णुना लक्ष्म्यासह दशावतार रूपेणापि शिवाराधनं कृतः ॥ कूर्म्मपुराणस्योत्तरार्द्धे एकत्रिंशेऽध्याये विष्णु वाक्यम् ॥ पुरा चैकार्णवे घोरे नष्टे स्थावरजङ्गमे ॥ प्रबोधार्थं ब्रह्मणोमे प्रादुर्भूतो

दोहा—शम्भुरूप श्रीरामको हृदय कमलमें ध्याय ।
देव ऋषि पूजन कियो कहौं प्रमाण दिखाय ॥

श्रीगणेशाय नमः ॥ शिवभक्त शिरोमणि श्रीरामचन्द्रका मैं ध्यान करता हूँ सर्वांग भस्म धारण किये मृगछाला लिये इन्द्ररथपर बैठकर रावणादि राक्षसोंको पाशुपतास्त्रसे मारते हुए महावीर रामचन्द्र हमारा रक्षा करें ॥१॥ विष्णु भगवान दशो अवतार होकर और लक्ष्मीने भी शिव पूजन किया है सो प्रमाणके साथ आगे लिखते हैं ॥ कूर्म्मपुराण उत्तरार्द्धके एकतीसवें अध्यायमें विष्णु भगवानका वचन है कि पूर्वकालमें चराचर सब जगत नष्ट हो जानेपर एकार्णवमें हमको

महाशिवः ॥ १ ॥ तस्मात्काला त्समारभ्य ब्रह्माचाहं सदैव हि ॥ पूजयावो महादेवं लोकानां हितकाम्यया ॥२॥ पाराशरोपपुराणे एकादशाध्याये लक्ष्मीं प्रति विष्णु वाक्यम् ॥ शतवर्षं तपस्तप्तं तदाहं प्राणवल्लभे ॥ तत्प्रसादा दिदं ज्ञानं प्राप्तं वै परमं महत् ॥ ३ ॥ अहं शिवः शिवश्चायं त्वंचापि शिवएव च ॥ सर्वं शिवमयं भद्रे शिवाद्भिन्नं न किंचन ॥ ४ ॥ तथा पाद्मे गीतामाहात्म्ये विष्णुं प्रति लक्ष्मी वाक्यम् ॥ शया-लुरसि दुग्धाब्धौ भगवन् केनहेतुना ॥ उदासीन इवै

और ब्रह्माको प्रबोध देनेके हेतु महाशिव आविर्भाव हुए ॥१॥ उसी कालसे हम और ब्रह्मा दोनों लोकके हितार्थ शिवका पूजन करते हैं ॥२॥ पाराशर उपपुराणके अध्याय एग्गारहमें लक्ष्मीके प्रति विष्णु भगवानका वचन है कि हे प्राणवल्लभे ! सौ वर्ष तप करनेपर यह ज्ञान हमको मिला कि मैं शिव यह जगत शिव और तूँ भी शिव जो कुछ देखते हैं सो सब शिव शिवसे भिन्न कुछ नहीं है ॥३॥४॥ पद्मपुराणके गीता माहात्म्यमें विष्णुके प्रति लक्ष्मीका वचन है कि क्षीर समुद्रमें शयालु (सोते हुए) के सदृश और जगतके पालनमें उदासीन आप क्यों रहते हैं तब विष्णु भगवान बोले हे सुमुखी लक्ष्मी ! मैं नींदमें नहीं रहता हूँ माहेश्वर दृष्टिसे अन्तर निमग्न हो

श्वर्यें जगति स्थापयन्नपि ॥५॥ श्रीमहा विष्णु रुवाच नाहं सुमुखि निद्रालु र्निजमाहेश्वरं महः ॥ दृशात- त्वानुवर्तिन्या पश्याम्यन्तर्निमग्नया ॥ ६ ॥ तथा देवी भागवते षष्ठस्कन्दे षष्ठाध्याये प्युक्तम् ॥ श्री विष्णु रुवाच ॥ शृणुकान्ते प्रवक्ष्यामि यंध्यायामि सुरो- त्तमम् ॥ आसुतोषं महादेवं गिरिजा वल्लभं हृदि ॥७॥ तत्रैव चतुर्थस्कन्दे उनत्रिंशेध्याये ब्रह्माणम्प्रति विष्णु वाक्यम् ॥ वयं मायावृताः कामं नस्मरामो जगद्- गुरुम् ॥ परमं पुरुषं शान्तं सच्चिदानन्द मव्ययम् ॥८॥ लैङ्गे षट्चत्वारिंशति तमे ध्याये ॥ पूजनीयः शिवो-

शिवके ध्यानमें रहता हूँ ॥५॥६॥ देवीभागवत स्कन्द छठवाँ अध्याय छः में लक्ष्मीके प्रति विष्णु भगवानका वचन है कि हे कान्ते ! जिस देवका मैं ध्यान करता हूँ सो सुनो आशुतोष महादेव गिरिजावल्लभ शिवका मैं सदा हृदयसे ध्यान करता हूँ ॥७॥ पुनः वहाँ ही चौथे स्कन्दके उनतीसवें अध्यायमें लिखा है कि विष्णु भगवान ब्रह्माजीसे कहते हैं कि हम लोग उनके मायासे मोहित होकर परम पुरुष सच्चिदानन्द नाशरहित महादेवका स्मरण नहीं करते हैं ॥८॥ लिंगपुराणके छीआलिसवें अध्यायमें लिखा है कि श्रद्धा- पूर्वक सब देवोंमें पूजनीय शिव हैं क्योंकि सब जगत

नित्यं श्रद्धया देवपुङ्गवैः ॥ सर्व्वं लिंगमयो लोकः सर्व्वं लिंगे प्रतिष्ठितम् ॥ ९ ॥ इन्द्रनीलमयं लिङ्गं विष्णुना पूजितं सदा ॥ पद्मरागमयं शक्रोहैमं विश्रवसः सुतः ॥१०॥ तत्रैव एकोनत्रिंशेध्याये ॥ अविमुक्तेश्वरंप्राप्य वाराणस्यां जनार्दनः ॥ क्षीरेण चाभिषिच्येशं देवदेवं महेश्वरम् ॥ ११ ॥ काशीखण्डेऽपि ॥ आकारमविमुक्तस्य दृष्ट्वा ब्रह्माच्युतादयः ॥ लिंगं संस्थापयामासुर्वशिष्टाद्यामहर्षयः ॥ १२ ॥ तत्रैव विष्णु वाक्यम् ॥ मयि या परामाशक्तिः स्त्रिलोक्यारक्षणक्षमा ॥ तत्र हेतु र्महादेवः स सुदर्शन चक्रदः ॥ १३ ॥ पुरा जलन्धरो

लिंगमय है और लिंग ही में प्रतिष्ठित है ॥९॥ इन्द्र नीलमणिका लिंग विष्णुने पूजन किया पद्मरागमणिका इन्द्र सुवर्णका विश्वश्रवा पुत्रोंने पूजन किया है ॥१०॥ पुनः वहाँ ही अध्याय उनतीसवेंमें लिखा है कि काशीमें जाकर विष्णु भगवानने अविमुक्तेश्वर महादेव को दूधसे स्नान कराया है ॥११॥ काशीखण्डमें भी लिखा है कि सृष्टिके आदिमें ब्रह्मा विष्णु महर्षियोंने अविमुक्तेश्वर महादेवका आकार देखकर उन्हींके सदृश लिंग स्थापन किये हैं ॥१२॥ पुनः वहाँ ही विष्णु भगवानका वचन है कि तीनों लोककी रक्षा करनेकी शक्ति जो मुझमें हुई है उसका हेतु महादेव हैं और वही सुदर्शनचक्र

दैत्यः ममापि परिकम्पनः ॥ पदांगुष्ठाग्ररेखोत्थं चक्रं कृत्वा हरोहरत् ॥१४॥ तच्चक्रं च मयालब्धं नेत्र पद्मार्च्चना द्विभोः ॥ एतत्सुदर्शनाख्यम्वै दैत्यचक्रप्रमर्दनम् ॥१५॥ शिवपुराणे वायुसंहितायां षड्विंशे ध्याये ऽपि ब्रह्मा ब्रह्मत्व माप्नोति विष्णु र्विष्णु त्वमागतः ॥ रुद्रोरुद्रत्व मापन्नो इन्द्र श्चेन्द्रत्व मागतः सितचन्दन तोयेन लिङ्गं स्नाप्य शिवं शिवाम् ॥१६॥ ब्रह्मणा विष्णु नावापि रुद्रेणान्येन केनवा ॥ लिङ्ग प्रतिष्ठा मुत्सृज्य कृयते स्व पदस्थितिः ॥१७॥ अण्डस्यान्तर्वहिर्वर्ति रुद्रलोक द्वयाधिपः शिवप्रियः शिवाशक्तः शिवपादा-

देनेवाले हैं ॥१३॥ पूर्वकालमें जलन्धर नामक दैत्य हमको भी डरानेवाला हुआ परन्तु दक्षिण पादके अंगूठाके रेखासे चक्र बनाकर शिवने उसको मारा ॥१४॥ सब दैत्योंको मर्दन करनेवाला यह सुदर्शन चक्रको मैंने नेत्ररूपी कमलसे शिवका पूजनकर प्राप्त किया है ॥१५॥ शिवपुराण वायुसंहिता अध्याय छब्बीसमें लिखा है कि ब्रह्मा ब्रह्मत्वको प्राप्त हुए विष्णु विष्णुत्वको रुद्र रुद्रत्व को इन्द्र इन्द्रत्वको प्राप्त हुए सफेद चन्दनके जलसे शिवशिवाके स्नान करानेसे ॥१६॥ ब्रह्मा विष्णु रुद्र और सब देवता लिंग पूजा ही करके अपने-अपने पदकी स्थिति करते हैं ॥१७॥ अण्डके भीतर

र्चने रतः ॥१८॥ अण्डस्यान्त र्वहि र्वर्ति विष्णु ल्लोंक द्वयाधिपः ॥ अप्रमेय वलो मायी मायया मोहयन् जगत् ॥१९॥ मूर्ति कृत्य महाविष्णुः सदाविष्णु मथापिवा ॥ शिवप्रियः शिवाशक्तः शिवपादार्चनेरतः ॥२०॥ पाराशरोप पुराणे षोडशाध्याये ॥ रौद्रलिङ्गं महाविष्णुः भक्त्या शुद्धं शिलामयम् ॥ चारुचित्रं समभ्यर्च्य लब्धवा न्परमंपदम् ॥२१॥ साच लक्ष्मीः समाख्याता महाविष्णोस्तु वल्लभा ॥ यस्य लिङ्गार्चने नैव स्वभर्तु र्वल्लभाभवत् ॥२२॥ ब्रह्मा सर्वजगत्कर्ता यस्य लिङ्गार्चनेनच ॥ शचीदेवी स्त्रिय-

और बाहर रहनेवाले दोनों रुद्र शिवके प्रिय शिवमें आसक्त शिवपादका पूजक हैं ॥१८॥ अण्डके बाहर भीतर रहनेवाले दोनों विष्णु अप्रमेय वलवान् मायायुक्त हो जगतको मोहन कर महा विष्णु सदा विष्णु दोनों शिवप्रिय शिवमें आसक्त शिवपादार्चनमें रहते हैं ॥१९-२०॥ पाराशर उपपुराण अध्याय सोलहमें लिखा है कि पत्थरका रुद्र लिंग पूजन करके महाविष्णु परमपदको पाये ॥२१॥ और लक्ष्मी भी शिव पूजनके प्रसाद ही से अपने पतिके प्रिय हुई ॥२२॥ और लिंग पूजाहीके प्रभावसे ब्रह्मा सब जगतका कर्ता हुए ॥ और इन्द्राणी आदि देवस्त्रियोंने भी लिंग पूजा की है अतः सबको पूजन

श्चान्याः सपूज्यः सर्वचेतनै ॥२३॥ तथा चक्र सुदर्शन प्राप्त्यर्थं विष्णुः शिवाराधनं कृतः तदुक्तं लैङ्गे पूर्वार्द्धे सप्तपञ्चाशत्यध्याये ॥ लिङ्गं स्थाप्य यथान्यायं हिमवच्छिखरे शुभे ॥ देवं नाम्ना सहस्रेण भवाब्देन महेश्वरम् ॥ पूजयामास विधिव च्छंकरं लोकशंकरम् ॥२४॥ परीक्षार्थं हरेः पूजा कमलेषु महेश्वरः ॥ गोपयामास कमलं तदैको भुवनेश्वरः ॥२५॥ ज्ञात्वा स्वनेत्र मुद्धृत्य सर्वसत्वावलम्बनम् ॥ पूजयामास भावेन नाम्नातेन जगद्गुरुम् ॥२६॥ कोटिभास्कर सकाशं जटामुकुट मण्डितम् ॥ वसानं चर्मवैयाघ्रं

करना चाहिए ॥२३॥ चक्रसुदर्शन प्राप्तिके हेतु विष्णु भगवान शिव पूजन किये हैं सो लिखा है लिंगपुराण पूर्वार्द्ध अध्याय पचहत्तरमें कि हिमवान पर्वतपर शिवलिंगको स्थापन कर शिवके हजार नामोंसे हजार कमल पुष्प चढ़ानेका नियम किये ॥२४॥ हरिके पूजाके परिक्षाके हेतु शिवने उन फुलोंमेंसे एक फुल गुप्त कर दिया ॥२५॥ एक फुलके स्थानमें विष्णुने अपना नेत्र निकालकर चढ़ा दिया ॥ २६॥ तब शिव जटामुकुट धारण किये कोटि सूर्यके प्रकाशखण्ड चन्द्रमा ललाटमें धारण किये व्याघ्रचर्मपर बैठे आविर्भाव होकर चक्र सुदर्शन दिये ॥२७॥ आदित्य उपपुराणमें विष्णुके प्रति शिवका

चन्द्रार्द्धकृत शेखरेम् ॥२७॥ आदित्योपपुराणे विष्णु-स्प्रतिशिव वाक्यम् ॥ दिव्यंददामि तेचक्र मद्भुतं यत्सु-दर्शनम् ॥ जलन्धर वधार्थाय निर्मितं यन्मया पुरा ॥२८॥ त्रयोविंशे ऽध्यायेऽपि ॥ जलन्धर महादैत्य हृतत्रैलोक्य सम्पदम् ॥ चरणांगुष्ठ रेखोत्थं जलमध्ये सुदर्श-नम् ॥ २९ ॥ गुणावस्थाग्नि कालात्म लोकशक्ति त्रयात्मकम् ॥ शिवः कालात्मकं चक्रं दक्षिणां-गुष्ठ रेखया ॥ ३० ॥ निर्ममे मोघ संकल्पः क्षण काष्ठा कलात्मकम् ॥ तेनासुरं द्विधाकृत्वा ररक्ष परमेश्वरः ॥३१॥ पाद्मे पातालखण्डे विष्णु वाक्यम् ॥ मया वर्ष सहस्रैस्तु सहस्राब्जै स्तथान्वहम् ॥ भक्त्या सम्पूजितो

वाक्य है कि जलन्धर दैत्यके मारनेके लिये जो अद्भुत सुदर्शन चक्र मैंने बनाया था वही चक्र इस समय मैं तुमको देता हूँ ॥२८॥ पद्मपुराणके अध्याय तेइसमें लिखा है कि जलन्धर महादैत्य तीनों लोकका सम्पत हर लिया तब शिवने चरणके अंगुष्ठाके रेखासे जलमें सुदर्शनचक्रको बनाये ॥२९॥ तीनों गुण तीनों लोककी शक्ति कालाग्निरूप चक्र, दाहिने अंगुठाके रेखासे बनाकर और उसी चक्रसे मारकर जगतका रक्षा किये ॥३०॥३१॥ पुनः वहाँ ही पातालखण्डमें भगवानका वचन है कि मैं एक हजार वर्ष तक नित्यनियमसे हजार

पीशः पा दोनों दर्शितस्त्वया ॥३२॥ स्कान्दे ॥ निशम्य वेदार्थ मशेषमच्युतः प्रणम्य शम्भुं शशिशेखरं हरम् प्रसाद्य पादाम्बुज मास्तिको हरिः स्वमूर्ध्नि विन्यस्य करद्वयेन ॥३३॥ शिवरहस्ये सप्तमांशे भगवतिम्प्रति शंकर वांक्यम् ॥ पुरा मदं घ्रीरेखाभिः सृष्टं तच्चक्र मुत्तमम् ॥ सुदर्शनाख्य ममलं कोटिसूर्य्य समप्रभम् ॥३४॥ तेन घोरतरं तप्तं ततस्तत्फल मीदृशम् ॥ तेनैव विष्णुनातत्र चक्रं लब्धं वरानने ॥३५॥ तत्रैव विष्णु वाक्यम् ॥ शिवलिङ्गार्च्चनेनैव सन्तुष्टः पार्वतीपतिः ॥ पुरामह्यं ददौ विप्रा विष्णुत्वं करुणानिधिः ॥३६॥ ददौततः परंमह्यं वैकुण्ठमपि शंकरः ॥

कमलोंसे पूजन किया तब शिवका चरणारविन्दका दर्शन हुआ ॥३२॥ स्कन्दपुराणमें लिखा है कि विष्णु भगवान त्राहि-त्राहिकर शिवके दोनों चरणोंपर मस्तक रखकर स्तुति किये ॥३३॥ शिवरहस्यके सातवें अंशमें भगवतीके प्रति शंकरका वचन है कि पूर्वकालमें अपने पैरके रेखासे मैं अद्भुत सुदर्शनचक्रको कोटि सूर्यके सदृश प्रकाशमान बनाया विष्णु भगवानने जब घोर तप किया तब मैंने उस चक्रको दे दिया ॥३४॥३५॥ वहाँ ही विष्णु भगवानका वचन है कि लिंगपूजासे प्रसन्न होकर शिवने पूर्वकालमें विष्णुत्व हमको

सुदर्शनाभिधं चक्रं ददौ मह्यं ततः परम् ॥ ३७ ॥
शंकर संहितायाम् ॥ पादेन निर्मितं चक्रं जलन्धर
महार्णवे ॥ बलवान् यदि चोद्धर्तुं तिष्ठयोद्धूं नचा-
न्यथा ॥३८॥ उसनशोपपुराणे एकोनविंशे ध्याये ॥
विष्णुम्प्रति शिववाक्यम् ॥ अयुतानां त्रयंचैव मेका-
ग्रमनसात्वया ॥ विन्ध्यक्षेत्रे पुण्यतमे तपश्चर्य्या कृता-
शुभा ॥३९॥ गृहणाचक्रं मम सूर्य्यवर्चसं सुदर्शनं-
नाम सुरारी घातकम् ॥ यतोऽत्रक्षेत्रे सुरवृन्दपूजिते
स्वनेत्र मुत्पाट्य समर्पितं मयि ॥४०॥ वरमेकं महा-
विष्णो ददामि वल्लभोत्तम रूपंमनोहरंभूया त्सर्वलोक

दिये रहनेको वैकुण्ठधाम और सुदर्शन चक्र दिये ॥३६॥३७॥
शंकर संहितामें लिखा है कि जलन्धर दैत्य शिवसे युद्ध करनेको
आया तब शिवने उससे कहा कि मैंने पैरके अंगुठाके रेखासे समुद्रमें
एक चक्र बनाया है उसको उठा सको तो हमसे युद्ध करो ॥३८॥
उसनश उपपुराणके उनइसवें अध्यायमें विष्णुके प्रति शिवका वचन
है कि तीस हजार वर्ष विन्ध्यक्षेत्रमें तुमने देवताओंसे पूजित पवित्र
क्षेत्रमें तप किया ॥ और नेत्र चढ़ाया अतः सूर्यके समान तेजवाला
सुदर्शनचक्र राक्षसोंको मारनेवाला मैं तुमको देता हूँ ॥३९॥४०॥
और एक वर देता हूँ कि सब लोकको मोहन करनेवाला मनोहर

विमोहनम् ॥४१॥ अक्षीणी विपुलेरम्ये सरोजइव सुन्दरी ॥ भूयास्तांते महाविष्णो पुण्डरीकाक्ष सञ्ज्ञया ॥४२॥ नते भविष्यति जरा मरणं नकदाचन ॥ सर्वज्ञत्वं चेश्वरत्वं नियन्तृत्वञ्च सर्वशः ॥ अन्तर्य्यामित्व मक्षय्य भविष्यसि निरन्तरम् ॥४३॥ लैङ्गे ॥ रुद्रप्रसादाद्धिमिमं सुदर्शन मितिस्मृतम् ॥ लब्धवान्भगवान्विष्णुः कोटि सूर्य्यं समप्रभम् स्कान्दे अम्बिकाखण्डे प्युक्तम् ॥ यत्र विष्णुर्वरान्लेभे देवमाराध्य शंकरम् ॥ चक्रं सुदर्शनंनाम द्विषता मन्तकोपमम् ॥४५॥ काशीखण्डे व्यास भुजस्तम्भोपक्रमे वेणीमाधव

कमलके सदृश नेत्र हो पुण्डरीकाक्ष नाम हो ॥४१॥४२॥ और वृद्धता मरण न हो सर्वज्ञ ईश्वर नियन्ता अन्तर्यामी अक्षय यह सब गुण हमारे आशीर्वादसे तुम्हारेमें हो जाय ॥४३॥ लिंगपुराणमें लिखा है कि कोटि सूर्य और अग्निके सदृश प्रकाशवाला सुदर्शनचक्र रुद्रके प्रसादसे विष्णुने पाया ॥४४॥ स्कन्दपुराणके अम्बिका खण्डमें लिखा है कि शंकरका पूजन करनेसे विष्णु भगवानको अनेक वर मिले और शत्रुओंको मारनेवाला सुदर्शनचक्र मिला ॥४५॥ काशीखण्डमें लिखा है कि एक समय वेदव्यास शिवसे विमुख होकर काशीमें जाकर शिवका निन्दा किये तब शिवके आज्ञासे नन्दीने

विष्णु वाक्यम् ॥ तत्प्रसादा दहंचक्री लक्ष्मीश स्तत्प्रसादतः त्रैलोक्य रक्षा सामर्थ्यं दत्तंते नैत्रशम्भुना ॥ इदानिंस्तुहि तंशम्भुं यदिमे शुभमिच्छसि ॥४६॥ शिवपुराणे वायुसंहितायां पूर्वार्द्धे षड्विंशेध्याये ॥ तच्चक्रं तपसालब्ध्वा लब्धवीर्य्यो हरिः सदा ॥ जिघांसते सुरारीणां कुलं निघृण चेतसा ॥४७॥ पुनस्तत्रैव नवमाध्याये ॥ अहं घोरतरं तस्माच्चक्र मन्यं ददामिते ॥ एतदुक्त्वा हरोल्लिख्य दिव्यं कालानल प्रभम् ॥ विष्णवे प्रददौचक्रं घोरार्कायुत सुप्रभम् ॥४८॥ तत्रैव धर्मसंहितायाम् सप्तमाध्याये ॥ वाणा-

उनका वांक् पाद भुजा तीनों स्तम्भन कर दिया उसी समय वेणी माधव विष्णुने आकर व्यासने कहा कि शिवके प्रसादसे मैं चक्रीश लक्ष्मीश हूँ और उन्होंने ही तीनों लोककी रक्षा करनेकी शक्ति दी है उनकी स्तुति करो तब ही हमारा कल्याण है ॥४६॥ शिवपुराण वायुसंहिता पूर्वार्द्ध अध्याय छब्बीसमें लिखा है कि विष्णु भगवान शिवके तपसे बली होकर और चक्र पाकर राक्षसोंको मारे ॥४७॥ पुनः वहाँ ही अध्याय नवमें विष्णुके प्रति शिवका वचन है कि सुदर्शन चक्रसे अन्य चक्र तुमको मैं देता हूँ ऐसा कहकर दिव्य कालानलके समान कोटि सूर्य प्रकाशसे युक्त एक चक्र बनाकर शिवने

सुर संग्रामे युद्धावसाने श्रीकृष्णम्प्रति श्री शंकर वाक्यम् ॥ भगवन्देवकी पुत्र कृतं यत्क्रियते त्वया॥ माबाणस्य शिरच्छिन्धि संहरस्व सुदर्शनम् ॥४६॥ दत्तंमया पुरातुभ्यं अतिवीर्य्यरणेतव ॥ चक्रं जयश्च गोविन्द निवर्तस्व रणादतः ॥५०॥ तथा हरिवंशे भविष्य पर्वणि कैलाशयात्रायां मप्युक्तम् ॥ यत्रलेभे हरिश्चक्रं उपास्य वहुभिर्दिनैः चक्रं सुदर्शनं नामं द्विष-ता मन्तकोपमम् ॥५१॥ शिवरहस्ये सप्तमांशे ॥ पुरा-ब्रह्मादिभिः सार्द्धं विष्णुः काशींदिदृक्षया ॥ समाययौ

विष्णुको दिया ॥४८॥ पुनः वहाँ ही धर्मसंहिताके अध्याय सातमें कृष्णके प्रति शिवका वचन है कि हे देवकी पुत्र कृष्ण ! बाणासुरका बाहुबल नष्ट हो गया कर्तव्य कार्य हो गया शिर मत काटिये सुदर्शन चक्रको हटाइये ॥४६॥ पूर्वकालमें बाणासुर संग्राममें आपका जय और सुदर्शन चक्र मैंने ही दिया है अतः रणसे हटिये ॥५०॥ हरिवंशके भविष्यपर्वमें लिखा है कि बहुत दिन तप करके शत्रुओंके नाश करनेवाला चक्र सुदर्शनको शिवसे विष्णु भगवान प्राप्त किये ॥५१॥ शिवरहस्य अंश सातमें लिखा है कि पूर्वकालमें ब्रह्मादि देवोंको साथ लेकर विष्णु भगवान काशी देखनेको चले और दूर ही से मनोहरा काशीको देखकर परम आनन्द हो हाथ जोड़ दण्डवत किये और

ततोदृष्ट्वा दूरात्काशीं मनोहराम् ॥५२॥ प्रणम्य दण्डवद्भुमौ भूयोभूयः कृताञ्जलिः ॥ अवाप परमानन्दं दृष्ट्वा काशीति सादरम् ॥५३॥ इदमद्यियुगे धन्ये पुराडरीक निभंमम ॥ यतः शिवस्वरूपेयं काशीदृष्टामयाधुना ॥५४॥ स्कान्दे ॥ घोणत्वं वृषभत्व मर्चकवपु र्भार्य्या त्वमार्य्यापतेः वाणत्वं सखिता मृदङ्गवहता इत्यादि रूपंदधौ ॥ त्वत्पादे नयनार्पणञ्च कृतवान् त्वद्देह भागो हरिः पूज्यात्पूज्यतर स्त्वमेव नहिचे त्कोवा त्वदन्योधिकः ॥ ५५ ॥ घोणत्वं स्कान्दे अरगये पाण्डवैस्तस्तं दृष्ट्वाशम्भुः कृपाकरः ॥ वाराहं

अपनेको धन्य माने ॥५२॥५३॥ और कहने लगे कि यह कमलके सदृश मेरी दोनों आँखें धन्य हैं जो मैंने शिवस्वरूप काशीको देखा ॥५४॥ स्कन्दपुराणमें लिखा है कि विष्णु भगवान शिवके हेतु इतना रूपको धारण किये हैं शूकर, वृषभ, अर्चक, स्त्री और वाण, सखी, मृदंग बजानेवाला और शिवके ऊपर नेत्र चढ़ाये शिवके आधा गौरी गौरीके आधा विष्णु हैं तब भी शिव पूज्य न होंगे तो कौन पूज्य होगा ? इसका कथा पुराणोंमें विस्तारसे है सो क्रमशः आगे मैं देखता हूँ ॥५५॥ स्कन्दपुराणमें लिखा है कि पाण्डवोंके गुप्त वनवासके समय शिवने विष्णुको शूकर बनाकर अपने भिल्लका रूप

विष्णु माकल्य तत्रविव्याध सोर्जुनात् ॥५६॥ वृषभत्वं तत्रैव ॥ रावणाय वरंदातु मुद्यताय शिवायवै सर्वस्व

धारणकर शूकरके पीछे-पीछे धन्वाबाण सन्धान किये अर्जुनके बगलसे निकले और महाभारतमें यह भी लिखा है कि एक राक्षस शूकररूप होकर अर्जुनको मारने आया अर्जुन भी धन्वा उठाकर शूकरके पीछे चले दोनोंने शूकरको मारा बाद दोनोंमें युद्ध हुआ इस बातपर कि अर्जुनने कहा कि मैं मारा भिल्लने कहा कि मैं मारा बाद भिल्लसे लड़ाईमें अर्जुन हार गये तब अर्जुनको बहुत चिन्ता हुई कि महाभारतमें बड़े-बड़े महारथी वीरोंसे युद्ध करना है मैं एक जंगली भील्लसे हार गया तो और वीरोंसे कैसे लड़ूँगा थोड़ी देर तक चिन्तामें रहकर अर्जुन बोले कि हे भिल्ल ! मैं नित्य पार्थिव शिवलिंगका पूजन करता रहा सो आज नहीं किया हूँ अतः मैं हार गया तुम ठहरो मैं पूजनकर पुनः तुमसे लड़ूँगा भिल्लने कहा कि जाओ पूजा पाठ कर आओ अर्जुन स्नानकर पार्थिव लिंग पूजन करके शीघ्र ही युद्ध करनेको पहुँचे तो क्या देखा कि जो फूलकी माला पार्थिव लिंगपर चढ़ाये रहे हैं वही माला भिल्लके गलामें पड़ा है ऐसा देखकर अर्जुन समझ गये कि यह शिव हैं और स्तुतिकर भिल्लके पैरोंपर गिर पड़े भिल्ल रूपधारी शिव प्रसन्न होकर वर दिये कि महाभारतमें तुम्हारा जय होगा और पाशुपतास्त्र दिये ॥५६॥ वृषभत्व विष्णुका होना भी वहाँ ही लिखा है कि एक समय शिव प्रसन्न होकर रावणको सर्वस्व बरदान देनेको चले विष्णु भगवानने पार्वतीसे कहा कि रावण सर्वस्व वर पावेगा तो उसका कभी नाश नहीं होगा अतः कोई उपाय कीजिये

वरमाकांद्दय विष्णु र्नन्द्यभवद्भृशम् ॥५७॥ अर्चकत्वं शिवरहस्ये ॥ रुद्राक्ष धारणं कृत्वा भस्मधारण पूर्वकम् ॥ अनन्ये नैवभावेन शिव माराधयद्धरिः ॥५८॥ भार्यात्वं स्कान्दे ॥ भस्मासुर भयेनैव शिवस्तत्र पला-

भगवतीने नन्दीको किसी काममें भेज दिया और विष्णु भगवान नन्दी हो गये शिवजी नन्दीपर चढ़कर वर देनेको चले कुछ दूर जानेपर असली नन्दी पहुँचे तब शिवजीने जाना कि पहला नन्दी विष्णु हैं प्रसन्न होकर शिवने कहा कि वर माँगो तब विष्णुने कहा कि जो वर रावणको देनेके लिए आप जा रहे हैं सो वर हमहीं को देकर यहाँसे लौट चलिये शिवने वहाँ विष्णुको सर्वस्व (सब कुछ) वरदान देकर लौट आये ॥५७॥ अर्चकत्व तो कई जगह है परन्तु शिवरहस्यका लिखता हूँ विष्णु भगवान रुद्राक्ष भस्म धारणकर अनन्य (शिवसे अन्य दूसरा नहीं है) इस भावसे पूजन किया है ॥५८॥ स्त्रीत्व होना स्कन्दपुराणमें लिखा है कि भस्मासुर नामक एक दैत्य रहा उसने शिवका तपकर यह वर माँगा कि जिसके सिरपर मैं हाथ रखूँ सो भस्म हो जाय ऐसा वर पाकर उसने सोचा कि पहले मैं शिव ही के ऊपर हाथ रखकर पार्वतीको ले लूँ शिवके ऊपर हाथ रखनेको चला शिव भाग चले शिवने यह सोचा कि न जरूँ तो हमारा वचन झूठा होगा और इसको तृतीय नेत्रसे भस्म कर दूँ तो कृतघ्न कहाऊँगा शिव भागे जाते रहे रास्तेमें नारद ऋषि मिले नारदसे शिवने कहा कि विष्णुको

यितः ॥ पार्वतीरूप मास्थाय हरिर्मोहितवांस्तथा ॥५६॥ वाणत्वं महिम्नस्तोत्रे ॥ रथांगे चन्द्राकौं रथचरण पाणिः शर इति ॥ ६० ॥ तथा काशीखण्डेऽपि ॥ यद्बाणोभूच्छ्रीपतिर्यस्यचन्ता लोकेशोभूत् स्यननं यः समस्ता ॥ वाहावेदां यस्य यानेषुजाता दग्धा ग्रामास्ताः पुरास्तत्समः कः ॥ ६१ ॥ आदित्योपपुराणे ॥ अथ रुद्रस्य देवस्य निर्मितो विश्वकर्मणा ॥ सर्वलोकमयो दिव्यो रथोयत्नेन सादरम् ॥६२॥ सर्वभूत मयश्चैव सर्वदेव

बुला लाओ नारद वैकुण्ठसे विष्णुको ले आये विष्णुने आकर कहा कि आप आगे चलिये मैं यहाँ ही ठहर जाता हूँ शिव आगे गये विष्णु पार्वतीरूप धारण कर वहाँ ही ठहर गये तब तक दैत्य पहुँचा पार्वतीको देख मोहित हो उनके पास गया और कहा कि तूँ हमसे विवाह करो पार्वतीने कहा कि ठीक है परन्तु तुम शिरपर हाथ रखकर प्रतिज्ञा करो उसने झटसे शिरपर हाथ रखकर प्रतिज्ञा करना चाहा तब तक भस्म हो गया ॥५६॥ वाणत्व महिम्नस्तोत्रमें लिखा है कि त्रिपुर नामक दैत्यको मारनेके हेतु सूर्य चन्द्र दोनों रथका चक्र हुए विष्णु वाण हुए ॥६०॥ काशीखण्डमें लिखा है कि विष्णु वाण हुए दशोदिक्पाल रथ हुए चारोवेद घोड़ा हुए और उसी रथपर बैठकर शिव एक ही वाणमें त्रिपुरका तीनों पुर भस्म कर दिये ॥६१॥ आदित्योपपुराणमें लिखा है कि त्रिपुरके मारनेके हेतु विश्वकर्माने सब

मयस्तथा ॥ सर्व्ववेद मयश्चैव सौवर्णः सर्वसम्वतः ॥ ॥६३॥ रथांगं दक्षिणं सूर्यो वामाङ्गं सोम एव च ॥ दक्षिण द्वादशारन्तु षोडशारं तथोत्तरम् ॥६४॥ पाद्मेऽपि ॥ जगतिन्तु रथंकृत्वा सयोज्य वेदवाजिमम् ॥६५॥ सखीत्वं स्कान्दे ॥ मोहिन्या मोहितः शम्भुः स्वर्णादिन् जनयन् विभुः ॥ असङ्गोह्यय मित्यादि श्रुतिस्तस्याप्य सङ्गता ॥ ६६ ॥ स कदाचिद्धरिम्पश्यन् योषिद्रूपेण चावृतः ॥ शालवृक्षान्समाकीर्य रेमेते नैव भूरिशः ६७

देवमय और सब जीवमय सुवर्णका रथ बनाये ॥६२॥६३॥ सोलह कलाओंसे युक्त चन्द्रमा वायाँ चक्र और बारह कलाओंसे युक्त सूर्य दाहिना चक्र हुए ॥६४॥ पद्मपुराणमें लिखा है कि पृथ्वी रथ हुई वेद घोड़ा हुए ॥६५॥ सखीत्व होना स्कन्दपुराणमें लिखा है कि समुद्रसे जब मद्य अमृत निकला तब विष्णु भगवान मोहिनीरूप धारण कर देवताओंको अमृत असुरोंको मद्य दिये उसी रूपको देखकर शिवको मोह हुआ साँखुके घोर वनमें विष्णुके साथ कई हजार वर्ष तक शिव रमण किये उसी रज वीर्जसे सोना चाँदी पैदा हुआ शिव तो असङ्ग हैं फिर उनको मोह क्यों हुआ ? लोकके उपकार करनेके हेतु ॥६६॥६७॥ मृदङ्ग वाद्यत्व स्कन्दपुराणके ब्रह्मोत्तर खण्डमें लिखा है कि नित्य प्रदोष कालमें सरस्वती वाँसुड़ी बजाती हैं इन्द्र वेणु ब्रह्मा ताल बजाते हैं विष्णु सघन बाजावाला मृदङ्ग बजानेमें बड़े

मृदङ्ग वाद्यत्वं ब्रह्मोत्तर खराडे ॥ वाग्देवी धृत वल्ल-की शतमखो वेणुंदधत्पद्मजस्तालोन्निद्रकरो रमा भग-वती ज्ञेय प्रयोगावृताः ॥ विष्णुःसान्द्र मृदङ्ग लम्बन-पटुर्देवाः समन्तात्स्थिताः सेवन्ते तमनु प्रदोषसमये देवं मृडानीपतिम् ॥ ६८ ॥ गन्धर्व यक्ष पतगो रग सिद्ध साध्या विद्याधरा मरगणाप्सरसांगणाश्च ॥ येन्ये त्रिलोक निलये सह भूतवर्गाः प्राप्ते प्रदोष समये हर पार्श्व संस्था ॥ ६९ ॥ नयनार्पणत्वं महिम्नस्तोत्रे ॥ हरिस्ते साहस्रं कमलवलिमा धायपदयो र्यदेकोनेतस्मि-न्निजमुदहरं नेत्रकमलम् ॥ ७० ॥ अद्भुत रामायणे

समर्थ हैं और देवतागण चारों तरफसे स्थित हो शिव पार्वतीका सेवन करते हैं ॥६८॥ गन्धर्वगण, यक्षगण, अप्सरागण, सर्पगण, सिद्धगण, साध्यगण, विद्याधरगण, देवगण और जितने तीनों लोकमें भूत प्रेत पिशाचगण हैं सो सब प्रदोष कालमें शिवके समीप जाकर उनका स्तुति पूजन करते है ॥६९॥ नयनार्पणत्व महिम्नस्तोत्रमें लिखा है कि विष्णु भगवान हजार कमल नित्य चढ़ानेका नियम किये एक दिन एक कमल घट जानेपर अपना नेत्र निकालकर चढ़ा दिये ॥७०॥ अद्भुत रामायणके द्वितीय सर्गमें विष्णु भगवानका वचन है कि पूर्वकालमें श्रीरूद्रदेवके प्रसादसे दैत्योंका नाश करनेवाला

द्वितीय सर्गे विष्णु वाक्यम् ॥ दैत्यानां नाशनार्थाय चक्रमेतत् सुदर्शनम् ॥ पुरारुद्र प्रभावेण प्राप्तम्वै दुर्लभं मया ॥ ७१ ॥ सृष्टेरादौ मधुकैटभ वधार्थं श्री महाविष्णुः शिवशक्त्याराधनं कृतस्तदुक्तं देवीभागवते प्रथमस्कन्दे चतुर्थाध्याये ॥ तौ कर्ण मलजौ दैत्यौ दानवौ मदगर्वितौ ॥ देव देव्याः प्रसादेन निहतौ मधुकैटभौ ॥७२॥ काशीखण्डे विष्णुम्प्रति सूर्यवाक्यम् ॥ अन्तरात्मासि जगतां विश्वम्भर जगत्पते ॥ तवापि पूज्यः कोप्यस्ति जगत्पूज्योऽत्र माधव ॥७३॥ श्रीविष्णुरुवाच ॥ देवदेव महादेवो नीलकण्ठ उमापतिः ॥

सुदर्शन चक्र मैंने पाया ॥७१॥ सृष्टिके आदिमें मधुकैटभ नामक राक्षसके वधके लिये महाविष्णुने शिवशक्तिका आराधन किया है सो लिखा है देवीभागवत प्रथमस्कन्दके अध्याय चारमें लिखा है कि कर्णमलसे उत्पन्न मदगर्वित मधुकैटभको विष्णु भगवान देव और देवीके प्रसादसे मारा ॥७२॥ काशीखण्डमें विष्णु भगवानके प्रति सूर्यका वचन है कि हे जगत्पते ! विष्णो आप तो विश्वम्भर जगत्पूज्य अन्तरात्मा हैं फिर आपका पूज्य कौन हैं ॥७३॥ महा विष्णु बोले कि देवदेव महादेव नीलकण्ठ उमापति सब कारणोंका कारण वही सबसे पूज्य हैं ॥७४॥ शिवलिंग पूजनसे अर्थ धर्म काम

एकएव हि पूज्योऽत्र सर्व कारण कारणम् ॥ ७४ ॥ शम्भोर्लिङ्गं समभ्यर्च्य पुरुषार्थ चतुष्टयम् ॥ प्राप्नोत्यत्र पुमान्सद्यो नात्र कर्य्या विचारणा ॥ ७५ ॥ किं किंन सम्भवेदत्र शिवलिंग समर्चनात् ॥ पुत्राः कलत्रक्षेत्राणि स्वर्गो मोक्षो प्यसंशयम् ॥७६॥ त्रैलोक्यैश्वर्यसम्पत्ति र्मयाप्राप्ता सहस्र गो ॥ शिवलिङ्गार्चनादेकात् सत्यं सत्यं पुनः पुनः ॥७७॥ नलिङ्गाराधनात् पुण्यं त्रिषु-लोकेषु चापरम् ॥ सर्वतीर्थाभिषेकस्याल्लिंग स्नानाम्बु शेवनात् ॥ ७८ ॥ लिंगं यः स्थापयेद्भक्त्या सप्तजन्म कृतादघात् ॥ मुच्यते नात्र सन्देहो विशुद्धः स्वर्गभाग्

मोक्ष प्राप्त होते हैं इसमें किंचिन्मात्र सन्देह नहीं है ॥७५॥ कौन ऐसा दुर्लभ वस्तु है जो शिवलिंग पूजनसे न प्राप्त हो पुत्र स्त्री क्षेत्र स्वर्ग मोक्ष सब प्राप्त होता है इसमें संशय नहीं है ॥७६॥ तीनों लोकोंकी सम्पत्ति लिंगार्चनसे हमको मिली हैं मैं सत्य-सत्य बार-बार सत्य कहता हूँ ॥७७॥ लिंग पूजनसे परें तीनों लोकमें दूसरा पुण्य नहीं है और लिंगके स्नान जलसे अभिषेक करनेसे सब तीर्थोंमें स्नानका फल होता है ॥७८॥ और लिंगको जो स्थापना करके भक्ति पूर्वक पूजन करते हैं सो सात जन्मोंके पापसे छूटकर स्वर्गको जाते हैं ॥७९॥ शिवके अर्द्धार्द्ध शरीरके भागी विष्णु हैं सो लिखा

भवेत ॥७९॥ विष्णोः शिवस्य अर्द्धार्द्ध शरीरभागित्वं स्कान्दे ॥ शिवस्यार्द्धं स्मृता गौरी तदर्द्धोहरिरीष्यते ॥ तदर्द्धार्द्धेण संयुक्तो हरिरर्द्ध शरीरभाक् ॥८०॥ लक्ष्म्याः शिवाराधनं देवीभागवते षष्ठस्कन्दे अष्टादशाध्याये ॥ तत्रस्थिता महादेवं शंकरं वांछितप्रदम् ॥ दध्यौचैकेन मनसा शंकरं चन्द्रशेखरम् ॥८१॥ उसनसोपपुराणे ॥ एवं वर्ष सहस्रेतु वर्षेतीतेऽपि शंकरः ॥ नाविर्भूतस्तदा-लक्ष्मी चकारकर्म्म दुःकरम् ॥ ८२ ॥ नत्वा स्वीयौ

है स्कन्दपुराणमें कि शिवके आधा गौरी और गौरीके आधा विष्णु हैं ॥८०॥ एक समय किसी कारणवश विष्णु भगवान् लक्ष्मीको शाप दिये कि तुम घोड़ी हो जा बाद लक्ष्मीने बहुत स्तुति किया तब शापोद्धार किये कि एक पुत्र उत्पन्न कर पीछे फिर हमारे समीप आओगी घोड़ी रूपमें इधर-उधर घुमती रहीं मनमें यह विचार करने लगी कि बिना पतिके पुत्र कैसे होगा अतः शिवका आराधन करना चाहिये वांछित फलदाता वही हैं अनन्य मनसे एक स्थानपर बैठकर शिवका आराधन करने लगी शिव प्रसन्न होकर विष्णुको अश्वरूप बनाकर उनके समीप भेजा तो हयिहयावतार हुआ जिससे हयिहय वंश क्षत्रिय हुए ॥८१॥ उशनस उपपुराणमें लिखा है कि एक समय लक्ष्मीने हजार वर्ष शिवका तप किया जब शिव प्रसन्न नहीं हुये तब अपना दोनों स्तन काटकर उसीसे शिवका पूजन किया बड़ा आश्चर्य

स्तनौसाच निकृन्त्यतु शिवन्तदा ॥ पूजयामास विधि-वदाश्चर्यमभवन्मुदा ॥८३॥ श्री शंकर उवाच ॥ विष्णो र्योग्यारूपवती सम्भविष्यति निश्चयम् ॥ त्वयेयंस्तन-युग्मंयद्भक्त्यामह्यंसमर्पितम् ॥ विल्वोवृक्षो भवत्येव भद्रेमत्प्रीतिवर्धकः ॥ ८४ ॥ पूजोपकरणं यच्च निर्मितं बहुभक्तितः ॥ विल्वपत्राणिनोयत्र तत्सर्वं निष्फलं भवेत् ॥ ८५ ॥ एकंविल्वदलंभक्त्या मयि येन सम-र्पितम् ॥ तेनविश्वमिदं सर्वं अर्पितं हरिवल्लभे ॥८६॥ पञ्चाक्षरेण मन्त्रेण विल्वमर्पयतीहमे ॥ तत्पुण्यं नहि-सक्तास्तु वक्तुं ब्रह्मादयः सुराः ॥८७॥ शिवपुराणेऽपि ॥

हुआ और शिव प्रसन्न होकर आविर्भाव हो बोले ॥८२॥८३॥ कि विष्णुके योग्य रूपवती तूँ होगी और तूँने जो दोंनो स्तन काटकर चढ़ाया है यही श्रीफल वृक्ष होगा और इसमें प्रीति हमारी विशेष रहेगी ॥८४॥ पूजनकी सामग्री जो सब भक्तिपूर्वक इकट्ठा करेगा और उसमें विल्वपत्र नहीं रहेगा तो सब निष्फल हो जायगा ॥८५॥ एक भी विल्वपत्र जो भक्तिपूर्वक हमको अर्पण करेगा सो तीनों लोक हमको चढ़ा दिया ॥८६॥ पंचाक्षर मन्त्रसे जो हमको विल्वपत्र चढ़ाते हैं उस पुण्य फलको ब्रह्मादि देवता भी नहीं कह सकते हैं ॥८७॥ शिवपुराणके ज्ञानसंहितामें लिखा है कि विल्वपत्रसे परें

विल्वपत्रात्परं नास्ति तेन तुष्यति शंकरः ॥ ८८ ॥
स्कान्देवायवीय संहितायाम् ॥ कृत्वापि सुमहत्पापं
भक्त्या पञ्चाक्षरेण वै ॥ पूजयेद्यदिदेवेशं तस्मात्पापा-
त्प्रमुच्यते ॥ ८९ ॥ तथा शिवरहस्ये चतुर्थांशेऽपि ॥
वाणलिंगं नजस्यास्ति गृहे विल्वदलार्चितम् ॥
नतद्गृहेजलं ग्राह्यं अन्नाम्वावैदिकोत्तमैः ॥ ९० ॥
नवारुणैः विल्वपत्रैः पूजयित्वा महेश्वरम् ॥
ब्रह्महापि विमुक्तस्याद्भूतिरुद्राक्षभूषितः ॥ ९१ ॥
सुविल्वपत्र पृष्टेन योजयेल्लिङ्ग मस्तके ॥ उत्तानैः पूज-
येत्पत्रै रुत्तराग्रैर्जलान्वितै ॥९२॥ विल्वपत्राणि देयानि-

शिवको दूसरा कोई वस्तु प्रिय नहीं है विल्वपत्रसे शिव विशेष प्रसन्न होते हैं ॥८८॥ स्कन्दपुराणमें लिखा है कि महापाप भी किया हो तो भक्तिपूर्वक पंचाक्षर मन्त्रसे शिवपूजन करनेसे महापाप भी छूट जाते हैं ॥८९॥ शिवरहस्यके अंश चारमें लिखा है कि नर्मदेश्वर लिंग जिसके गृहमें विल्वपत्र चढ़ाया हुआ न हो तो उसके गृहका अन्न जल वेदमार्गानुगामी पुरुषोंको नहीं ग्राह्य है ॥९०॥ नया लाल कोमल विल्वपत्रसे पूजन करनेसे ब्रह्महत्यारा भी मुक्त हो जाता है ॥ ९१ ॥ विल्वपत्रको उत्तान कर पीठ लिंगके मस्तकपर अग्रभाग उत्तर भेंटी दक्षिण कर पूजन करना चाहिये ॥९२॥

शुष्कानि स्फुटितान्यपि ॥ भिन्नान्यपिनवाभावे ॥ छिद्राण्यपि कदाचन ॥९३॥ चन्दनाक्त तसंक्षिप्तैः रामनामांकितैर्नवैः ॥ पूजयित्वा महादेवं ब्रह्महापिशुचिर्भवेत् ॥९४॥ तत्रैव सप्तमांशे चतुर्विंशेध्याये ॥ शिववाक्यम् ॥ शिवतीर्थैततः स्नात्वा विष्णुर्लक्ष्मी समन्वितः ॥ त्रिपुंड्रं धारणं कृत्वा भस्मोद्धूलन पूर्वकम् ॥९५॥ रुद्राक्षधारणं चक्रेततोजावालमन्त्रवित् ॥ ततः सविल्वपत्राद्यैर्हैम पुष्पैश्च केशव ॥ पूजयामास मां भक्त्या प्रणामाश्च चकारह ॥९६॥ तत्रैव प्रथमाध्याये ब्रह्माणम्प्रति विष्णुवाक्यम् ॥ न मया शिवलिङ्गस्य माहात्म्यं

नया न मिले तो सूखा फटा चूर्ण भी चढ़ाना चाहिए ॥९३॥ विल्वपत्रको धोकर चन्दन अक्षत छिड़ककर रामनामसे अङ्कितकर पूजन करनेसे ब्राह्मण घात करनेवाला भी शुद्ध हो जाता है ॥९४॥ पुनः वहाँ ही अध्याय चौबीसमें लिखा है कि विष्णु भगवान लक्ष्मीके साथ शिवतीर्थमें स्नानकर भस्मोद्धूलन त्रिपुंड्र रुद्राक्ष धारण कर विल्वपत्र और सुवर्णके सदृश पुष्पोंसे शिवका पूजनकर प्रणाम किये ॥९५॥९६॥ पुनः वहाँ ही ब्रह्माके प्रति विष्णु भगवान कहते हैं कि हे ब्रह्माजी ! मैं शिवलिंगका माहात्म्य नहीं जानता केवल वेदके आज्ञासे पूजन करता हूँ ॥९७॥ जिसको वेदने भी ठीक तौरसे

ज्ञायतेविधे ॥ परन्तु वेदविहितंक्रियते लिङ्ग पूजनम्
॥९७॥ यन्नवेदैरपिज्ञातं लिङ्ग माहात्म्यमद्भुतम् ॥
तन्मादशैर्वाऽन्यैर्वाकथं ज्ञेयं भविष्यति ॥९८॥ पञ्चा-
ग्निमध्ये वसतस्तपोनिष्ठस्य सन्तम ॥ षष्ठिकोटि युगा
जाता मम शैवब्रतस्यहि ॥ इदानिमपि देवेशः शम्भु-
र्मेन प्रसीदति ॥९९॥ भविष्यपुराणे तृतीयपर्वणि एका-
दशाध्याये ॥ विल्वपूजन विधौ ॥ शिवञ्चनायकं
कुर्य्या· दादित्यान्पत्रमूलके ॥ शेषञ्चतरु मूलेतु मध्ये-
नन्तं शतक्रतुम ॥१००॥ शिवगीतायाम् ॥ विल्वमूल
मृदायस्तु सर्वाङ्गिनो पलिम्पति ॥ सर्वथानोप सर्पन्ति तं
जनं यमकिंकराः ॥१॥ विल्ववृक्षे तत्पलेवा यो मां

नहीं जाना उनको हम या हमारे सदृश दूसरा कोई क्या जान सकता
है ॥९८॥ साठ करोड़ युग पञ्चाग्निमें बैठकर तप करते हमको बीत
गया परन्तु अभी तक शिव प्रसन्न नहीं हुए ॥९९॥ भविष्यपुराण
तृतीय पर्वके अध्याय एग्गारहमें लिखा है कि विल्ववृक्षके पूजन
करनेके समय शिवको नायक (मालिक) बनाना बारहों सूर्यको
पत्रके मूलमें शेषनागको वृक्षके मूलमें मध्यमें अनन्त और इन्द्रको
स्थापन करना ॥१००॥ शिवगीतामें लिखा है कि विल्ववृक्षके
जड़की मिट्टी जो सर्वांगमें लेपन करते हैं उनको यमका दूत स्पर्श

पूजयते नरः ॥ परांश्रीयमिह प्राप्य शिवलोके महीयते ॥२॥ विल्ववृक्षं समाश्रित्य यो मन्त्रान्विविधान्जयेत्॥ एकेनदिवसेनैव तत्पुरश्चरणंभवेत् ॥३॥ पाद्मे ॥ चूर्णीकृतान्यपिप्राज्ञा विल्वपत्राणि वैदिकाः ॥ सम्पाद्य पूजयंत्वीशं नवाभावे विचक्षणाः ॥४॥ शिवरहस्ये ॥ मूलतोभवरूपाय मध्यतो मृड़रूपिणे ॥ अग्रतः शिव रूपायपत्रे वेदस्वरूपिणे ॥५॥ स्कन्द वेदान्तरूपाय तरुराजायते नमः ॥ नमस्ते विल्व तरवेभानुसोदरते नमः ॥६॥ शिवपूजोद्यताभीष्ट साधनायनमोनमः ॥ इति सम्प्रार्थ्यतं विल्वं नत्वा कृत्वा प्रदक्षिणम् ॥७॥

नहीं करते हैं ॥१॥ और विल्ववृक्षमें अथवा उसके फलमें जो शिवका पूजन करते हैं सो धनवान हो अन्तमें स्वर्गको जाते हैं ॥२॥ विल्ववृक्षके नीचे बैठकर जो मन्त्रोंका जप करते हैं उनको एक ही दिनमें वह मन्त्र सिद्ध हो जाता है ॥३॥ पद्मपुराणमें लिखा है कि नया विल्वपत्र न मिले तो उसके चूर्ण अथवा चन्दनसे पूजन करना ॥४॥ शिवरहस्यमें लिखा है कि विल्वका मूल भवरूप है मध्यभाग मृड़रूप है अग्रभाग शिवरूप है और पत्र वेदरूप है ॥५॥ स्कन्द वेदान्त रूप है ऐसे वृक्षराजको नमस्कार है हे विल्व वृक्ष ! सूर्यका सहोदर भ्राता शिवपूजनका साधक आपको बारंवार नमस्कार

कृताञ्जलि पुटोभूत्वा प्रार्थयेत्पुनरादरात् ॥ वेदान्त रूप पत्राणि शिवपूजार्थं मद्यते ॥ प्रार्थयामितितं प्रार्थ्यंभवेत्तद्ग्रणोद्यतः ॥ ८ ॥ नारदीये दुर्वांकुरैर-भिनवैः शुद्धैः सम्पूज्य सादरम् ॥ सर्वं पुष्पार्चन फलं प्राप्नोत्येव न संशयः ॥९॥ तुलसी दलमात्रेण यः करोति शिवार्चनम् ॥ कुलैकविंश मुधृत्य शिवलोके महीयते ॥१०॥ ब्रह्माण्डपुराणे ॥ सहस्राणांसुपूर्त्यर्थंसाऽछिनच्छिव भाषिणी ॥ स्तनंतद्दरमासाद्य हरिम्प्रा-साहरिप्रिया ॥११॥ श्री सूक्ते ॥ आदित्यवर्णेतपसो-ऽधिजातो वनस्पतिस्तव वृक्षोऽथविल्वः ॥ तस्यफला-

है इस प्रकार प्रार्थनाकर प्रदक्षिणाकर पुनः प्रार्थना करना वेदान्तरूप आपके पत्रोंको शिवपूजाके हेतु मैं ग्रहण करता हूँ ऐसा कहकर तोड़ना ॥६॥७॥८॥ नारदीय पुराणमें लिखा है कि जो पवित्र कोमल दुर्बादलसे शिव पूजन करते हैं सो सब फुलोंसे पूजाका फल प्राप्त करते हैं ॥९॥ और जो तुलसी दलसे शिवपूजा करते हैं सो इकइस कुलके साथ शिवलोकको जाते हैं ॥१०॥ ब्रह्माण्डपुराणमें लिखा है कि लक्ष्मीने शिवके हजार नामोंसे हजार फल चढ़ानेका नियम किया एक दिन एक फल घट जानेपर अपना स्तन काटकर चढ़ा दिया उसी पुण्यसे हरिप्रिया हुई ॥११॥ श्रीसूक्तमें लिखा है कि सूर्यके सदृश

नितपसानुदन्तु मायान्तरायाश्च वाह्याऽलक्ष्मीः ॥१२॥ वामन पुराणेऽपि ॥ विल्वो लक्ष्म्याकरे भवत् इत्यादि ॥१३॥ स्कन्दपुराणे नगरखण्डे अष्टसप्तत्यध्याये विष्णुम्प्रति लक्ष्म्या पूर्वजन्मनि गौरीपूजनाद्विष्णु प्राप्ति वर्णनम् ॥ साचदेवीमयातत्रतच्च गौरीचतुष्टयम् ॥ हाटकेश्वरजेक्षेत्रे शुभे संस्थापिते विभो ॥१४॥ तत्प्रसादान्मया लब्धो भर्त्तात्वं परमेश्वर ॥ शाश्वतश्चाक्षयश्चैव मुखप्रेक्ष्यश्च सर्वदा ॥१५॥ अथविष्णुना दशावतार रूपेण शिवाराधनं कृतस्तदुक्तं तत्रतत्र ॥ स्कन्दपुराणे ब्रह्मखण्डेसेतु माहात्म्ये पञ्चचत्वारिंशेऽध्याये

तेजस्विनी लक्ष्मीके तपसे वनस्पति विल्ववृक्ष उत्पन्न हुआ उसका फल अलक्ष्मीका नाश करनेवाला है ॥१२॥ वामनपुराणमें लिखा है कि लक्ष्मीके हाथसे विल्वकी उत्पत्ति हुई ॥१३॥ स्कन्दपुराण नगर खण्डके अठहत्तर अध्यायमें विष्णु भगवानसे लक्ष्मीजी कहती हैं कि पूर्वजन्ममें मैं हाटकेश्वर क्षेत्रमें चार गौरी स्थापनकर पूजन किया उसी पुण्यके प्रभावसे निरन्तर रहनेवाला अक्षय सदा हमारे मुखको देखनेवाला आपके सदृश पति हमको मिला है ॥१४॥१५॥ अब विष्णु भगवान दश अवतारमें होकर शिवका पूजन किये हैं सो प्रमाणके साथ आगे लिखते हैं ॥ स्कन्दपुराण ब्रह्मखण्ड सेतुमाहात्म्यके

रामंचन्द्रेण शिवपूजनं कृतम् ॥ स्वयं हरेणदत्तन्तु हनुमन्नामकं शिवम् ॥ सम्पश्यन् रामनाथञ्च कृत-कृत्यो भवेन्नरः ॥१६॥ योजनानां सहस्रेऽपि स्मृत्वा-लिङ्गं हनूमतः ॥ रामनाथेश्वरञ्चापि स्मृत्वासायुज्य-नाप्नुयात् ॥१७॥ वाल्मीकिये उत्तरकाण्डेऽपि ॥ वि-शेषाद्ब्राह्मणान्सर्वान् पूजयामास चेश्वरम् ॥ यज्ञेन-यज्ञ हन्तारं अश्वमेधे न शंकरम् ॥१८॥ युद्धकाण्डे-ऽपि ॥ अत्र पूर्वं महादेवः प्रसाद मकरोद्विभुः ॥ एत-

अध्याय चौदनमें रामचन्द्र और हनुमानने शिवलिंगका स्थापना की है ॥ हनुमानको रामचन्द्रने लिंग लानेके लिये कैलाशको भेजा उनके आनेमें देर हुई तब तक मुनियोंके आज्ञासे रामचन्द्र बालुकाका लिंग स्थापन कर दिये बाद हनुमान लिंग लेकर आये उनका मोह हुआ कि हमने इतना परिश्रमसे लिंग लाये सो हमारा परिश्रम व्यर्थ हो गया वाद रामचन्द्र उनको समझा बुझाकर उनके लाये लिंगको उनहीसे स्थापन करा दिया उन दोनों लिंगका दर्शन करनेवाला मनुष्य कृतकृत्य हो जाता है और एक हजार योजनसे भी हनुमतेश्वर रामनाथका स्मरण करनेसे शिवसायुज्य मुक्ति प्राप्त होती है ॥१६॥ १७॥ वाल्मीकि उत्तरकाण्डमें लिखा है कि विशेष करके ब्राह्मण लोग अश्वमेध यज्ञ द्वारा दक्ष यज्ञ नाश करनेवाला ईश्वर शंकरका पूजन किये ॥१८॥ लौटती समय रामचन्द्रने जानकीसे कहा है कि

न्तु दृश्यते तीर्थं सागरस्य समीपतः ॥१६॥ पद्मपुराणे उत्तरभागे शिवगीतायाम् ॥ अथ रामगिरौ रामस्त-स्मिन्गोदावरी तटे ॥ शिवलिङ्गं प्रतिष्ठाप्य पूजां कृत्वा यथाविधिः ॥ मासमेकं जलाहारो मासंपर्णाशनस्थितः ॥ मासमेकंफलाहारो मासञ्चपवनाशनः॥२०॥ शान्तोदान्तः प्रसन्नात्मा ध्यायन्नेवं महेश्वरम् ॥ हृत्पंकजे समासीनं उमादेहार्धधारिणम् ॥२१॥ ततः प्रसन्नोभगवाँच्छङ्करो लोकशङ्करः ॥ उक्तश्चतेनरामोऽपिसादरं चन्द्रमौलिनः ॥२२॥ महापाशुपतं नाम प्रगृहाण रघुद्वह ॥ एतदा-साघपौलस्त्यं जहिमाशोक मर्हसि ॥२३॥ कौर्म्मे-

समुद्रके तीरमें जो तीर्थ देख पड़ता है यहाँ ही शिव प्रसन्न होकर हमको वर दिये ॥१६॥ पद्मपुराण उत्तर भाग शिवगीतामें लिखा है कि जब जानकीका हरण हो गया तब रामचन्द्र बहुत व्याकुल हुये अगस्त्य ऋषी विरजा दीक्षा देकर शिवका तप उपदेश दिया रामचन्द्र गोदावरीके तीरमें शिवलिंग स्थापन कर एक मास फल एक मास सुखा पत्ता एक मास जल और एक मास वायुपीकर तप किये ॥२०॥ २१॥ और शान्तचित्तसे अर्धनारीश्वर शिवका हृदयकमलमें ध्यान किये ॥२२॥ तब शिव प्रसन्न होकर आविर्भाव हो बोले कि हे रघुकुलोत्पन्न राम! हम तुमको महापाशुपत नामक अस्त्र देता हूँ जगतका

पूर्वार्द्धे एकत्रिंशद ध्यायेऽपि ॥ सेतुमध्ये महादेवं ईशानं कृत्तिवाससम् ॥ स्थापयामास मल्लिङ्गं पूजया मासराघवः ॥२४॥ तस्यदेवो महादेवः पार्वत्या सह-शंकरः ॥ प्रत्यक्षमेव भगवान् दत्तवान्वरमुत्तमम् ॥२५॥ स्कान्दे नागरखण्डे तृतीय परिच्छेदेविभीषण-म्प्रति श्रीराम वाक्यम् ॥ अहमस्मिन्स्वकेसेतौ शंकर-तृतयं शुभम् ॥ स्थापयिष्यामि कीर्त्यर्थंतत्पूज्यं भवंता-सदा ॥२६॥ ततः संस्थापयामास सेतु प्रान्ते महेश्वर-रम् ॥ मध्येचैवव तथादौच श्रद्धापूतेनचेतसा ॥२७॥ रामेश्वर त्रयंराम एवं तत्र विधायस ॥ सेतु बन्धंतथा

नाश करनेवाला बहुत उग्र सस्त्र यह है इससे रावणको मारिए सोच मत करो ॥२३॥२४॥ कूर्म्मपुराण पूर्वार्द्ध अध्याय एकइसमें लिखा है कि सेतुके मध्यमें रामचन्द्रने महादेव १ ईशान २ कृत्तिवाशस ३ तीन लिंगोंकी स्थापना की है ॥२५॥ तब पार्वतीके साथ महादेव प्रसन्न होकर उत्तम वर दिये ॥२६॥ स्कन्दपुराण नगर खण्डके तृतीयपरि-च्छेदमें विभीषणके प्रति रामचन्द्रका वचन है कि मैं इस अपने सेतुपर तीन लिंगोंका स्थापन करूँगा उसका तुम नित्य पूजन करना ॥२७॥ ऐसा कहकर श्रद्धापूर्वक आदि मध्य अन्तमें तीन लिंगका स्थापन किये ॥२८॥ तीन रामेश्वर लिंग स्थापन कर

साद्यप्रस्थितः स्वगृहं प्रति ॥२८॥ पाराशरोप पुराणे पञ्चमाध्याये श्रीशंकर वाक्यम् ॥ निहत्यरावणं मूर्ख तत्पापनिवृत्तये ॥ स्थापयामासमल्लिङ्गं पूजयामासराघवः ॥२९॥ उशनसोपपुराणे विन्ध्यमाहात्म्ये रामाचन्द्रेण-पितृ श्राद्धंकृतंलिङ्गस्थापनमृपिकृतम् ॥ लिङ्गं संस्थापयामास स्वनाम्नैव महामतिः ॥ रामेश्वर इति-ख्यातो रामकुण्डस्तथैव च ॥३०॥ लिङ्गं संस्थापितं तत्र लक्ष्मणे न महात्म ना ॥ भरत कुण्डन्तु तत्रैव भरतेश्वर एवच ॥३१॥ सीतेश्वरश्च तत्रैव भक्तानां वांछि-तप्रदः ॥ लांगूलेशोपितत्रैव स्थापितोवायुसुनूना ॥३२॥

रामचन्द्र अपने गृहको चले ॥२९॥ और गोसांई तुलसीदासजीने भी रामायणमें कहा है कि 'धर्मधुरन्धर रघुकुलनाथा पूजि पार्थिव नायो माथा', 'लिंगथापि विधिवत करि पूजा शिव समान प्रियमोहि न दूजा' पराशर उपपुराणमें लिखा है कि मूर्ख रावणको मारकर उस पापसे मुक्त होनेके लिये शिवलिंगका स्थापन किया है ॥३०॥ उसनश उपपुराणके विन्ध्यमाहात्म्यमें लिखा है कि विन्ध्याचलमें जाकर पितृ श्राद्धकर रामगया और शिवलिंग स्थापनकर रामकुण्ड बनाये और लक्ष्मणने लक्ष्मणेश्वर भरतने भरतेश्वर लिंग स्थापन कर लक्ष्मण कुण्ड भरत कुण्ड बनाये और सीताने सीतेश्वर हनूमानने

पद्मपुराणे एकादशी माहात्म्ये ॥ एकादशीति विख्यातं विष्णोर्नाम्नाशिवव्रतम् ॥ पुरा मोहितपसा लब्धवान् कुम्भसम्भवात् ॥३३॥ तथा रामचन्द्रेण किष्किन्धायां देव्याराधनं कृतम् ॥ तदुक्तं देवीभागवते ॥ प्रतप्ते नापिरामेण सीता विरहवह्निना ॥ विधिवत्पूजिता देवी नवरात्र व्रतेन वै ॥ ३४ ॥ अष्टम्यां मध्यरात्रे तु देवी भगवती शिवा ॥ सिंहारूढं ददौ तस्यै दर्शनं राघवम्प्रति ॥ ३५ ॥ स्कान्दे व्याघ्रसरमाहात्म्येप्युक्तम् ॥ उद्यम्य वाहुगर्जन्ति वेगेनाभ्यासमाययौ ॥ राक्षसिराम-

लांगूलेश्वर लिंग स्थापन किये ॥३१॥३२॥३३॥ पद्मपुराणके एकादशी महात्म्यमें लिखा है कि एगारह रूद्रोंका एकादशी व्रत है परन्तु अगस्त्य ऋषिके उपदेशसे जब रामचन्द्रने एगारह रुद्रोंका पूजन किया तबसे विष्णुके नामसे विख्यात हुइ ।।३४।। हनुमान नाटकमें लिखा है कि दश शिरसे रावण दश रूद्रोंका पूजन किया एक रुद्र नहीं प्रसन्न हुए रामचन्द्र एगारह रुद्रोंका पूजन किये वही एगारहवाँ रुद्र हनुमान प्रसन्न होकर वर दिये कि सेवक स्वामी सखा तिनों होकर मदद करूँगा तुलसीदासने भी लिखा है कि 'सेवक स्वामि सखा सियपियके हितनिपाधि सदा तुलसीके' ॥ देवीभागतमें० किष्किन्धामें जाकर रामचन्द्र देवीकी पूजा की है ।। सीता विरहसे

योरेव युद्धं समभिवर्तत ॥ ३६ ॥ ततः सोद्विग्नमनसा रामोध्यानमथा करोत् ॥ शिवभक्तिश्चकारासु स्तोत्रेणानेन सुव्रत ॥ ३७ ॥ लिंगं संस्थापयामास भगवान् जानकीपतिः ॥ ततस्तुष्टो जगन्नाथः भगवान् पार्वतीपतिः ॥ वरंतूर्णं ददौतस्मै रामभद्राय धीमते ॥३८॥ तत्रैव ॥ रामकोटिकृतारेखा वामनाश्रममध्यगा ॥ यत्र-रामेश्वरोदेवो यत्रचित्ररथं वनम् ॥ यत्र भागीरथी गङ्गा मुक्तिस्तत्र पदे पदे ॥ अत्र नृत्यति देवेशः काश्यां देवोननृत्यति ॥ तत्रैव ब्रह्मखण्डेसेतुमाहात्म्ये चतुश्चत्वारिंशत्यध्याये मुनीनामाज्ञया रावणवधप्रायश्चित्तशान्त्यर्थं श्रीरामचन्द्रेण शिवस्थापनं कृतम् ॥ शिवलिङ्गप्रतिष्ठात्वं लोकसंग्रहकाम्यया ॥ कुरुरामदशग्रीव वध-

दग्ध रामचन्द्र किष्किन्दामें नवरात्र व्रतकर देवीकी पूजा की अष्टमीको सिंहपर चढ़ि हुई देवी प्रगट होकर वर दी ॥३५॥३६॥ स्कन्दपुराणके व्याघ्रसर माहात्म्यमें लिखा है कि ताड़िका नाम राक्षसी बाहू उठाकर गरजती हुइ रामसे युद्ध करने लगी ॥३७॥ रामचन्द्र युद्धसे उद्विग्न हो शिवका ध्यानस्तुति करने लगे ॥३८॥ और लिंगस्थापनकर पूजन किये शीघ्र ही शिव प्रसन्न होकर वरदान दिये ॥३९॥ पुनः वहाँ ही

दोषापनुत्तये ॥ ३९ ॥ सेतुमध्ये महादेवं लिङ्गरूपं महेश्वरम् ॥ रामोवैस्थापयामास लिङ्गरूपधरं हरम् ॥४०॥ तत्रैवपञ्चचत्वारिंशेऽध्याये रामवाक्यम् ॥ हनुमता कृतं लिङ्ग[1] यल्लिङ्गं लक्ष्मणेश्वरम्[2] ॥ सुग्रीवेण कृतं[3] यच्च सेतुकर्ता नलेन[4] च ॥ ४१ ॥ अंगदेन[5] च नीलेन[6] तथा जाम्बवताकृतम्[7] ॥ विभीषणेर्न यच्चापि रत्नलिङ्गं[9] प्रतिष्ठितम् ॥४२॥ इन्द्राद्यैश्चकृतं[10] लिङ्गं शेषाद्यैश्च प्रतिष्ठितम्[11] ॥ इत्येकादशरुद्रोऽयं शिवस्साक्षा-

लिखा है कि रामरेखासे लेकर वामनाश्रम तक तीर्थ है जहाँ रामेश्वर देव हैं भागीरथी गंगा हैं और चित्ररथ राजाका वन है वहाँ पदपदमें मुक्ति है यहाँपर शिवरात्रिमें स्वयं नृत्य करते हैं काशीमें नहीं नृत्य करते हैं ॥ पुनः वहाँ ही ब्रह्मखण्ड सेतु माहात्म्यके अध्याय चौआलिसमें लिखा है कि मुनियोंके आज्ञासे रामचन्द्र रावण वध प्रायश्चित्तके हेतु शिवलिंग स्थापन किया है हे राम ! लोकापवाद जो है कि ब्राह्मण वंश रावणको रामने मारा इस अपवाद छूटनेके हेतु शिवलिंगका पूजन करो ॥४०॥ ऐसी आज्ञा पाकर रामचन्द्रने लिंग रूप शिवका स्थापना किये ॥४१॥ पुनः वहाँ ही अध्याय चालीसमें लिखा है कि हनुमानका स्थापित १ रामका स्थापित २ लक्ष्मणका स्थापित ३ सुग्रीवका स्थापित ४ सेतुके बनानेवाले नल ५ नील ६ स्थापित अंगदका स्थापित ७ जाम्बवानका स्थापित ८ विभीषणका

द्विराजते ॥४३॥ तत्रैव सप्तविंशेध्यायेऽपि ॥ पुरादाशरथीरामो निहत्ययुधि रावणम् ॥ ब्रह्महत्या विमोक्षाय गन्धमादनपर्वते ॥ प्रतिष्ठिपल्लिङ्गमेकं लोकानुग्रह काम्यया ॥४४॥ लिङ्गस्यास्याभिषेकार्थं शुद्धं वारिगवेषयन् ॥ विभेद्य धरणीं शीघ्रं मनसा जाह्नवीं स्मरन् ॥४५॥ अद्भुत रामायणे ॥ सहस्रकन्धरः क्रुद्धः क्षुरम्प्रगृह्यसायकम् ॥ विव्याध राघवं वीरः सर्वप्राणेन रावणः ॥४६॥ वक्षोनिर्भिंद्यसरोरामस्य सुमहात्मनः ॥

स्थापित ९ इन्द्रादि देवताओंका स्थापित १० शेषआदि नागोंका स्थापित ११ लिंग यह एकादश रुद्र लिंग सेतुपर साक्षाद्विराजमान हैं ॥४२॥४३॥४४॥ पुन वहाँ ही अध्याय सताइसमें लिखा है कि पूर्वकालमें युद्धसे दशरथके पुत्र रामने रावणको मारकर हत्या छूटनेके निमित्त गन्धमादन पर्वतपर एक लिंगस्थापन किये ॥४५॥ और उस लिंगको स्नान करानेके लिये पर्वतमें धन्वासे भेद न कर मानसी गंगाको स्मरण कर स्नान कराये ॥४६॥ अद्भुत रामायणमें लिखा है कि रावणको मारकर रामचन्द्र अयोध्यामें आये तब सब लोग उनकी स्तुति करने लगे उस समय जानकीने कहा कि अभी श्वेत द्वीपमें सहस्रमुख रावण है उसको मारनेका चिन्ता करना चाहिये बाद राम चारो भाई सीता बन्दर भालूके सैन्यके साथ सहस्रमुख रावणके पास गये उसने एक वाण ऐसा मारा कि राम जानकीको

भित्वा महीञ्च सहसा पातालतलमाविशत् ॥ ४७ ॥ ततो रामो महाबाहुः पपात पुष्पकोपरि ॥ निःसञ्ज्ञो निश्चलश्चासौ हाहा भूतानि चक्रिरे ॥४८॥ अकम्पय न्महीन्सर्वान्सशैल वन कानना ॥ ४९ ॥ एवं विधं निःसञ्ज्ञं रामंदृष्ट्वा मुनयो रुरुदुः ॥ तदासंग्रामे सीतोवाच ॥ क्व गता भ्रातरः सर्वे क्व गता वानरर्षभा ॥ मन्त्रिणः क्वगताः सर्वे रामस्य किमुपस्थितम् ॥५०॥ सातेये तेषां वचनं श्रुत्वा राक्षसां वधायस्वरूपंदधार ॥ स्वरूपं प्रदधौ देवी सीताविकट रूपिणी ॥ भयंकररूपं कृत्वा असिना तस्य शिरांसि चिच्छेद ॥ अन्यानपिनिसाचरान्क्षणेनैव जघान ॥ तान्सर्वान्निमिषेणैवनिहत्य जनकात्मजा ॥ एषामत्रेण

छोड़कर सब अजोध्या चले आए पुनः क्रोध करके एक बाण मारा कि रामचन्द्रका हृदय भेदन करके पातालको चला गया राम मूर्च्छित हो पुष्पक रथपर गिर पड़े चारो तरफसे हाहाकार शब्द हुआ पृथ्वी काँपने लगी ॥४७॥४८॥४९॥ ऋषि सब रोने लगे तब सीताने कहा कि भाइ सब कहाँ गए बन्दर भालू क्या हुए मन्त्री सब कहाँ गये रामको क्या हो गया ॥ ५० ॥

शिरसा मालाभिः कृतभूषणा ॥ ननर्त जानकीदेवी घोराकाली महाबला ॥५१॥ तदा सीतया निहतान्राक्षसान्दृष्ट्वा ब्रह्मपुरोगमादेवास्ताँ तुष्टुबुः ॥ तदा तेषां कोलाहलं श्रुत्वाशरस्ताडितोरामः प्रबुबोध ॥ पार्श्वस्थितां जनकनन्दिनीमदृष्ट्वा नृत्यन्ति हसन्ति भद्रकालीं दृष्ट्वा ब्रह्मणः सकाशात्तस्यालीलां श्रुत्वा रामः प्रोवाच ॥ कात्वं देवि विशालाक्षि शशांकावयवांकितैः ॥ नजानेत्वां महादेवि यथावद्वक्तुमर्हसि ॥५२॥ रामस्यवचनं श्रुत्वा सा प्रोवाच ॥ मां विद्धिपरमां शक्तिं महेश्वर समाश्रयाम् ॥ अनन्यामव्यया मेकां

ऐसा कहकर सीता महा विकराल काली रूप धारण कर तलवारसे सहस्र मुख रावणका हजारों शिर काटकर क्षणमात्रमें सब निशाचरोंको मारकर और उनके मुण्डोंका माला पहिन कर नृत्य करने लगी ॥५१॥ ऐसा आश्चर्य लीला देखकर ब्रह्मादि देवता आकर स्तुति करने लगे इसी कोलाहलमें रामका मूर्च्छा छूट गया उठकर बैठ गये बगलमें जानकीको नहीं देखा आगे कालीको नृत्य करते देखकर ब्रह्माजीसे रामचन्द्र पूछा ब्रह्माने सब वृतान्त कहा बाद रामचन्द्र हाथ जोड़कर कालीसे पूछे कि हे देवि ! तुम कौन हो मैं नहीं जानता हूँ ठीक कहो ॥५२॥ रामका ऐसा वचन सुनकर कालीने कहा कि

यां पश्यन्ति मुमुक्षवः ॥ इति श्रुत्वा रामोविराम ॥ ततः देवगणैरावृतो रामः क्षणादेव कोटिसूर्य प्रतीकाशं वृषभारूढं शिवं तस्याः पार्श्वे ददर्श ॥ इत्याश्चर्यं दृष्ट्वा रामः तस्यां भार्य्याबुद्धिंत्यक्त्वा परमेश्वरीं जगन्मयीं मत्वा सहस्रनामभिस्तुष्टाव ॥५३॥ महिरावणसंकटे भीमरूपं हनुमंतं संस्मार तदुक्तं स्कान्दे हनुमन्नञ्जनीसूनो वायुपुत्रो महाबलः ॥ सर्वसंकष्ट हरण विपत्तौ शरणं भव ॥५४॥ ईशानो ग्रौहरः शर्वो-

मैं शिवकी परमाशक्ति उनके बगलमें रहनेवाली हूँ और नाश रहिता एक हूँ हमको मोक्षके इच्छावाले देखते हैं ऐसा उनका वचन सुनकर राम चुप हो गये एक क्षणके बाद राम उनके बगलमें कोटि सूर्य्यके प्रकाशसे युक्त वृषभपर चढ़े शिवको देखा ऐसा आश्चर्य देखकर रामचन्द्र स्त्री बुद्धि छोड़कर परमेश्वरी जगन्मयी माता जानकर सहस्र नामसे स्तुति करने लगे ।५३॥ पुनः महीरावण राम, लक्ष्मणको पकड़ कर पातालमें ले गया और कहा कि हे नृपके बालक! तुम दोनोंको मैं अपने कुल देवताको बलि चढ़ाऊँगा तुम दोनोंको जिसका बल हो उसका स्मरण करो तब रामचन्द्रने हनुमानका स्मरण किया सो लिखा है स्कन्द पुराणमें कि रामचन्द्र हनुमानको पुकार कर कहते हैं कि हे हनुमन्! हे अञ्जनीपुत्र! हे वायुपुत्र! महाबली सब कष्ट नाशक विपत्तिमें शरण दीजिए ॥५४॥ इशान १,

महादेवो भवोद्भवः ॥ महेशः पशुपोभीमः कपाली कालनाशनः ॥ ५५ ॥ इत्येकादशरुद्रेषु भवन्तं भीम रूपिणं ॥ सहशेषैर्भजाम्यद्य येन संकष्टनाशनम् ॥५६॥ शेषावतारेण लक्ष्मणे नापि शिवाराधनं कृतस्तदुक्तं-मायापुरी माहात्म्येद्वात्रिंशेध्याये तत्रस्नात्वाजप्त्वा च फलानन्त्यं लभेनरः ॥ लक्ष्मणेश्वररुद्रोऽत्रदर्शनात्सर्व

उग्र २, हर ३, शर्व ४, महादेव ५, भवोद्भव ६, महेश ७, पशुपति ८, भीम ९, कपाली १०, कालनाशन ११, इन ग्यारहों रुद्रोंमें भीम रूप आपका मैं भजन करता हूँ ॥५५॥ इतना स्तुतिसे प्रसन्न होकर हनुमान महिरावणको मारकर रामको उठा लाये ॥५६॥ शेषावतार लक्ष्मणजीने भी शिवाराधन किये हैं सो लिखा है स्कन्दपुराण माया-पुरी महात्म्यके अध्याय बतीसमें कि लङ्कापुरीको विजयकर जब राम-चन्द्र अपने गृहको आये तब लक्ष्मणको राजयक्ष्मा (थाईसीस) रोग हुआ प्रिय भ्राताके रोगी होनेसे रामचन्द्रको बहुत चिन्ता हुई तब अपना कुल गुरु वशिष्टको बुलाकर पूछा कि यह रोग लक्ष्मणको किस कारणसे हुआ वशिष्ठजी ध्यान द्वारा देखकर कहे कि मेघनादको यज्ञ करते समय इन्होंने मारा है उसी ब्रह्मवध पापसे इनको यह रोग हुआ है इसके शान्तिके लिए शिवका स्थापन कर पूजन करें ऐसा गुरुवरका वचन सुनकर शिवलिङ्गका स्थापन कर तप किये जो मनुष्य उस स्थानमें जाकर स्नान जप पूजन करते हैं उनको अनन्त फल प्राप्त होता है ॥५७॥ परशुरामावतारने शिवपूजन किया है

पापहा ॥५७॥ तथा परशुरामेणापि शिवलिङ्गं स्थापनंकृतम् ॥ स्कान्दे हिंगुलाद्रिखण्डे उत्तर संहितायाम् ॥ इत्थंराम प्रतिज्ञाय हिंगु लाद्रं जगामह ॥ चतुर्विंशति वर्षाणि तपस्तत्र चकारह ॥५८॥ विजय प्राप्तये शम्भोर्दर्शने कृतनिश्चयः ॥ तदाप्रसन्नः श्रीशम्भु रुवाच वचनंशुभम् ॥५९॥ लिंगंस्थापयमेराम नेत्रंतोया तटे शुभे ॥ त्वद्भक्ति योगतस्त स्मिन् लिंगे स्थास्यामि सर्वदा ॥६० ॥ अद्यप्रभृति लोकेस्मिन्स्थानमेतन्ममाज्ञया ॥ रामक्षेत्र इतिख्यातं भविष्यति न संशयः ।६१। इमं गृहाण परशुं अजेयस्त्वं भविष्यसि ॥ इत्युक्त्वान्तर्दधे रुद्रोरामः

स्कन्दपुराण हिंगुलाद्र खण्डके उत्तर संहितामें लिखा है कि परशुराम क्षत्रियोंको मारनेका प्रतीज्ञा करके हिंगुलाद्रमें जाकर चौबीस वर्ष यप किये ॥५७॥ उनके तपसे प्रसन्न होकर शिव बोले कि हे राम ! नेत्र तोपानदीके तीरमें लिंग स्थापन करो तुम्हारे भक्तिसे उस लिंगमें साक्षात् रूपसे मैं रहूँगा। ॥५८॥५९॥ और आजसे यह स्थान रामक्षेत्र नामसे विख्यात होगा ॥ रामको परशु देकर रुद्र अन्तर्ध्यान हो गये उसी दिनसे उनका नाम परशुराम पड़ा ॥६०॥६१॥ पुनः वहाँ ही रेवाखण्ड अध्याय अठाईसमें लिखा है कि यमदग्नि पुत्र परशुरामने वहाँ लिङ्ग स्थापन किया जहाँ देवता गन्धर्व मुनि सिद्ध

परशुमाददे ॥६२॥ तत्रैव रेवाखण्डे अष्टादशाध्याये ॥ यामदग्न्येन रामेण तत्रदेवः प्रतिष्ठितः ॥ यत्रदेवाः सगन्धर्वामुनयः सिद्धचारणाः ॥ उपासते विरुपाक्षं यमदग्नि मनुत्तमम् ॥६३॥ तत्रैव आवन्त्य खण्डेत्रिंशेध्याये नारद वाक्यम् ॥ महाकालवनं क्षेत्रं क्षेत्राणामुत्तमं परम् ॥ तस्मिन्क्षेत्रे महालिङ्गं ब्रह्महत्या विनाशनम् ॥६४॥ जटेश्वरो महाभाग विद्यते सर्वसिद्धिदम् ॥ कृतावतार रामत्वं तत्रगच्छाविलम्बितम् ॥६५॥ जगामत्वरितंदेवि महाकालवने ततः ॥ लिङ्गमाराधयामास

लोग शिवका उपासना करते हैं और तुलसीदासजीने भी लिखा है कि गौर शरीर भूतिभील भ्राजे भाल विशाल त्रिपुड विराजे ॥६२॥ एकइसवार क्षत्रियोंको निक्षत्र कर हत्या छूटनेके लिए परशुरामने पुनः शिव पूजा किया है सो लिखा है स्कन्दपुराण आवन्त्यखण्ड अध्याय तीसमें नारदका वचन है कि हे परशुराम ! महाकाल वन सब क्षेत्रोंमें उत्तम क्षेत्र है और वहाँ ब्रह्म हत्याका नाश करनेवाला जटेश्वर नामक लिंग है ॥६३॥ वहाँ शीघ्र जाइए जाकर शिवका आराधन कीजिये तब हत्या छूटेगी ॥६४॥ बस सुनते ही के साथ राम वहाँ जाकर शिवलिङ्गका आराधना करने लगे तब हत्या छूटी ॥६५॥ पुनः वहाँ ही जचल लिङ्ग माहात्म्यके अध्याय उनतीसवेंमें

ततो हत्याद्वयंगताः ॥६६॥ तत्रैव अचल लिङ्गमाहात्म्ये उनत्रिंशेऽध्याये ॥ यच्चापिपातकं घोरं ब्रह्महत्या सहस्रकम् ॥ तत्पापं विलयं यान्ति रामेश्वर समर्चनात् ॥६७॥ महाभारते शान्ति पर्वणि उनपञ्चाशदध्यायेऽपि ॥ तोषयित्वा महादेवं पर्वतेगन्धमादने ॥ अस्त्राणि वरयामास परशुं चातितेजसम् ॥६८॥ सतेनाकुण्ठधारेण ज्वलितानलवर्चसा ॥ कुठारेण प्रमेयेण लोकेष्वप्रतिमो भवत् ॥६९॥ वाराह पुराणे ॥ यदि तुष्टो महादेव धनुर्वेदो ममानघ ॥ सांगोपांगोपनिषदः सरहस्यः प्रदीयताम् ॥ ७० ॥ स्कान्दे परशुरामम्प्रति

लिखा है कि घोर महापातक और हजारों ब्रह्म हत्या सब छूट जाते हैं रामेश्वरके पूजनसे ॥६६॥ महाभारत शान्तिपर्वके अध्याय उनचासवेंमें लिखा है कि परशुराम गन्धमादन पर्वतपर शिवका घोर तप करके तीक्ष्ण कुठारको प्राप्त किये जिस अस्त्रके प्रभावसे उनका सामना करनेवाला कोई नहीं हुआ ॥६७॥६८॥ वाराहपुराणमें लिखा है कि परशुराम शिवके प्रसन्न होनेपर कहते हैं कि हे महादेव ! यदि आप मेरे ऊपर प्रसन्न हैं तो सङ्गोपाग उपनिषदके साथ धनुर्वेद हमको दीजिये ॥६९॥ स्कन्दपुराणमें परशुरामके प्रति शिवका वरदान है कि आजसे तुम्हारे नामसे (रामेश्वर) शिव तीनों लोकमें विख्यात होंगे ॥७०॥

शिवस्य वरदानम् ॥ अद्यप्रभृति तेनाम्ना देवख्यातो भविष्यति ॥ तदा रामेश्वर इति त्रिषु लोकेषु गीयते ॥७१॥ इत्यादि वहुशः ॥ तथा नरनारायणावतारेणापिशिवाराधनं कृतम् ॥ तदुक्तं स्कान्दे रेवाखण्डे पञ्चनवतितमेऽध्याये ॥ नरनारायणाभ्यां हि कृतंवदरीकाश्रमम् ॥ स्थापितः शंकरस्तत्र लोकानुग्रह कारणात् ॥७२॥ महाभारते अनुशासनिके पर्वणि चतुर्दशाध्याये भीष्मपितामहवाक्यम् ॥ पूर्णवर्षसहस्रन्तुतप्तवानेषु माधवः ॥ प्रसाद्यवरद देवं चराचर जगद्गुरुम् ॥७३॥ तम्प्रसाद्यमहादेवं वर्ष्यां किलमाधवः ॥ युगे युगे तु कृष्णेन

दक्षने अपने दश कन्याओंका विवाह धर्मसे किये उसमें से एक कन्यासे विष्णु भगवान नर नारायण नामसे अवतार लिये ॥ स्कन्दपुराण रेवाखण्डके अध्याय पञ्चानवेमें लिखा है कि नर-नारायण दोनों बदरीकाश्रममें शिव लिंग स्थापन कर पूजन किये ॥७१॥ महाभारत अनुशासन पर्वके अध्याय चौदहमें भीष्म पितामह-का वचन है कि यही माधव वद्रीकाश्रममें तप करके चराचर जगद्-गुरु महादेवको प्रसन्न किये और युग-युगमें भी शिवका आराधन करते हैं ॥७२॥७३॥ जो सबसे पहले रहनेवाले विष्णु वही लोकोप-

तोषितोवैमहेश्वरः ॥७४॥ योऽसौनारायणो देवः पूर्वेषा-मपि पूर्वजः ॥ अजायतचकार्य्यार्थे पुत्रोधर्मस्य विश्व-कृत् ॥७५॥ सत्रपस्तीव्रमातस्थे शिशिरं गिरिमास्थितः ॥ षष्ठिवर्षसहस्राणि वायुभक्षोम्बुजेक्षणः ॥ तस्मैवरान-चिन्त्यात्मानीलकण्ठः पिनाकधृक् ॥७६॥ देवी भागवते पञ्चमाध्यायेऽपि ॥ नरनारायणश्चैव चेरतुस्तपउत्तमम् ॥ प्रालेयाद्रिं समागत्य तीर्थे वदरीकाश्रमे ॥ ७७ ॥ तथा

कार करनेके लिए नारायण रूपसे धर्मका पुत्र हुए ॥७४॥ और वद्रीकाश्रममें जाकर साठ हजार वर्ष वायु पीकर घोर तप किये उनके तपसे प्रसन्न होकर पिनाकी नीलकण्ठ उमापति शिव अनेक वर दिये ॥७५॥ देवी भागवत स्कन्द अध्याय पाँचमें लिखा है कि नरनारायण वद्रीकाश्रममें जाकर उत्तम तप किये ॥७६॥ नन्दके यहाँ कृष्णका अवतार शिव ही के अनुग्रहसे हुआ सो लिखा है स्कन्दपुराण ब्रह्मोत्तर खण्डके अध्याय पाँचमें कि उज्जयिनीपुरीमें महाकाल शिवका एक गोप वालकने आराधन किया एग्गारवाँ रुद्र हनुमान आविर्भाव हो सब गोपोंका राजा उसको बनाये ॥ और वर दिये कि इस गोपके आठवें पुस्तमें महायशस्वी नन्द नामक एक गोप होगा उसका पुत्र साक्षात् नारायण कृष्ण होंगे ॥ यह कथा बहुत विस्तारसे वहाँ लिखी है ॥७७॥ श्रीकृष्णचन्द्रका गुरु उपमन्यु ऋषि शिवभक्त हैं । महाभारतके अनुशासन पर्व अध्याय बारहमें भीष्म

श्रीकृष्णार्ज्जुनेनापि शिवाराधनं कृतम् कृष्णस्य नन्दगृहे अवतार कारणम् ॥ स्कान्दे ब्रह्मोत्तरखण्डे पञ्चमाध्याये ॥ एष पुण्यतमोलोके गोपानां कीर्तिवर्धनः॥ अस्य वंशेष्टमेभावी नन्दोनाम महायशाः ॥ प्राप्स्यसे तस्य पुत्रत्वं कृष्णो नारायणः स्वयम् ॥७८॥ तथा कृष्णगुरुः उपमन्युरपि शिवभक्तस्तदुक्तं महाभारते अनुसाशनिके पर्वणि ॥ यावच्छशाङ्क सकलामलवद्धमौलिर्नप्रीयते पशुपतिर्भगवान्महेशः ॥ तावज्जरामरणजन्मशताभिघातैर्दुःखानि देह विहितानि समुद्वहामि ॥७९॥ तथा देवीभागवते पञ्चमस्कन्दे पञ्चविंशे-

पितामहका वचन है कि (ऐश्वर्य्यं या दृशं तस्य जगद्योनेर्महात्मनः तदायं दृष्ट वान्साक्षात्पुत्रार्थे हरिरच्युतः) जगतका योनि महादेवका ऐश्वर्य्य पुत्रके लिये तप करते समय कृष्णने देखा है। महाभारत अनुशासन पर्वमें लिखा है कि जब तक भगवान् शशांकमौलि महेश नहीं प्रसन्न होते हैं तभी तक जन्म जरामरण आदि सैकड़ों देहजनित दुःख सहता हूँ ॥७८॥ देवीभागवत स्कन्द ५ अध्याय पचीसमें कृष्णका शिवाराधन लिखा है कि श्रीकृष्ण उपमन्यु ऋषिसे शिवदीक्षा ग्रहण कर पुत्रके लिए मुण्डी दण्डी होकर तप करने लगे ॥७९॥ और शिवमन्त्र जप शिव ध्यानपरायण हो दूसरे वर्षमें जलके

ध्याये ॥ श्रीकृष्णस्य शिवाराधनम् ॥ उपमन्युं गुरुं कृत्वा दीक्षां पाशुपतिंहरिः ॥ जजापपुत्रकामस्तु मुण्डी दण्डी बभूवह ॥८०॥ जजाप शिवमन्त्रन्तु शिवध्यान परोहरिः ॥ ८१ ॥ द्वितीयेतुजलाहारस्तिष्ठन्नेक पदा- हरिः तृतीये वायुभक्षस्तु पादांगुष्ठाग्रसंस्थितः ॥ षष्ठेतु भगवान्रुद्रः प्रसन्नोभक्ति भावतः ॥८२॥ महाभारते अनुशासनिके पर्वणि श्रीकृष्णम्प्रति जाम्वती वाक्यम् ॥ त्वया द्वादशवर्षाणि व्रतीभूतेन शुद्ध्यता ॥ आराध्यपशुभर्तारं रुक्मीण्या जनितः सुताः ॥ तथा ममापि तनयं प्रयच्छ मधुसूदन ॥८३॥

आहारसे रहकर एक पादपर खड़े रहें ॥८०॥ तीसरे वर्षमें वायु पीकर पादके अंगूठासे खड़े होकर रहे छठें वर्षमें उनका दृढ़ प्रेम देखकर शिव प्रसन्न हो वर दिये ॥८१॥ महाभारत अनुशासन पर्वमें कृष्णके प्रति जाम्ववतीने कहा है कि हे कृष्ण ! आपने बारह वर्ष तपसे शुद्ध होकर पशुपतिका आराधन कर रुक्मिणीको अनेक पुत्र दिये वैसे ही हमको भी पुत्र दीजिये, ऐसा उनका वचन सुनकर तपमें प्रवृत्त हो शिवको प्रसन्न किया तब साम्ब नामक पुत्र हमको हुआ ॥८२॥ शिवपुराण ज्ञानसंहिताके अध्याय चौसठमें कृष्णका वचन है कि मैं जब द्वारकामें गया तब शत्रुओंको जीतनेके इच्छासे शिवका

ततोऽहं तप आस्थाय तोषयामास शंकरम् ॥ दत्तो-भगवतापुत्र शाम्बोनाम ममानघ ॥८४॥ शिवपुराणेज्ञान-संहितायां चतुः षष्ठितमे ध्याये ॥ द्वारकायां मयागत्वा शत्रुणाश्वजिगीषया ॥ मयाह्याराधितः शम्भुः प्रसन्नः परमेश्वरः ॥ इष्टान्कामास्ततो दत्वा विलेविल्वेश्वरः स्थितः ॥८५॥ कौर्म्मे षड्विंशेध्यायेऽपि ॥ मार्कण्डेय उवाच ॥ कः समाराध्यते देवः भवतावर्मभिः सुभैः ॥ ब्रूहित्वं कर्म्मभिः पूज्यो योगिनांध्येय एव च ॥ ८६ ॥ श्रीकृष्ण उवाच ॥ भवता कथितं सर्वं तथ्यमेव न संशयः ॥ तथापि देवमीशानस्पूजयामि सनातनम्

आराधन किया तब शिव प्रसन्न होकर अनेक वर दिये वही कन्दरा-रूपी विलमें अभी तक विल्वेश्वर महादेव स्थित हैं ॥८३॥ कूर्मपुराण के अध्याय छब्बीसमें कृष्णके प्रति मार्कण्डेयका वचन है कि किस देवका आप पूजन करते हैं आप तो स्वयं योगियोंके ध्यान करने योग्य और पूजनीय हैं ॥८४॥ तब कृष्ण बोले कि आप जो कहते हैं सो सब ठीक है परन्तु ईशान सनातन शिवका मैं पूजन करता हूँ ॥८५॥ शिवके मायासे मोहित मनुष्य शिवको नहीं जानते हैं शिवका ध्यान करते-करते मैं शिवरूप हो गया हूँ परन्तु शिव हमारा मूल है इस बातको जनानेके लिए पूजन करता हूँ ॥८६॥ पद्मपुराण उत्तर

॥८७॥ नैव पश्यन्तिते देवं माययामोहिताजनाः ॥ ततश्चैवात्मनो मूलं ज्ञापयन्पूजयामितम् ॥८८॥ पद्म-पुराणे उत्तरभागे वेद साराख्य शिव सहस्रनाम्नि ॥ मार्कण्डेय उवाच ॥ त्वंविष्णुः कमलाकान्तः परमात्मा जगद्गुरुः ॥ तवपूज्यः कथं शम्भू रेतत्सर्वं वदस्वमे ॥८९॥ श्रीकृष्ण उवाच ॥ साधु-साधु मुनेपृष्टं हिता-यसकलस्य च ॥ अज्ञातं तत्रनास्त्येव तथापि चवदा-म्यहम् ॥९०॥ योदेवः सर्वदेवानां घेयः पूज्यः सदा-

भागके वेद साराख्य शिव सहस्रनाममें भी कृष्णसे मार्कण्डेयने पूछा है कि आप विष्णु कमलाकान्त परमात्मा जगद्गुरु फिर आप शिव पूजन क्यों करते हैं सो कहिये ॥८७॥ तब कृष्णजी बोले कि हे मुने ! शिव हमारा पूज्य हैं इस बातको आप भलीभाँति जानते हैं तथापि लोकोपकारके लिये आप पूछते हैं सो सुनिये मैं कहता हूँ ॥ ८८ ॥ जो सब देवोंका देव और सबसे पूज्य सदाशिव महादेव शंकर नामसे विख्यात उनमें ब्रह्माकी और हमारी भक्ति सर्वदा निश्चल रहती है ॥ ८९ ॥ नर अर्जुन हुए नारायण कृष्ण हुए अर्जुनने भी शिवका आराधन किया है ॥ भविष्य पुराणमें गुप्त वनवासके शमय भिल्लरूप धारी शिव युद्धसे प्रसन्न होकर अर्जुनको पाशुपतास्त्र देकर वर दिये कि महा-

शिवः ॥ सशिवः समहादेवः शंकरश्च निरञ्जनः ॥९१॥ तस्मान्नान्यः परोदेव स्त्रिषुलोकेषु विद्यते ॥ तस्मिन्भक्ति महादेवे ममधातुश्चनिश्चला ॥९२॥ अथअर्ज्जु-

भारतमें तुमारा जय हो ॥९०॥ वहाँ ही सञ्जयके प्रति धृतराष्ट्रका वचन है कि हे संजय ! अर्जुन देव देव पिनाकी महादेवको युद्धसे प्रसन्नकर पाशुपतास्त्र लेकर जय प्राप्त किये हैं अतः उनके जयका मैं प्रसंसा नहीं करता हूँ ॥९१॥ महाभारतके द्रोण पर्वमें लिखा है कि अर्जुनके पुत्र अभिमन्युको सब महारथियोंने अन्यायसे वध कर दिया और यह सम्वाद पाते ही अर्जुन महाशोक युक्त होकर हा पुत्र हा तात कहकर रोने लगे और वह उनका शोक क्रोधरूपमें परिणत हो गया प्रतिज्ञा किये कि कलह सूर्यास्तके पहले मैं जयद्रथको न मारूँ तो अग्निमें जलकर मर जाउँ ऐसी प्रतिज्ञा करके अपने छावनीमें जाकर चारपाइपर लेट गये और चिन्ता करने लगे कि जिसके रक्षामें कइ अक्षोहिणी फौज है उस जयद्रथको कैसे मारूँगा और न मारूँगा तो हमको आगमें जलना पड़ेगा तो सब महाभारत संग्राम ही समाप्त हो जायगा इस प्रकार सोचविचार करते-करते अर्जुनको नींद आ गई स्वप्नमें अर्जुनने देखा कि कृष्ण भगवान आ रहे हैं झट्से चारपाइसे उठकर खड़े हो गये और उनको आसन देकर बैठाये कृष्ण अर्जुनसे कहने लगे कि ॥ उस शिवदेवका तुम ध्यान जप करो हे भक्त ! इन्हींके प्रसादसे तुम अपने महत्वको प्राप्त करोगे ॥९२॥ ऐसा कहकर कृष्ण भगवान अर्जुनको साथ लेकर

नेनापि शिवाराधनं कृतम् ॥ भविष्यपुराणे गुप्त वन-वासे अर्ज्जुनम्प्रति शिवस्य वरदानम् ॥ इत्युच्यमाने नृपनन्दने तदाकीरातरूपी भगवान्महेश्वरः ॥ प्रसन्नता-माप तदाकिरीटीनं वरप्रदातुं विजयाय शत्रुम् ॥६३॥ महाभारते सञ्जयम्प्रति धृतराष्टः ॥ तमर्ज्जुनं देवदेवंपि-नाकिनंत्र्यम्बकं तोष्ययुद्धे ॥ आप्तवन्तं पाशुपतं महा-स्त्रं तदानाशंसे विजयायसञ्जय ॥६४॥ तत्रैव द्रोण पर्वणि अर्ज्जुनम्प्रति श्रीकृष्ण वाक्यम् ॥ तंदेवं मन-साध्यात्वाजप आस्स्वधनञ्जय ॥ तत्प्रसादात्त्वं भक्त

आकाशमें उड़े और किसी रमणीय स्थानमें पहुँचकर सनातन ब्रह्मका दोनों स्तुति करने लगे ॥६३॥ जिसको योगविद्याके जाननेवाले ज्ञानी पुरुष देखते हैं उसी अज सब कारणोंका कारण महादेवके शरणमें दोनों प्राप्त हुए ॥६४॥ महादेवजी एक तरफको इसारा किये उधर दोनों गये क्या देखा कि दो सर्प मुखसे अग्निज्वालाका फुत्कार करते खड़े हैं शिवका ध्यानकर उनके नामोंको स्मरण करते हुए दोनोंने दोनों सर्पको पकड़ लिया पकड़ते ही दो धनुष हो गये शिवके पास दोनों लेकर आये शिवके कण्ठसे एक ब्रह्मचारी निकले दोनों धनुषोंका प्रत्यंचा किये कृष्ण अर्जुन उसको बहुत गौरसे देखते रहे बाद वह ब्रह्मचारी दोनों धनुष दोनोंको दे दिया ॥ शिवसे

प्राप्स्यसितन्महत् ॥९५॥ वाशुदेवस्तुतद्दृष्ट्वा जगामशिरसा क्षितिम् ॥ पार्थेन सहधर्मात्मागृणन्ब्रह्म सनातनम् ॥९६॥ यंप्रपद्यन्ति विद्वांसः सूक्ष्माध्यात्मपदैषिणः ॥ तमजं कारणात्मानं जग्मतुः शरणंभवम् ॥९७॥ ततः पाशुपतं दिव्य मवाप्यपुनरीश्वरात् ॥ सहृष्ट रोमादुर्धर्षः कृतकार्य्यं ममन्यत् ॥९८॥ ये भक्तावरदं देवं शिवं रुद्रमुमापतिम् ॥ ये ह्यनन्येन भावेन सर्वेशं समुपासते ॥९९॥ इहलोके सुखम्प्राप्यते यान्ति परमां गतिम् ॥ नमस्कुरूष्वकौन्तेय तस्मैशान्तायवै सदा

पाशुपत अस्त्र पाकर कृष्णार्जुनका रोमांच हुआ और विश्वास हुआ कि हम लोग अपने कार्यको अवश्य सिद्ध करेंगे ॥९५॥ कृष्ण अर्जुनसे पुनः शिवका माहात्म्य कहने लगें जो भक्त अनन्यभावसे (शिवसे अन्य दूसरा नहीं है) इस भावसे वर देनेवाले शिवरुद्र उमापतिका उपासना करते हैं सो इस लोकमें सुख भोगकर उत्तम गतिको जानते हैं हे कौन्तेय ! उस शान्त सदाशिवको तुम नमस्कार करो ॥९६॥ वेद वेदांग उपनिषद पुराण वेदान्त आदि सबका गूढ़ निश्चय महेश्वर हैं ॥९८॥ ऐसे महादेव जो भगवान अज हैं उनका गुणानुवाद मैं नहीं कह सका हूँ ॥९९॥ सब जीवोंका ईश्वर तथा महान पुरुषोंका ईश्वर होनेसे महेश्वर उनका नाम हैं सब जगतरूप

॥२००॥ वेदाङ्गः सोपनिषदः पुराणाध्यात्मनिश्चयाः ॥ यदत्र परमं गुह्यं सहिदेवो महेश्वरः॥१॥ इदृशश्च महादेवो भूयांश्च भगवानृजः ॥ नहिसर्वैंमयासक्या वक्तुं भग-तोगुणाः ॥ २ ॥ महेश्वरश्च भूतानां महत्तामीश्वर श्वसः ॥ वहुभिवदुधा रूपैर्विश्वं व्याप्नोति वैजगत् ॥३॥ तस्यदेवस्यतद्वक्त्रं समुद्रेतदधिष्ठितम् ॥ वड-वामुखेति विख्यातं पिवत्तोयमयंहविः ॥४॥ पूजये-

होकर जगतमें व्याप्त रहते हैं ॥२००॥ उनका मुख समुद्रमें वाड़वा-नल नामसे विख्यात है जो जलरूप हविष्यका नित्य पान करता है ॥१॥ उनकी मूर्ति अथवा लिंगका जो पूजन करते हैं सो महा ऐश्वर्यको प्राप्त होते हैं ॥२॥ यह सब बातें स्वप्नमें हुआ तब तक सवेरा हुआ अर्जुनकी नींद खुल गई चारपाइपर एक धनुष पड़ा हुआ देखा उसको उठा लिये और हर्षित हुए मनमें निश्चय हुआ कि आज मैं अपना प्रतिज्ञा अवश्य पूरा करूँगा स्नान सन्ध्या शिवपूजन कर रणभूमिमें उपस्थित हुए युद्ध करने लगे तो क्या देखा कि किरीटको लगाये चन्द्रमा ललाटमें गदाशूल परशुको लिये आसुतोष देवदेवको आकाशमें देखते भये ॥३॥ और उनके शूलसे हजारों शूल निकलकर शत्रुओंपर गिर रहे हैं उसीसे शत्रु सब भाग रहे हैं सब लोग यह जानते हैं कि हमारे ही मारनेसे भागते हैं क्योंकि उनको और लोग नहीं देखते हैं ॥४॥ दक्ष राजाके यज्ञमें वीरभद्रजी

द्विग्रहंयस्तु लिङ्गञ्चापिमहात्मनः ॥ लिंगपूजयिता नित्यं महतिंश्रियमश्नुते ॥ ५ ॥ तत्रैव संग्रामे अर्ज्जुनवचनम् किरीटिनं गदिनं चन्द्रमौलिंपरश्वधिंशूलिनं देवदेवम् ॥ पश्याम्यहं आशुतोषं महान्तं सुरासुरैरा

सब देवोंका एक-एक अंग भंग किये और विष्णु भगवानसे युद्ध हुआ उस युद्धमें विष्णुका दोनों हाथ काटकर घुमाकर फेक दिये उत्कल देशमें समुद्रके किनारे जाकर गिरें वहाँ ही शिवका तप करने लगें शिव प्रसन्न होकर वर दिये कि दारूमयी मूर्ति (लकड़ीकी मूर्ति) होकर जगन्नाथ नामसे यहाँ तुम रहो और विश्वकर्माको आज्ञा हुई कि मन्दिर बनावो विश्वकर्माने मन्दिर बनाकर तैयार किया तब कश्यप ऋषि स्थापना करनेको आये तब जगन्नाथने कहा है कि सब कारणोंका कारण भुवनेश्वर शिवके स्थापनके बाद हमारा स्थापन होगा बाद उस मन्दिरमें भुवनेश्वरका स्थापना हुआ वहाँसे हटकर कुछ दूरपर दूसरा मन्दिर बना उसमें जगन्नाथ बैठे यह कथा स्कन्दपुराणके उत्कल खण्डमें लिखी है ॥५॥ दक्ष यज्ञमें शिवका भाग न होनेसे दाक्षायणी भगवतीने योगाग्निसे अपने शरीरको भस्म कर दिया उनका मृतक शरीर लेकर कालभैरवने पृथ्वीकी परिक्रमा की जहाँ जो अंग सतीका गिरा वही देवी पीठ हुआ जैसे कामाक्षामें योनि गिरी पटनामें पट गिरा भलुनी भवानीमें नेत्र गिरा ज्वालामुखीमें जिह्वा उसी तरह उत्कल देशमें ओष्ठ गिरा तब भैरवने वरदान दिया कि जगन्नाथाख्य भैरव तुमारा नाम हो और भैरवी

वृतं स्तुयमानम् ॥६॥ शूला-छूल सहस्राणि निष्यतं त्यस्यतेजसा ॥ तेनभग्नानरीन्सर्वान्मङ्गग्नान्मन्यतेजनाः ॥७॥ अथ जगन्नाथावतारेणापि शिवाराधनं कृतम् ॥ तदुक्त स्कान्दे उत्कल खराडे ॥ प्रत्युवाच जगन्नाथः पुनस्तं समहामुनिम् ॥ यदेतत्कारणं देवंकारणं भुवने-श्वरम् ॥ शिवे संस्थापिते विप्रमम सरथापन्नं भवेत् ॥८॥ तत्रैव ॥ उत्कले ओष्ठ पातस्तु विमलातत्र देवता ॥ तत्रयातो महारौद्रो जगन्नाथाख्य भैरवः ॥६॥ प्रवृत्ते भैरवी चक्रे सर्वेवर्णा द्विजातयः ॥

चक्रके भीतर जो आवेंगे सो द्विजाति हो जायगें और बाहर जानेसे फिर अपनी जाति हो जायगें यह कथा भी वहाँ ही लिखी है ॥६॥ ॥७॥ और जगन्नाथजीके हातेके भीतर विमला देवीका मन्दिर अभी तक वर्तमान है ॥ वाराहावतारने भी शिवपूजन किया है सो लिखा है स्कन्दपुराण नगरखराड वाराहोपाख्यानमें कि हिरण्याक्ष जब पृथ्वीको पातालमें ले गया तब ब्रह्माजी चिन्तामें पड़कर सोचते रहे कि अब क्या करना चाहिए तब तक विष्णु भगवान वराहरूपसे उनके नाकसे प्रगट हुए और जलके भीतर पातालमें हिरण्याक्षके पास गये हिरण्याक्ष ऐसा विकृत रूप देखकर रुद्राय नमः कहकर त्रिशूल उठाया ॥८॥ युगान्त अग्नि सदृश त्रिशूलको वराहके ऊपर

निवृत्ते भैरवी चक्रात्सर्वे वर्णाः पृथक् पृथक् ॥ तथा वाराहावतारेणापि शिवाराधनं कृतम ॥ तदुक्तं स्कान्दे नगरखण्डे वाराहोपाख्याने ॥ तन्तथा विकृतं दृष्ट्वा हिरण्याक्षः प्रतापवान् ॥ शूलंजग्राहवै क्रुद्धो कृत्वा रुद्रायवैनमः ॥१०॥ तंयुगान्तानल प्रख्यमहाः शूलमति प्रभे ॥ चिच्छेपदैत्यः संक्रुद्धो वाराहाय महात्मने ॥११॥ विभिन्न हृदयो व्यास मृत कल्पः पपा-

चलाया ॥६॥ बस उसी क्षणमें वाराह मर गये वाद ब्रह्माने पुनः महादेवको नमस्कार कर अपने कमण्डलु ज़लसे वाराहका संस्कार किये वाराह उठ खड़े हुए ॥१०॥ महेश्वर तेज (शिवतेज) वाराहमें प्रवेश हुआ तब शिवको नमस्कार कर उनका दिया हुआ सुदर्शन चक्रको स्मरण कर गणोंके साथ हिरण्याक्षको मार गिराये ॥११॥ नृसिंहावतारने भी शिवका आराधन स्तुति किये हैं लिंग पुराणमें लिखा है कि हिरण्यकशिपु नामक राक्षसको मारनेके हेतु स्तम्भ फारकर नृसिंह हुए और उसको मारनेके बाद ऐसा क्रोध किये कि मालूम हुआ कि अकालहीमें जगतका नाश हो जायगा तब श्रीमहादेवजीके पास देवता सब गये और कहें कि नृसिंहाग्निको जिस तरहसे हो शमन कीजिए शिव वीरभद्रको आज्ञा दिये कि विनयसे बलसे जैसे हो सके नृसिंहाग्निको शान्त करो आज्ञा पाते ही वीरभद्र वहाँ पहुँचे और हाथ जोड़कर बोले कि हे विश्वात्मन् ! जिस

तह ॥ महादेवं नमस्कृत्य ब्रह्मा संस्कारयत्तदा ॥१२॥ तेजो माहेश्वरं दिव्यं विवेश मधु सूदने ॥ संस्मारयत्तदाचक्रं नमस्कृत्यपिनाकिनम् ॥ चकार भस्मसादाशु जगामचगणै सह ॥१३॥ नृसिंहावतारेणापि शिवाराधनं कृतम् तदुक्तं लिंगपुराणे ॥ स्मारिते वीरभद्रेण नृसिंहः क्रोधमूर्च्छितः ॥ निपत्योधृत्यवेगेन तंगृहीतुं प्रचक्रमे ॥१४ अत्रान्तरे महाघोरं विपक्षभय कारकम् ॥ गगनव्यापि दुर्दर्शं शार्वं तेजः समुद्भवौ ॥ १५ ॥ वीरभद्रस्य तद्रूपं क्षणादेव न दृश्यते ॥ ततोहिरण्मयं रूपं नसौरं नाग्नि

कामके लिए आपका अवतार हुआ सो काम हो गया अब क्रोध शान्त कीजिए ऐसा वीर भद्रका वचन सुनते ही नृसिंहको और क्रोध हुआ तब वीरभद्रने कहा कि तुम संहारकर्ता पिनाकी शिवको नहीं जानते हो उन्हींके आज्ञासे मैं तुम्हारा गर्व शमनके लिए भेजा गया हूँ इतना सुनते ही नृसिंहने चाहा कि इनको पकड़, कर खा जायँ वस झटसे वीरभद्रने आकाशमें जाकर अपने रूपको अन्तरहितकर शिव तेजमय एक रूप धारण किये बिजुलीके सदृश चमकीला पाँखवाला सिंह युगान्तघन मेघके सदृश गरजने लगे ॥१२॥१३॥ १४॥१५॥ बस उनको देखते ही नृसिंहका सब बल विक्रम नष्ट हो गया जैसे सूर्यके प्रकाशमें खद्योत (जुगनू) के सदृश हो गये ॥१६॥

सम्भवम् ॥१६॥ तडिचन्द्रविकाशञ्च अभूतोपममैश्वरम् ॥ युगान्तघनघोषाढ्यं घनजीमूत निःश्वनम् ॥ १७ ॥ हरिस्तद्दर्शनादेव विनष्टवलविक्रमः ॥ बभूवोद्यत्सहस्रांशो रथखद्योतवद्भृशम् ॥१८॥ नीयमानः परवशो दीन-वक्त्रः कृतांजलिः ॥ तुष्टाव परमेशानं हरिस्तं ललि-ताक्षरैः ॥१६॥ मारणप्रयोगेशरभध्यानम् ॥ चन्द्रार्का-ग्निस्त्रिदृष्टिः कुलिशवरनखश्चंचलात्युग्रजिह्वा काली दुर्गा च पक्षौ हृदयजठरगो भैरवो वाड़वाग्निः ॥ उरुद्वौ व्याधिमृत्युः शरभवरखगश्चण्डवातातिवेगः संहर्ता सर्व

और शरभने अपने चंगुलमें पकड़कर नृसिंहको ले चले नृसिंह दीन मुख होकर स्तुति करने लगे ॥१७॥ तन्त्रोंमें मारण प्रयोगमें शरभका ध्यान लिखा है कि सूर्य चन्द्रमा अग्नि यही तीनों नेत्र हैं वज्रके सदृश नख लपलपाती हुई विशाल जिह्वा काली दुर्गा दोनों पाँख जाठरानल हृदय वाड़वाग्नि उदर व्याधि मृत्यु दोंनो जंघा प्रचण्ड वायुके सदृश वेग सब शत्रुओंको मारनेवाले पक्षिराज शरभ जय करें ॥१८॥ शरभोपनिषदमें लिखा है कि प्रभु वरेण्य (स्तुति करने योग्य) पिता जिसने ब्रह्माको प्रथम सृष्टिमें उत्पन्न कर वेद दिये और सब देवता-ओंका भी पिता वही है ॥१६॥ हमारा बल बढ़ानेवाला अन्तकालमें जगतका नाशक वही एक देव सबका शासक श्रेष्ठ है जो घोररूप

सत्रून् जयतुसशरभः सालवः पक्षिराजः ॥ २० ॥ शरभोपनिषदि ॥ प्रभुं वरेण्यं पितरं महेशं यो ब्रह्माणं विदधाति तस्मै ॥ वेदाश्च सर्वान्प्र हिणोतिचाग्रयं तम्वै प्रभुंपितरं देवतानाम् ॥२१॥ ममापि वीर्जजनकं देवमीड्यं योऽन्तकाले सर्वलोकान्सञ्जहार ॥ स एकः श्रेष्ठश्च सर्वशास्ता स एव वरिष्ठश्च योलोकमास्थायरूपं शरभाख्यं महेश्वरः नृसिंहं सर्व लोकहन्तारं सञ्जघान महावलः ॥२२॥ तथा वामनावतारेणापि शिवाराधनं कृतम् ॥ स्कान्दे व्याघ्र सरमाहात्म्ये ॥ विदर्भा-

शरभका धारण कर नृसिंहका गर्व शमन किये ॥२०॥ वामनावतारने भी शिवाराधन किया है सो स्कन्दपुराणके व्याघ्रसर माहात्म्यमें लिखा है कि विदर्भा पुरीमें जाकर वामनावतार विष्णुने शिवका स्थापन कर पूजन किये और शिवसे वर पाकर बलिको जय किये ॥२१॥ विदर्भापुरी बगसरका नाम है जेलके पास वामनेश्वर शिव हैं ॥ व्यासावतारने भी शिवका आराधन किया है देवी भागवतके षष्ठस्कन्दमें नारदके प्रति व्यासजीका वाक्य है कि हे नारद ! पुत्र प्राप्तिके हेतु मैं बहुत वर्षों तक शिवका उपासना किया। तब शुकदेव ज्ञानी पुत्र शिवने हमको दिया ॥२२॥ पुनः वहाँ ही स्कन्द प्रथम अध्याय दशमें लिखा है कि व्यासजी सौ वर्षतक भोजन छोड़कर

यां समागत्य विष्णुर्वामन रूपधृक् ॥ स्थापितः पूजितः शम्भुर्वरान्लब्ध्वा वलिर्जितः ॥२३॥ तथा व्यासावतारेणापि शिवाराधनं कृतम् तदुक्तं देवी भागवते षष्ठ स्कन्दे नारदम्प्रति व्यास वाक्यम् ॥ तपस्तप्तं मयायोग्रं पर्वते वहु वार्षिकम् ॥ पुत्रकामेन देवर्षे शंकरः समुपासितः ॥ ततोमया शुकः प्राप्तो पुत्रो ज्ञानवताम्बरः ॥२४॥ तत्रैव प्रथम स्कन्दे दशमाध्याये ॥ अतिष्ठत्सगता हारः सम्वत्सर शतंप्रभुः ॥ आराधयन्महादेवं तथैव च सदाशिवाम् ॥२५॥ स्कान्दे रेवाखण्डे सप्तनवतितमे ध्याये ॥ तपश्चचार विपुलं नर्मदा

महादेव और देवीकी आराधना की है ॥२३॥ स्कन्द पुराण रेवाखण्ड अध्याय सन्तानवेमें लिखा है कि व्यासजी नर्मदाके तीरमें बैठकर घोर तप किये गरमीके दिनोंमें पंचाग्नि वर्षामें वृक्षके नीचे जाड़ामें भिगा हुआ वस्त्र शरीरपर रखकर शिवका ध्यान करते हुए बैठे रहे सिद्धेश्वर नामक लिंग स्थापन कर सिद्धिको प्राप्त हुए ॥२४॥२५॥ कूर्म्मपुराण उत्तरार्द्ध अध्याय उनतीससे तीस तक अर्जुनके प्रति व्यासका वचन है कि हे अर्जुन ! अब घोर कलियुग आया अतः अब काशीमें जाकर रहूँगा ॥ २६ ॥ इस घोर कलिके पापोंका समन करनेवाला प्रायश्चित्त जीवोंके लिये

तटमाश्रितः ॥ ग्रीष्मेपञ्चाग्निमध्येतु वर्षासुस्थण्डिलेशयः ॥२६॥ साद्र्द्रवासा च हेमन्तेतिष्ठन्दध्यौ महेश्वरम् ॥ प्रथमं पूजयेत्तत्र लिङ्ग सिद्धेश्वराभिधम् ॥ यत्रसिद्धो-महाभागो व्यासः सत्यवती सुतः ॥२७॥ कौर्म्मे उत्त-रार्द्धे उनत्रिंशत्यध्याय मारभ्यपञ्च त्रिंशदध्याय पर्यन्तं वेदव्यासस्य काश्यांगमनम् ॥ तथा अर्ज्जुनम्प्रति काशी माहात्म्य कथनम् ॥ इदं कलियुगं घोरं सम्प्राप्तं पाण्डुनन्दन ॥ ततोगच्छामि देवस्य पुरींवाराणसीं शुभाम ॥२८॥ नान्यत्पश्यामि जन्तूना मुक्त्वा वाराणसींपुरीम् ॥ सर्व्वपापोपशमनीं प्रायश्चित्तं कलौयुगे ॥२९॥ शान्तोदान्तस्त्रिष वणं स्नात्वाभ्यर्च्च्य पिनाकिनम् ॥ भैक्ष्यासनोविशुद्धात्मा ब्रह्मचर्य्यं परायणः ॥३०॥ कदाचित्तत्रवसताव्यासे नामिततेजसा ॥

काशी छोड़ दूसरा नहीं है ॥२७॥ अर्जुनसे ऐसा कहकर व्यासजी काशी गये और ब्रह्मचर्य हो तीनों काल स्नान शिवका पूजन भिक्षा मांगकर भोजन कर रहने लगे ॥२८॥ एक रोज व्यासजी सब जगह घुम आये भिक्षा नहीं मिली ॥२९॥ तब व्यासको बड़ा क्रोध हुआ और उन्होंने चाहा कि यहांके रहनेवाले मनुष्योंको मैं शाप दूँ ॥३०॥

भ्रममाणेनभिक्षाम्वै नैवलब्धा द्विजोत्तमः ॥३१॥ ततः क्रोधावृत तनुर्नराणा मिहवासिनाम् ॥ विघ्नं सृजामि सर्वेषांयेन सिद्धिर्हिहीयते ॥३२॥ तत्क्षणात्सा-महादेवी शंकरार्द्ध शरीरिणी ॥ प्रादुरासीत्स्वयं प्रीत्या-वेषंधृत्वातु मानुषम् ॥३२॥ भोभोव्यास महाबुद्धे शप्तव्यानपुरीत्वया ॥ गृहाणभिक्षांमत्तस्त्वं मुक्त्वैवं प्रददौशिवा ॥३३॥ उवाच च महादेवी क्रोधनस्त्वंयतो-मुने ॥ इहक्षेत्रे नवस्तव्यंकृतघ्नोऽसियतः सदा ॥३४॥

वस उसी समय शिवकी अर्धांगनी भगवती मनुष्यका रूप धारणकर आविर्भाव हुई ॥३१॥ और भगवतीने कहा कि हे व्यास ! महाबुद्धि पुरीको शाप मत दो मैं भिक्षा देती हूँ लो ऐसा कहकर भिक्षा दे दी ॥३२॥ और भगवतीने कहा कि तुम क्रोधी और कृतघ्न हो अतः इस क्षेत्रमें मत रहो ॥३३॥

नोट—तुरत ही व्यासने उसपार रामनगरके पास व्यासपुरा ग्राममें व्यासेश्वर नामक लिंग स्थापन कर वहाँ ही रहने लगे चतुर्दशी अष्टमीको काशी आते हैं माघमासमें काशीके सब नरनारी वहाँ जाते हैं दर्शनके निमित्त—

भगवतीका ऐसी वाणी सुनकर व्यासजी ध्यानसे जान गये कि यह भगवती हैं हाथ जोड़कर प्रणाम कर स्तुति करने लगे ॥३४॥ और कहे कि चतुर्दशी अष्टमीको यहाँ आनेकी आज्ञा दिजिए भगवती

एवमुक्तः सभगवान् ध्यात्वाज्ञात्वा परांशिवाम् ॥ उवाच प्रणतोभूत्वास्तुत्वा च प्रवरैस्तवैः ॥३५॥ चतुर्द्दश्यामथाष्टम्यां प्रवेशंदेहि शङ्करी ॥ एवमस्तित्यनुज्ञाप्य देवीचान्तरधीयत् ॥३६॥ शिवपुराणेऽपि ॥ द्वीपेजातो यतोवालस्तेन द्वैपायन स्मृतः ॥ वेदशाखा विभजनाद्वेद व्यासः प्रकीर्तितः ॥३७॥ स्थापयामास पुण्यात्मा लिङ्गं व्यासेश्वराभिधम् ॥ यद् दर्शनाद्भवेद्विप्रानरोविद्या सुवाक्पतिः ॥३८॥ व्यासपुत्रेणापि शुकदेवेन शिवाराधनं कृतम् ॥ तदुक्तं देवीभागवते प्रथम स्कन्दे उनविंशेध्याये ॥ कैलाशशिखरे रम्येत्य-

एवमस्तु (वहुत अच्छा) कहकर अन्तर्ध्यान हो गई ॥३५॥ शिवपुराणमें भी लिखा है कि द्वीप (दियारा) में उत्पन्न होनेसे द्वैपायन नाम पड़ा और वेदोंका शाखा विभाग करनेसे वेदव्यास नाम हुआ ॥३६॥ पुण्यात्मा वेदव्यासने व्यासेश्वर नामक लिंग स्थापन किये जिसके दर्शनसे मनुष्य विद्वान होता है ॥३७॥ देवी भागवत स्कन्द प्रथम अध्याय उनइसमें लिखा है कि व्यासपुत्र शुकदेवने अपने पिता आदि सबका संग छोड़कर कैलाश पर्वतपर जाकर शिवका तप किये ॥३८॥ अप्सरा शुक सम्वादमें शुकदेवने कहा है कि तीर्थ तीर्थमें ब्रह्मवृन्द वृन्द वृन्दमें तत्वचिंतानुवाद वाद वादमें

क्त्वा सङ्गं पितुः शुकः ॥ ध्यानमास्थायविपुलं स्थितः सङ्ग पराङ्मुखः ॥३९॥ अप्सराशुक सम्वादेऽपि ॥ तीर्थे तीर्थे निर्मलं व्रह्मवृन्दं वृन्दे वृन्दे तत्वचिन्तानुवादः ॥ वादेवादे जायते तत्व वोधोवोधेवोधे भासते चन्द्रचूडः ॥४०॥ तथा मत्स्यावतारेणपि शिवाराधनं कृतम् ॥ तदुक्तं मत्स्यपुराणे मनुम्प्रति श्रीमत्स्यावतार वाक्यम् ॥ य एको विश्व मध्यास्ते प्रधानं जगतोहरः ॥ तस्या व्यक्तस्य यो भागः सोहं बिष्णुर्न संशयः ॥४१॥ भजामितं महादेवं सर्वकारणकारणम् ॥ तस्यैव वरदानेन कार्य्यं सर्वं कृतंमया ॥४२॥ कूर्म्मावतारेणापि शिवाराधनं कृतम् ॥ तदुक्तं कौर्मे ॥ बलं महेश्वरा-

तत्त्ववोध वोध वोधमें चन्द्र चूड़ ही भासमान होते हैं ॥३९॥ मत्स्यपुराणमें मनुके प्रति मत्स्यका वचन है कि सब जगतका नियम करनेवाले जो शिव हैं उनकी मायारूपा शक्तिके प्रथम भाग मैं विष्णु हूँ ॥४०॥ सब कारणोंका कारण जो शिव हैं उनका मैं भजन करता हूँ और उन्हींके वरदानसे सब कार्य मैंने किया है ॥४१॥ कूर्मपुराणमें कूर्मावतारका भी शिवाराधन लिखा है कि शिवका तप करके उनसे बल पाकर जगतके रक्षाके लिये राक्षसोंका वध किये ॥४२॥ कल्की अवतारने शिवाराधन किया है कल्कीपुराण अध्याय तीनमें कल्कीने

त्प्राप्य कूर्म्मरूपधरोहरिः ॥ रक्षणार्थञ्च देवानां संजघान निशाचरान् ॥४३॥ कल्की अवतारस्य शिवाराधनं स्तुतिश्च ॥ कल्की पुराणे तृतीयाध्याये ॥ कल्कीरुवाच ॥ गौरीनाथं विश्वनाथं शरण्यं भूतावासं वाशुकी कण्ठभूषम् ॥ त्र्यक्षं पञ्चास्यादि देवं पुराणं वन्दे सान्द्रानन्द सन्दोहदक्षम् ॥४४॥ शिव उवाच त्वंगारुड मिदं चाश्वं कामगं वहुरूपिणम् ॥ शुकमेनञ्च सर्वज्ञं मयादत्तं गृहाणभो ॥४५॥ सर्वशस्त्रास्त्र विद्वासंसर्ववेदार्थ पारगम् ॥ जयिनं सर्वभूतानां त्वां-वदिष्यन्ति मानवः ॥४६॥ अथब्रह्मणः शिवाराधनत्वं

शिवकी स्तुति की है कि गौरीनाथ विश्वनाथ शरण देनेवाले सब जीवोंमें रहनेवाले वाशुकी कण्ठभूषण तीन नेत्र आदि देव पुराण पुरुष आनन्दरूप शिवका मैं बन्दना करता हूँ ॥४३॥ स्तुतिसे शिव प्रसन्न हो वर दिंये गरुड़के अंशसे उत्पन्न अश्व कामग देते हैं और सर्वज्ञ एक शुकपक्षी देते हैं इसको ग्रहण करो ॥४४॥ सब शस्त्र अस्त्रके विद्वान सर्ववेदार्थ पारग सब जीवोंको जय करनेवाला तुमको सब कहेंगे ॥४५॥ ब्रह्माका शिवाराधन आगे लिखते हैं ॥ सौर उपपुराणमें लिखा है कि ब्रह्माको सृष्टि करनेके शक्ति विष्णुको दानवोंको मारनेकी शक्ति इन्द्रको राज्य करनेकी शक्ति शिव पूजा ही से मिली है ॥४६॥ नृसिंह

प्रदर्श्यंते ॥ तदुक्तं सौरे ब्रह्मणः सृष्टि कर्तृत्वं विष्णोर्दानवमदर्नम् ॥ स्वर्गाधिपत्यं इन्द्रस्य शिव पूजाविधेः फलम् ॥४७॥ नृसिंहोपपुराणे ब्रह्माणम्प्रति शंकर वाक्यम ॥ शृणुब्रह्मन्प्रवक्ष्यामि चिरायुर्लोमसोयतः ॥ सञ्जातः कर्म्मणायेन व्याधि मृत्यु विवर्जितः ॥४८॥ तस्मिन्नेकार्णवे घोरे सलिलौघपरिल्पुते ॥ कृतान्त भयनाशायस्तुतो मृत्युञ्जयः शिवः ॥४९॥ तस्य संकीर्तनान्नित्यं व्याधि मृत्यु विर्जितः ॥ तमेव कीर्तय ब्रह्मन् मृत्युंतेतुं न संशयः ॥५०॥ स्कान्दे आवन्त्य खण्डे अवन्तीक्षेत्र माहात्म्ये द्वितीयाध्याये सृष्टि हेतवे ब्रह्मणे शिवस्य वरदानं पुत्रत्वञ्च ॥ पुरात्वेकार्णवे

उपपुराणमें ब्रह्माके प्रति शिवका वचन है कि हे ब्रह्मा ? व्याधि मृत्युसे वर्जित दीर्घायु जिस कर्मसे लोमस ऋषि हुए सो अब मैं कहता हूँ सुनो ॥४७॥ एकार्णव घोर सब जलमय रहा उस समय मृत्युंजय शिवका स्तुति कर उन्होंने मृत्युको जीता ॥४८॥ मृत्युको जीतनेके हेतु उन्हीं मृत्युंजय शिवका तू भी स्तुति करो ॥४९॥ स्कन्दपुराण आवन्त्य खण्ड अवन्ती क्षेत्र माहात्म्य अध्याय दूमें लिखा है कि पूर्वकालमें देवता असुर गन्धर्व यक्ष राक्षस कोई नहीं रहा एकार्णव घोर उस समय महाकाल शिव सबका अन्तिम दशा

घोरेनष्टे स्थावर जङ्गमे ॥ न देवासुर गन्धर्वापिशा-
चोरगराक्षसा: ॥५१॥ तदैकोहि महाकालो लोकानु-
ग्रह कारणात् ॥ तस्थौस्थानान्यनेकानि काष्ठा स्वालो-
कयन्प्रभुः ॥५२॥ सृष्टयर्थं समहाकालः करेग्रामं प्रति-
ष्ठितम् ॥ दक्षिणस्यान्तुतर्जन्यां सममन्था विशोषितम्
॥५३॥ यज्ञेतदराडं सुदृढं सुवृत्तं सुहिररामयम् ॥
करेण ताडितस्तद्विवभूवद्विदलं महत् ॥५४॥ अधः
खण्डं स्मृताभूमिरुर्ध्वं द्यौस्तारकान्विता: मध्येभवत्तदा-
ब्रह्मा पञ्चवक्त्रश्चतुर्भुजः ॥५५॥ कुरुसृष्टिंमहाबाहो
विचित्रां मदनुग्रहात् ॥ इत्यु क्त्वान्तर्हितः कापिदेवो

करके वही रहे जो सबका अनुग्रह करनेवाले हैं ॥५०॥५१॥ कुछ
कालके वाद जब उनकी सृष्टिकी इच्छा हुई तब अपने हथेलीपर
तर्जनी अंगुलीसे मन्थन किये ॥५२॥ उस मन्थनसे सुवर्णका एक
भारी अण्डा उत्पन्न हुआ और उसको हाथसे मारा मारनेसे दो टुकड़ा
हो गया ॥५३॥ नीचेका टुकड़ा भूमि हुई ऊपरका टुकड़ा ताराओंसे
युक्त आकाश हुआ और बीचमें पाँच मुख चार भुजाओंसे युक्त
ब्रह्मा हुये ॥५४॥ महाकाल शिव ब्रह्माको आज्ञा दिये कि हमारे
अनुग्रहसे तुम विचित्र सृष्टि करो ऐसा कहकर शिव अन्तरध्यान हो
गये और उनके साथ ब्रह्मा नहीं जा सके ॥५५॥ शिवके आज्ञा

ब्रह्मा नजग्मिवान् ॥५६॥ प्रेर्यमाणोपिवै श्रष्टुं ब्रह्मा-देवमचिन्तयत् ॥ ब्रह्मणः स्तपसाहृष्टः प्रादाद्वेदंषडङ्ग-कम् ॥५७॥ लब्धेवेदेऽपि न चिरात्सृष्ठिं कर्तुं शशाक सः ॥ तपसातिष्ठदाभूयः समाराधयितुं भवम् ॥५८॥ नापश्यत्स यदादेवं तदातुष्टाव शंकरम् ॥ अन्तर्हित उवाचेदं ब्रह्मन्संयाच्यतांवरः ॥५९॥ सवव्रेमनसा पुत्रं भवं गौरव कारणात् ॥ यस्मान्मां मनसापुत्र चतुर्मुख समांहसे कस्मिंश्चित्कारणे नाहं तदा छेत्स्यामिते

देनेसे भी ब्रह्मा सृष्टि नहीं कर सके पुनः और शिवका ध्यान तप करने लगे तपसे प्रसन्न हो शिव शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरुक्त, छन्द, ज्योतिष, इन छः अंगोंके साथ चारो वेद दिये ॥५६॥ वेदके पानेपर भी जब ब्रह्मा सृष्टि नहीं कर सके तब पुनः तपसे शिवका आराधन करने लगे ॥५७॥ बहुत दिन तप करनेपर भी शिव नहीं प्रसन्न हुए तब स्तुति करने लगे स्तुतिसे प्रसन्न होकर प्रगट नहीं हुए आकाशवाणी हुई कि वर माँगो ब्रह्माने मन ही मन यह वर माँगा कि शिव हमारा पुत्र हों जिससे लोकमें हमारा प्रतिष्ठा हो अन्तर्यामी शिव ब्रह्माके मनका भाव समझ गये और कहे कि हे चतुर्मुख ! तूँ हमको अपना पुत्र बनाता है तो तुमारा पाँचवाँ शिर किसी कारणवस मैं काटूँगा ॥५८॥५९॥ क्योंकि अयाच्य वस्तुकी तुमने याचना की है और हमारे अंशसे उत्पन्न रुद्र तुम्हारा पुत्र होंगे ॥६०॥ शाप और वर

शिरः ॥६०॥ अयाच्यं याचितं यस्यान्ममांशोनील लोहितः ॥ रुद्रो भविष्यति सुतः सचतेहिंस्यति प्रभाम् ॥६१॥ लब्धाशाप वरावेवं पुत्र सृष्टिं चकारह ॥ ततः प्रवृत्तेसृष्टिस्तु श्रष्टुर्लोकपिता महान् ॥६२॥ तत्रैव अम्बिका खण्डे त्रयस्त्रिंशद ध्यायेऽपि ॥ शम्भुः प्राह वरंवत्सया च स्वेतिपितामह ॥ तं ब्रह्मा सृष्टिरत्यर्थं पुत्रत्वं मनसा ब्रवीत् ॥६३॥ सज्ञात्वा तस्य संकल्पं ब्रह्मणः परमेश्वरः ॥ मूढोयमिति संचित्यं प्रोवाचवरदः स्वयम् ॥६४॥ सचते पुत्रतांगत्वा मदीयोगणनायकः ॥ रुद्रो विग्रहवान्भूत्वा मूढंत्वां विनयि-

दोनों पाकर ब्रह्मा चुप बैठे उनके ललाटसे बालक रूपसे रुद्र प्रगट हुए और सृष्टिको बढ़ाये ॥६१॥ पुनः वहाँ ही अम्बिकाखण्डके अध्याय तैंतीसमें लिखा है कि शिव प्रसन्न हो ब्रह्मासे कहे कि वर माँगो ब्रह्माने सृष्टिके हेतु शिव हमारा पुत्र हों ऐसा वर माँगा ॥६२॥ परमेश्वर शिव ब्रह्माके मनका संकल्पको जानकर यह विचार किये कि ब्रह्मा मूढ़ है जो हमको पुत्र बनाता है परन्तु उनका नाम वरद है अतः वर दिये कि हमारे अंशसे उत्पन्न रुद्र पुत्ररूपसे उत्पन्न हो मूढ़ जो तुम हो सो तुम्हारा विनय करेंगे ॥६३॥६४॥ कूर्म्मपुराणमें भी लिखा है कि तीन नेत्रवाले शिव जटाओंसे शोभित

ष्यति ॥६५॥ कौर्म्मेऽपि ॥ ललाट नयनोदेवो जटा मण्डलमण्डल मण्डितः ॥ प्रसादं ब्रह्मणेकर्तुं आविरासीत्स्वयं प्रभः ॥६६॥ शिवपुराणे धर्मसंहितायां-सप्तविंशेध्यायेप्युक्तम् ॥ यतः सर्वसमुत्पन्नं निर्गुणा-त्परमात्मनः ॥ तदेव शिव सञ्ज्ञंवै वेदवेदान्तिनो विदुः ॥६७॥ उभयोर्वाद नाशार्थं यद्रूपं दर्शितंपुरा ॥ महादेवेतितं ख्यातं शिवाच्चनिर्गुणादिह ॥६८॥ तेन प्रोक्तोह्यहं रुद्रो भविष्यामि कपोलतः ॥ रुद्रोनाम सविख्यातो लोकानुग्रहकारकः ॥६९॥ तत्रैव वायु संहितायां पूर्वार्द्धे पञ्चविंशेध्याये ॥ तयापरमयाशक्त्या

ब्रह्माको वर देनेके लिये आविर्भाव हुए ॥६५॥ शिवपुराण धर्मसंहिता अध्याय सत्ताइसमें लिखा है कि जिस परमात्मा निर्गुणसे सब जगत उत्पन्न हुआ उसीका नाम शिव है ऐसा वेद वेदान्तके जाननेवाले कहते हैं ॥६६॥ ब्रह्मा विष्णु दोनोंका विवाद छोड़ानेके लिये जो लिंगरूपसे प्रकट हुए उनका नाम महादेव है ॥६७॥ लोकका अनुग्रह करनेवाले ब्रह्माके ललाटसे उत्पन्न हुए उनका नाम रुद्र है ॥६८॥ पुनः वहाँ ही वायुसंहिता पूर्वार्द्ध अध्याय पचीसमें लिखा है कि ब्रह्मा परमशक्तिके साथ शिवका हृदयमें ध्यानकर घोर तप किये अर्द्ध नारी-श्वर रूपसे शिव दर्शन दिये ॥६९॥७०॥ पुनः वहाँ ही अध्याय

भगवन्तं त्रिअम्बकम् ॥ संचिन्त्यहृदये ब्रह्माततापः परमं तपः ॥७०॥ तीव्रेण तपसातस्य युक्तस्य परमेष्ठिणः ॥ अर्द्धनारीश्वरो भूत्वा ययौदेवः स्वयंहरः ॥७१॥ तत्रैव एकविंशत्यध्याये ब्रह्माणम्प्रति पार्वती वाक्यम् ॥ सर्गादौभतोदेवा दुत्पत्तिः श्रूयतेयदा ॥ तदा प्रजानां प्रथमस्त्वंमे प्रथमजः सुतः ॥७२॥ यदा पुनः प्रजावृद्धयै ललाटाद्भवतोभवः ॥ उत्पन्नोभूत्तदात्वंमे गुरु स्वसुरभावतः ॥७३॥ यदाचायं गिरिन्द्रस्तेपुत्रोममपिता स्वयम् ॥ तदापितामहस्त्वंमे जातोलोकपितामहः ॥७४॥ यदीदृशस्य भवतो लोकयात्रा विधाधिनः वृत्तमन्तः पुरे-

एकइसमें ब्रह्माके प्रति पार्वतीका वचन है कि हे ब्रह्मा ? सृष्टिके आदिमें सब देवोंकी उत्पत्ति महादेवसे उससे तुम हमारा पहला पुत्र हो ॥७१॥ सृष्टिके हेतु जब तुम्हारे ललाटसे रुद्र प्रगट हुए उस नातेसे तुम हमारा श्वसुर हो ॥७२॥ और हिमालय पर्वतराज तुम्हारा पुत्र हैं उनका कन्या मैं हुई तो तुम हमारा पितामह हुए ॥७३॥ लोक व्यवहारमें तुमसे हमसे यही सम्बन्ध है परन्तु हमारा शिवका यह लीला है गूढ़ वृत्तान्त तुमसे मैं क्या कहूँ ॥७४॥ देवीभागवतमें लिखा है कि जिस समय ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र, सूर्य, चन्द्रमा, पृथ्वी, आकाश, शेषनाग इन्द्रादि देवता, कोई नहीं रहे उस समय वह

गूढं कथयिष्ये कथंपुनः ॥७५॥ देवीभागवतेप्युक्तम् ॥ नब्रह्मा नयदा विष्णुर्नरुद्रो न दिवाकरः ॥ तदासा प्रकृतिः पूर्णापुरुषेण परेणवै ॥ संयुताविहरत्येव युगादौ निर्गुणा शिवा ॥७६॥ पुनः स्कान्दे ॥ सृष्टेर्जाऽयंत्वजो दृष्ट्वा शिवं ध्यायन्सु विस्मितः ॥ आविर्भूयेन्द्रिया धीशा-शिवछाया विनिर्मिताः ॥७७॥ तथालैङ्गे षष्ठाध्याये ॥

पूर्णाप्रकृति परम शिवके साथ विहार करती रही ॥७५॥ स्कन्दपुराणमें लिखा है कि ब्रह्माकी सृष्टि जड़वत पड़ी रहे चल-फिर न सके तब ब्रह्माने शिवका ध्यान किया उनके ललाटसे रुद्र प्रगट होकर अपने छायासे एगारह रुद्रोंको बनाये वही एगारह रुद्र एगारह इन्द्रियोंका अधिपति हुए तबसे ब्रह्माकी सृष्टि चलने लगी ॥७६॥ लिंगपुराणके अध्याय छः में लिखा है कि एगारह रुद्रोंको देखकर ब्रह्मा बोले कि ऐसी सृष्टि मैं नहीं चाहता हूँ यह तो ईश्वर कोटिमें हैं मैं जीवोंकी सृष्टि चाहता हूँ जो जन्म ले मरे दुःख सुखमें लिप्त हो तब रुद्रने कहा कि मेरा किया वैसी नहीं होगी तुम करो तुम्हारी की हुई सृष्टि चेतन होगी ॥७७॥ स्कन्दपुराण ब्रह्मखण्ड सेतु माहात्म्य अध्याय चालिसमें लिखा है कि एक समय ब्रह्माने अपने देहसे एक कन्या उत्पन्न की और उसको देखकर मोहित हो उसके पीछे पीछे चले और कन्या भाग चली कुछ दूर जानेके बाद कन्या मृगी रूप हो गयी ब्रह्मा मृग रूप हो उसके पीछे पीछे चले तब तक शिव व्याध

ब्रह्मादृष्ट्वा ब्रवीदेनं मास्राक्षिरिहशीः प्रजाः ॥ स्रष्ट-
व्यानात्मनस्तु त्या प्रजादेवनमोस्तुते ॥७८॥ स्कान्दे
ब्रह्मखण्डे सेतुमाहात्म्ये चत्वारिंशेध्याये पुत्रीगमन
कामनया मृगरूपं ब्रह्माणं हरोजघान ॥ हरः पिनाक
मादाय व्याध रूपधरः प्रभुः ॥ त्रिपुरान्तक वाणेन
विद्धोऽसौन्यपतद्भूवि ॥७९॥ तस्यदेहात्तथोत्थाय मह-
ज्ज्योतिर्महाप्रभम् ॥ आकाशे मृगशीर्षाख्यं नक्षत्र
मभत्तदा ॥८०॥ आर्द्रानक्षत्र रूपी सन्हरोप्यनुजघान-
तम् ॥ अधुनापि मृगव्याधरूपेण त्रिपुरान्तकः ॥

रूप धारणकर मृगको त्रिपुर नाशक वाणसे मारा मृग मर गया ॥७८॥
बाद मृगके देहसे एक ज्योति निकलकर आकाशको चली जो मृग-
शिरा नक्षत्र हुई ॥७९॥ शिव आर्द्रा नक्षत्र हो उनको पुनः मारा जो
आज तक आकाशमें मृगशिरा नक्षत्रके पीछे आर्द्रा नक्षत्र व्याधरूपसे
देख पड़ता है ॥८०॥ कूर्म्मपुराणमें विष्णुके प्रति ब्रह्माका वाक्य
है कि क्षीरसमुद्रमें विष्णु शयन किए रहे उनके नाभिसे कमल हुआ
उसपर ब्रह्मा हुए ब्रह्मा कमलकी डंठी पकड़कर नीचे जलमें जाकर
विष्णुको उठाये विष्णुने पूछा कि तुम कहाँसे आए तब ब्रह्माने कहा
भीतर आप हैं बाहर मैं हूँ हमसे आपसे अतिरिक्त दूसरा कोई नहीं
है तब विष्णु भगवान शिवका ध्यान किये शिव आकाश मार्गमें देख

अम्बरे दृश्यतेस्पष्टं मृगशीर्षान्तिके द्विजाः ॥ ८१ ॥ तथाकौर्म्मे विष्णुम्प्रति ब्रह्मणो वाक्यम् ॥ क एष पुरुषोनीलः शूलपाणिस्त्रिलोचनः ॥ तेजोराशिरमेयात्मा समायाति जनार्दन ॥८२॥ श्री महाविष्णु रुवाच ॥ अयंहि भगवानीशः सर्वतत्वादिरव्ययः ॥ वेदांश्च प्रददौतुभ्यं सोयमायाति शंकरः ॥ ८३ ॥ अस्यैव च परांमूर्तिं विश्वयोनिं सनातनीम् ॥ वासुदेवाभिधानं मामवेहि प्रपितामह ॥ ८४ ॥ पुनः शिवपुराणे ज्ञान संहितायां द्वितीयाध्याये ॥ सृष्टिस्तु प्रथमं कुर्वन् प्रकृतिं नामनामतः ॥ तस्माद्ब्रह्मा प्रकृत्यास्तु उत्पन्नः सहविष्णुना ॥ ८५ ॥ ब्रह्मविष्णूचद्वावेतौ उद्भूतौ

पड़े तब ब्रह्मा विष्णुसे पूछते हैं कि वृषभपर चढ़े त्रिशूल लिये तेजका राशि कौन आ रहा है ॥८१॥ तब विष्णुने कहा कि यही भगवान ईश सब तत्त्वोंका आदि हैं जो पूर्वकालमें तुमको वेद दिये ॥८२॥ और इन्हींका परमामूर्ति विश्वयोनि सनातनी वासु वा नाम शक्ति मैं हूँ ॥८३॥ शिवपुराण ज्ञानसंहिता अध्याय दूमें लिखा है कि प्रथम सृष्टि प्रकृतिकी हुई उसी प्रकृतिके साथ ब्रह्मा विष्णु हुए ॥८४॥ शिवसे ब्रह्मा विष्णु दोनों उत्पन्न होकर सृष्टि पालन कल्प कल्पमें करते हैं और जगतको मोहमें डालते हैं ॥८५॥ शरीररहित महा-

शङ्कराच्चु तौ ॥ कल्पेकल्पेतु तत्सर्वं सृजतो मोहयन् जगत् ॥८६॥ अशरीरो महातेजा अनुत्पत्तिरजोनिजः॥ व्यामोहयति तत्सर्वं तेजसा मोहितं जगत् ॥ ८७ ॥ ब्रह्मादिस्तम्भपर्यन्तं निमिषश्च महेश्वरः ॥ निमिषं जीवितं सर्वं चन्द्रादीनां ग्रहैस ह ॥ ८८ ॥ चतुर्युगसहस्राणि विष्णोर्वैघटिका द्वयम् ॥ ८९ ॥ विष्णोर्वैदशसाहस्रं कलार्धंरौद्रमुच्यते ॥ रुद्रस्यार्बुद संख्यायां ततो ततो ब्रह्माक्षरं भवेत् ॥ ९० ॥ स्कान्दे ब्रह्मखण्डे शेतुमाहात्म्ये चतुर्विंशत्यध्याये ॥ प्रजापतेश्च विष्णोश्च

तेजस्वी महादेव अयोनिज उन्हींके बसमें सब जगत है ॥८६॥ ब्रह्मासे लेकर वृक्ष पर्वत सब जगत और सूर्य चन्द्र आदि देवोंका जीवन उनके एक पलमें है ॥८७॥ चारो युग हजार दफे बीत जानेपर ब्रह्माका एक दिन होता है और ब्रह्माका बारह लाख दिन गत हो जानेपर विष्णुकी दो घड़ी होती है विष्णुका दश लाख घड़ी व्यतीत होनेपर रुद्रका एक मिनट होता है और रुद्रका अर्बुद संख्या मिनट बीतनेपर एक ब्रह्माक्षर (पल) होता है ॥८८॥८९॥ स्कन्दपुराण ब्रह्मखण्ड शेतु माहात्म्य अध्याय चौबीसमें लिखा है कि पूर्व कालमें ब्रह्मा विष्णुमें झगड़ा हुआ ब्रह्माने कहा कि इस जगतका कर्ता मैं हूँ दूसरा नहीं है ॥९०॥ तब नारायण हँसकर बोले कि यज्ञरूप नारायण

बभूव कलहः पुरा ॥ अहमेव जगत्कर्ता नान्यः कर्ताऽस्ति कश्चन ॥६१॥ तदा नारायणः प्राहप्रसन्द्विजपुङ्गवाः ॥ अहमेवजगत्कर्त्ता यज्ञोनारायणो विभुः ॥ ॥६२॥ विवादं कुर्वतोरेवं ब्रह्मविष्णोर्जयैषिणो ॥ देवानां पुरतस्तत्र वेदाश्चत्वार आ गताः ॥६३॥ त्वं विष्णो न जगत्कर्ता नत्वं ब्रह्मन् प्रजापते ॥ किं त्वीश्वरो जगत्कर्ता परात्परतरो विभुः ॥ ६४ ॥ सर्वदेवाभिवन्द्योहि साम्बः सत्यादि लक्षणः ॥ एवं समीरितम्वेदैः श्रुत्वा वाक्यं शुभाक्षरम् ॥६५॥ ब्रह्माविष्णुस्तदा तत्र प्रोचतुर्द्विजपुंगवाः ॥ पार्वत्यालिङ्गितः शम्भुर्मूर्तिमान् प्रम-

विभुकर्ता मैं हूँ ॥६१॥ बहुत दिन तक दोनोंमें ऐसा ही विवाद होता रहा तब तक चारो वेद मूर्तिरूप होकर बोला कि ॥६२॥ हे ब्रह्मा विष्णु ! तुम दोनों जगतका कर्ता नहीं हो ईश्वर (शिव) परात्पर विभु जगतका कर्ता है ॥६३॥ जो सब देवोंसे पूज्य अर्द्धनारीश्वर सत्य ज्ञान अनन्त एतादृश लक्षणोंसे युक्त है ऐसा वेदोंका वचन सुनकर ब्रह्मा विष्णु बोले कि ॥६४॥ काम क्रोध आदिसे युक्त पार्वतीके साथ क्रीड़ा करते हैं तो वह सर्वसंग विवर्जित परब्रह्म कैसे हो सकते हैं ऐसा दोनोंका वचन सुन फटसे ॐकार मूर्तिरूप होकर कहने लगा ॥६५॥६६॥ पार्वतीसे भिन्न होकर शिव क्रीड़ा नहीं करते वे

थाधिपः ॥९६॥ कथं भवेत्परब्रह्म सर्वसङ्गविवर्जितः ॥ ताभ्यामितीरिते तत्र प्रणवः प्राह तौ तदा ॥ ९७ ॥ असौशम्भुर्महादेवो पार्वत्त्यास्त्वातिरिक्तया ॥ संक्रीड़ते कदाचिन्नो किन्तुस्वात्मस्वरूपया ॥ ९८ ॥ ब्रह्मन्नयं सृष्टिकालेत्वां नियुक्ते रजोगुणैः ॥ सत्वेन रक्षणोविष्णुं त्वां प्रेषयति केशव ॥९९॥ तमसा कालरुद्राख्यं संप्रेषयति संहृतौ ॥ अतः स्वतन्त्रता विष्णो र्युवयोर्नास्ति कश्चन ॥४००॥ कर्तानास्यास्ति रुद्रस्य नाधिको स्माच्च विद्यते ॥ न तत्समोऽपि लोकेषु विद्यते शतशस्तथा ॥ ॥ १ ॥ इत्युक्तं प्रणवेनाथ श्रुत्वा ब्रह्माच केशवः ॥

दोनों वस्तुतः एक ही हैं देखने मात्रको दो हैं ॥९७॥ हे ब्रह्मा ! सृष्टिके आदिमें रजोगुणसे तुमको उत्पत्ति कर सृष्टि करनेकी आज्ञा दी और सतोगुणसे विष्णुको उत्पत्ति कर रक्षक बनाये ॥९८॥ और तमोगुणसे कालरुद्रको बनाकर संहार कर्म्ममें प्रेरणा किये अतः तुम सब स्वाधीन नहीं हो ॥९९॥ और उनका कर्ता उनसे अधिक वा समान दूसरा नहीं है ॥४००॥ ऐसा ॐकारका वचन सुननेपर भी शिव मायासे मोहित ब्रह्मा विष्णु दोनोंका अज्ञानता नहीं छूटा ॥१॥ तब तक ब्रह्माने आकाशमें अनन्त सूर्यके सदृश प्रकाश युक्त ज्वाजल्यमान पाँच मुख युक्त शिवको देखा ॥२॥ देखकर ब्रह्मा

मायया मोहितौ शम्भोर्नैवाज्ञान मुमुञ्चताम् ॥ २ ॥ एतस्मिन्नन्तरे ब्रह्मा ददर्शसहाद्भुतम ॥ अनन्तादित्य संकाशं ज्वलन्तत्पञ्चमं शिरः ॥ ३ ॥ दृष्ट्वा श्रष्टा तदाब्रह्मावभाषे परमेश्वरम् ॥ वेदाहं त्वां महादेव ललाटान्मे पुराभवान् ॥४॥ विनिर्गतोऽसि शम्भोत्वं रुद्रनामाममात्मजः ॥ इति गर्वेण संयुक्तं वचः श्रुत्वा महेश्वरः ॥ कालभैरवनामानं पुरुषं प्राहिणोत्तदा ॥ ॥५॥ ततस्तत्पञ्चमं वक्त्रं भैरवः प्राछिनद्रुषा ॥ ततो ममार ब्रह्माऽसौ कालभैरवहिंसितः ॥ ६ ॥ ईश्वरस्य प्रसादेन प्रपेदेजीवनं पुनः ॥ लेभे माहेश्वरं ज्ञानं महादेव प्रसादतः ॥ ततस्तुष्टाव गिरिशं वरेण्यं वरदं

बोले कि तुमको मैं जानता हूँ हे महादेव ! पूर्वकालमें रुद्र नामसे तूँहींने हमारे ललाटसे पुत्र हुए ॥ ब्रह्माका ऐसा अभिमानयुक्त वचन सुनकर शिव कालभैरव नामक गणको आज्ञा दिये कि ब्रह्माका पाँचवाँ शिर काट लो ॥३॥४॥ आज्ञा पाते ही भैरव ब्रह्माका पाँचवाँ शिर काट लिये ब्रह्मा मर गये ॥५॥ पुनः देवताओंके स्तुतिसे प्रसन्न होकर शिवने ब्रह्माको जिलाया अब ब्रह्माको शिवज्ञान प्राप्त हुआ स्तुति करने लगे ॥६॥ देवी भागवत स्कन्द सात अध्याय दूमें लिखा है कि जगत कर्ता ब्रह्मा विष्णुके नाभि कमलसे हुए सो भी दश हजार वर्ष

शिवम् ॥७॥ देवी भागवते सप्तमस्कन्दे द्वितीया-ध्याये ॥ तपस्तप्त्वा सविश्वात्मा वर्षामयुतं पुरा ॥ सृष्टिकामः शिवं ध्यात्वा प्राप्यशक्ति रनुत्तमाम् ॥ पुत्रानुत्पादयामास मानसाञ्छुभ लक्षणान् ॥ ८ ॥ अथ इन्द्रस्य शिवराधनम् ॥ स्कान्दे केदारखण्डे सप्तमाध्याये ॥ वृहस्पति रुवाच ॥ तपसा तेन महता अजेयो वृत्रमुच्यते ॥ तस्माच्छम्भुं समभ्यर्च्य प्रदोषेप्य-धुनाऽधुना ॥ जहिवृत्रं महादैत्यं देवानां कार्यसिद्धये॥ ॥९॥ गुरुणा कथितं सर्वं तच्चकार शतक्रतुः ॥ तेनैव-च सहायेण इन्द्रोयुद्ध परायणः ॥१०॥ तत्रैव षड्नवति

शिवका तप करके मानस पुत्रोंको उत्पन्न किये ॥७॥ देवराज इन्द्रने भी शिवाराधन किये हैं स्कन्दपुराण केदारखण्ड अध्याय सातमें इन्द्रके प्रति वृहस्पतिका वचन है कि हे देवराज ? वृत्रासुर तपस्या करके बहुत वली हुआ है तुम उसको पराजय नहीं कर सकते हो अतः तूँ भी नित्य प्रदोषकालमें शिवका पूजनकर बल प्राप्त करो तब मारोगे ॥८॥ ऐसा वृहस्पतिका वचन सुनकर इन्द्र शिवका तपकर बली हो वृत्रकी मारा ॥९॥ पुनः वहाँ ही अध्याय छानवेमें लिखा है कि वृत्र वध पाप छूटनेके लिये इन्द्रने लिंग स्थापन किया है ब्रह्महत्या छूटनेके निमित्त देवराज इन्द्र कपालेश्वर नामक लिंगका

तमेध्याये वृत्रवधपापशान्त्यर्थं इन्द्रेण पुनः शिवस्थापनं कृतः ॥ इन्द्रेण स्थापितः पूर्वं एषदेवो द्विजोत्तमाः ॥ कपालेश्वर सञ्ज्ञस्तु ब्रह्महत्या विमुक्तये ॥ ११ ॥ तत्रैव केदारखण्डे प्रथमाध्याये ॥ अमरावत्यां सुप्रतिष्ठं अमरेश्वर सञ्ज्ञकम् ॥ वरुणेश्वरञ्च वारुण्यां याम्यां कालेश्वरं विभुम् ॥ १२ ॥ निऋृतेश्वरञ्चनैऋृत्यां वायव्यां पावनेश्वरम् ॥ केदारं मृत्यु लोकेच तथैव अमरेश्वरम् ॥१३॥ शिवधर्मोपपुराणेऽपि ॥ शक्रोऽपि

स्थापन करके पूजन किये ॥१०॥ पुनः वहाँ ही केदारखण्डके अध्याय पहलामें लिखा है कि अमरावतीपुरीमें इन्द्रने अमरेश्वर नामक लिंग स्थापन किये वरुण लोकमें वरुणेश्वर यम लोकमें कालेश्वर निऋृ लोकमें निऋृतेश्वर वायु लोकमें पावनेश्वर मृत्युलोक में केदारेश्वर देवलोकमें अमरेश्वर नामक लिंग स्थापन किये हैं ॥ ११॥ शिवधर्म उपपुराणमें लिखा है कि देवराज इन्द्र मणिका लिंग नित्य पूजन करते हैं जिससे इन्द्रत्वपद पाये ॥१२॥ यमराज पंगुत्व छूटनेके निमित्त शिव पूजन किये हैं स्कन्दपुराण प्रभासखण्ड अध्याय बारहमें पार्वतीके प्रति शिवका वचन है कि हे प्रिये ! यमराज दश हजार वर्ष लिंग पूजनकर हमारा तप किये तब मैं प्रसन्न हो सैकड़ों वर उनको दिया जो यमेश्वर नामसे लिंग आज तक वहाँ वर्तमान है ॥१३॥ पुनः वहाँ ही नगर खण्डमें लिखा है कि एक समय

देवराजेन्द्रो लिङ्गं मणिमयं शुभम् ॥ भक्त्या पूजयते नित्यं तेन शक्रत्व मासवान् ॥१४॥ यमेनापिं पंगुत्व-निवृत्यर्थं शिवपूजनं कृतः ॥ तदुक्तं स्कान्दे प्रभास-खण्डे द्वादशाध्याये ॥ पार्वतिम्प्रति शिवः ॥ वर्षाणा-मयुतं साग्रं लिङ्गं पूजितवान्प्रिये ॥ तुष्टश्चाहं ततस्तस्य वराणाञ्च शतं ददौ ॥ अद्यापि तत्र देवेशी यमेश्वर इति स्मृतम् ॥१५॥ तत्रैव नगरखण्डेऽपि ॥ आत्मानं सम्यगुत्सृज्य मुक्तिरेव प्रयास्यसि ॥ एवमुक्त्वा स भगवान् गतश्चादर्शनं हरः ॥१६॥ तथाचन्द्र सूर्या-दिदेवाना मुत्पत्तिः शिवेनैव कृतम् ॥ तदुक्तं शिवर-

धर्मराजको माण्डव्य ऋषिने शाप दिया कि शूद्र योनिमें तुम्हा जन्म हो इस शापसे भयभीत हो धर्मराजने शिवका पूजन बहुत दिन तक किये शिव प्रसन्न होकर वर दिए कि विदुर नामसे उत्पन्न होकर ज्ञानी धर्मात्मा होकर मुक्त हो जावगे ॥१४॥ शिवरहस्य अंश सातमें लिखा है कि शिवभक्त सब ऋषि अत्रि मुनिसे जाकर बोले कि आपने बहुत दिनो तक शिवका पूजन किया है तब आपको ऐसा उत्तम पुत्र मिला है अतः इसका नामकरण कीजिए मुनियोंकी आज्ञा पाकर अत्रिने नाम रखा ॥१५॥ सोमके प्रसादसे यह पुत्र हुआ है अतः इसका नाम 'सोम' रखता हूँ उमाके साथ शिवको सोम सकते हैं ॥१६॥ पुनः

हस्ये सप्तमांशे ॥ ततोऽत्रिंतुष्टुवुः प्रित्या मुनयः शंकरार्चकाः ॥ शम्भुराराधितः सम्यक् त्वयात्रात्रेमुनीश्वर ॥ १७ ॥ शिवप्रसादलब्धोयं पुत्रः स्तवसुरेष्टदः ॥ विना शिवप्रसादेन पुत्रः कुत्रेदृशः प्रभोः ॥ चकार नामकरण मुनिना माज्ञया मुनिः ॥१८॥ सोमप्रसादलब्धस्य सोम इत्येवधीमतः ॥ उमया सहितो देवः सोम इत्यभिधीयते ॥१९॥ पुनस्तत्रैव ॥ अग्नेश्चजनिता सोमो नान्योऽस्य जनिताध्रुवम् ॥ सूर्य्याणां जनिता सोमो द्वादशानामपि प्रभो ॥ २० ॥ चन्द्रस्य

वहाँ ही लिखा है कि अग्निका जन्मदाता सोम हैं सूर्य और सूर्यके बारहों कलाओंका जन्म देनेवाला सोम हैं ॥१७॥ चन्द्रमा और उनके सोलहों कलाओंका भी जन्म देनेवाला सोम हैं इन्द्र, यम, वरुण, विष्णु, ब्रह्मा वायु आदि सब देवोंका जन्मदाता सोम (शिव उमा) है ॥१८॥ भविष्य पुराणके वाह्मय पर्वमें लिखा है कि देवताओंकी माता अदितने गर्भ धारण किया एक हजार वर्षके बाद भर्ग (शिव) तेज प्रवृत्त हुआ तब सूर्य उत्पन्न हुए ॥१९॥ स्कन्द पुराणके प्रभास खण्डमें अध्याय एकइसमें लिखा है कि दक्षके शापसे चन्द्रमाको छई रोग हुआ तब चन्द्रमाने दक्षसे प्रार्थना किया दक्षने कहा कि देवता असुर कोई नहीं इस रोगसे तुमको बचा सकता एक

जनिता सोमः कलानां जनितास्तथा॥ जनिता इन्द्रस्य सोमो यमस्य वरुणस्य च॥ विष्णोश्चजनिता सोमो ब्रह्मणः पवनस्य च॥२१॥ भविष्यपुराणे ब्राह्मय पर्वे एकशतअष्टपञ्चाशत्यध्याये॥ आदितिर्देवमाता च तं गर्भं निदधे स्वयम्॥ पूर्णे वर्षे सहस्रे तु प्रवृत्तो गर्भ उत्तमः॥२२॥ स्कान्दे प्रभासखण्डे एकविंशत्यध्याये॥ दक्षशापाभिभूतः क्षयरोगयुक्तश्चन्द्रः प्रार्थितस्तदादक्षः प्राह॥ असुरांश्चसुराश्चैव ये चान्ये यक्षराक्षसाः॥ सर्वेऽपिशक्तानत्रातुं वर्जयित्वा महेश्वरम्॥२३॥

शिवको छोड़कर अतः उग्र तपकर शिवका आराधना करो॥२०॥ पुनः वहाँ ही अध्याय बाइसमें लिखा है कि ऐसा दक्षका वचन सुनकर दक्षिण समुद्रके तीरमें जाकर तप करने लगे और शिवसे प्रार्थना किये कि हे देवदेव! महादेव क्षईयापरोगी मैं हूँ मेरा रक्षा किजिए शिव प्रसन्न होकर वर दिये कि पन्द्रह दिनमें जो क्षय होगा सो पन्द्र दिनमें पुनः बढ़ जायगा॥२१॥ पुनः वहाँ हो प्रभास खण्डके अध्याय छियालिसमें लिखा है कि बुधने बुधेश्वर नामक लिंग स्थापन कर पूजन किये॥२२॥ शिव पार्वतीसे कहते हैं कि हे देवी! देवगुरु और शुक्राचार्यका स्थापित लिंगका दर्शन करना जहाँ शुक्राचार्यने मृत्युसंजीवनी विद्या शिवसे प्राप्त किया है॥२३॥२४॥

तत्रैवद्वाविंशेध्याये ॥ स गत्वा दक्षिणं तीरं सागरस्य समीपतः ॥ प्रसादयामास विभुं प्रसन्नेनान्तरात्मना ॥ रेक्षमां देवदेवेश क्षयिनं पापरोगिणम् ॥ २४ ॥ तत्रैव प्रभासखण्डे षट्चत्वारिंशत्यध्यायमारभ्य एकपञ्चाशद-ध्यायपर्यन्तं नवग्रहाणां स्थापितलिङ्गानि ॥ लिङ्गं महाप्रभावन्तु बुधेश्वर इति श्रुतम् ॥ बुधेन तत्रदेवेशी तत्रतप्तं महातपः ॥ २५ ॥ ततो गच्छेन्महादेवि देवं गुरुनिषेवितम् ॥ संस्थितं तु महल्लिङ्गं देवाचार्य प्रति-ष्ठितम् ॥२६॥ ततो गच्छेन्महादेवि लिङ्गं शुक्रप्रति ष्ठितम् ॥ यत्र संजीवनीं प्राप्तो विद्यांरुद्रप्रभावतः ।२७।

उसके बाद शनिका स्थापित शनैश्चरेश्वर नामक लिंग महापातकका नाश करनेवाला है उसका दर्शन करके राहु और केतुके स्थापित लिंगका दर्शन करना ॥२५॥ वहाँ ही प्रभास खण्डके अध्याय छपनमें कुवेरने लिंग स्थापन किया है ॥ कुवेरने शिवलिंग स्थापन कर एक हजार वर्ष पूजन और तप करके धनदत्व प्राप्त किया है ॥२६॥ वहाँ ही रेवाखण्डके अध्याय एक सौ पचासमें लिखा है कि कामदेवने कुसुमेश्वर नामक लिंग स्थापन कर तप किये हैं जो तीनो लोकमें विख्यात है ॥२७॥ पुनः वहाँ ही अध्याय एकाशीमें लिखा है कि एक समय शिव पार्वती जाते रहे भृगु मुनि तप करते रहे पार्वतीने

शनैश्चरेश्वरं नाम महापातक नाशनम् ॥ ततो गच्छे-न्महादेवि लिङ्गं केतु प्रतिष्ठितम् ॥२८॥ तत्रैव प्रभास-खण्डेषट्पंचाशत्यध्याये कुवेरेलिङ्गस्थापनं कृतः ॥ धनदत्वञ्चसम्प्राप्तो यत्रतप्त्वा महातपः ॥ स्थापितं विधिवत्पूज्य लिंगं वर्ष सहस्रकम् ॥ २६ ॥ तत्रैव रेवाखण्डे एकशतपञ्चाशदध्याये कामदेवेनशिव स्थापनं कृतः ॥ कामेनस्थापितो देवः कुसुमेश्वर संज्ञितः ॥ ख्यातः सर्वेषु लोकेषु देवदेवः सनातनः ॥ ३० ॥ तत्रैव एकाशीतितमेध्याये भृगुणापिशिवाराधनं कृतः ॥

शिवसे कहा कि हे महादेव ! आपका नाम आशुतोष है अतः प्रसन्न होइए शिवने कहा कि इनका क्रोध अब हीं नहीं निकला है ऐसा कहकर नन्दीको आज्ञा दिये कि इस मिट्टीके टीलेको अपने सिंहसे उखाड़ दो आज्ञा पाते ही नन्दी उनको गंगामें फेक दिये भृगु क्रोधसे दोनों आँखें लालकर शाप देनेको तैयार हुए तब तक शिव प्रगट हो गये भृगु शिवकी स्तुति करने लगे वृषखात नामसे तीर्थ विख्यात हुआ ॥२८॥२६॥ वहाँ ही महेश्वर खण्डके अन्तर्गत केदार खण्डमें हिमवान प्रति नारदका वचन है कि हे पर्वतराज ! शिवका गोत्र कुल ब्रह्मा आदि देवता नहीं जानते हैं दूसरा क्या जानेगा उनके लिंगका अन्त ले आने ब्रह्मा उपर गयें विष्णु नीचेको गये

तत्र तीर्थेषु विख्यातं वृषखातमितिस्मृतम् ॥ भृगुणा तत्रराजेन्द्र तपस्तप्तुं पुराकिल ॥ ३१ ॥ ततो दृष्ट्वा च तं शम्भुं भृगुश्रेष्ठस्त्रिलोचनम् ॥ जानुभ्यामवनीं गत्वा इदं स्तोत्र मुदीरयन् ॥३२॥ तत्रैव महेश्वरखण्डान्तर्गत केदारखण्डे हिमवन्तं प्रति नारदवाक्यम् ॥ अस्य गोत्रं कुलं नाम न जानन्तिहि पर्वत ॥ ब्रह्मादयोपि विबुधा अन्येषां चैव का कथा ॥३३॥ ब्रह्मापि तं न जानाति मस्तकं परमेष्ठिनः ॥ विष्णुर्गतोहि पातालं न दृष्टोहि तथैव च ॥ ३४ ॥ तत्रैव रेवाखण्डे नारदतपश्चर्यालिंग स्थापनं च ॥ नवनाडी निरोधेन काष्ठवत्यां गतेन च ॥ तोषितः पशुभर्तावै नारदेन

दोनों अन्त नहीं पाये ॥३०॥३१॥ वहाँ ही रेवाखण्डमें लिखा गया है कि नारद नव नाड़ीयोंको रोक कर तप करके पशुपतिको प्रसन्न किये ॥३२॥ तत्र शिवने वरदान दिये कि हमारे प्रसादसे निःसंग एक होगे ऐसा वर देकर शिव अन्तरध्यान हो गये ॥३३॥ नारद वहाँपर नारदेश्वर लिंग स्थापन किये और उसी लिंगके प्रभावसे ध्रुवनिश्चल हुए ॥३४॥ वहाँ ही नगरखण्ड अध्याय तैंतीसमें लिखा है कि एक शमय बारह वर्षकी अनावृष्टि हुई उस अकालेमें सप्तर्षि (कश्यप १ अत्रि २ भरद्वाज ३ विश्वामित्र ४ गौतम ५ जमदग्नि ६

युधिष्ठिरः ॥३५॥ तत्रैव शिव वरदानम् ॥ एकस्त्वमसि निःसंगो मत्प्रसादेन नारद ॥ इत्युक्त्वान्तर्दधे रुद्रो नारदस्तत्र शूलिनम् ॥ ३६ ॥ स्थापयामास राजेन्द्र सर्वसत्वोपकारकम् ॥ नारदेश्वर माहात्म्यादृभूवोनिश्च लतांगतः ॥३६॥ तत्रैव नगरखण्डे त्रयस्त्रिंशत्यध्याये द्वादशवार्षिक्यामनावृष्ट्या बुभुक्षितानां सप्तर्षीणां चमत्कार पुरेगमनं तत्रैवतपः करणं लिंगस्थापनञ्च ॥ तैस्तत्र स्थापितं लिंगं देव देवस्य शूलिनः ॥ तस्य

वशिष्ठ ७) ये सातो महर्षि चमत्कार पुरमें जाकर अपने अपने नामसे सात लिंगोंका स्थापन किये उनके दर्शनसे सब पाप छूट जाते हैं ॥३५॥ पुनः वहाँ ही रेवाखण्डके अध्याय छपनमें लिखा है कि ब्रह्मा इन्द्र आदि देवता गण स्वर्गमें शिव लिंग स्थापनकर स्नान करानेके लिये गंगाका आवाहन कर पूजन किये ॥३६॥ वहाँ ही नगर खण्डके दो सौ चौदहवें अध्यायमें लिखा है कि विश्वामित्र गणेशका पूजन कर ब्राह्मणत्व प्राप्तिके लिये तप करने लगे गणेशके पूजनसे विघ्नसे वर्जित हो ब्राह्मणत्व प्राप्त हुआ ॥३७॥३८॥ महाभारत अनुशासन पर्वके अध्याय अट्ठारहमें लिखा है कि मैं क्षत्रिसे ब्राह्मण हो जाऊँ इस मनोकामनासे विश्वामित्र तप करना प्रारम्भ किये वहुत दिनों तक महादेवका आराधन करनेसे दुर्लभ ब्राह्मणत्व प्राप्त हुआ ॥ ३९॥ स्कन्द पुराण आवन्त्य खण्ड चतुरशीति लिंग माहात्म्यके

सन्दर्शनादेव नरः पापाद्विमुच्यते ॥ ४० ॥ तत्रैव रेवाखण्डे षट्पञ्चाशदध्याये ॥ ब्रह्मादि देवानां स्वर्गे शिवपूजनम् ॥ तत्रचाह्वानितागङ्गा ब्रह्माद्यैरखिलैः सुरैः ॥ अभ्यर्च्येशं जगन्नाथं देवदेवं जगद्गुरुम् ॥४१॥ तत्रैव नगरखण्डे द्विशतचतुर्दशाध्याये ब्राह्मणत्व प्राप्त्यर्थं विश्वामित्रेण गणपतिपूजनं शिवाराधनञ्च कृतम् ॥ तस्य तद्वचनं श्रुत्वा विश्वामित्रो महामुनिः ॥ गणनाथ समुद्भूतां पूजां कृत्वा यथोचिताम् ॥४२॥ तपश्चचार विपुलं सर्वविघ्नविवर्जितम् ॥ ब्राह्मण्यञ्च ततः प्राप्तं सर्वेषामपि दुर्लभम् ॥ ४३ ॥ महाभारते

अध्याय बयालिसमें लिखा है कि गंगाने शिव लिंग स्थापन कर तप किया है तब उनका मनोवांछित फल प्राप्त हुआ ॥४०॥ वहाँ ही प्रभास खण्डके अध्याय एक सौ चौअनमें लिखा है कि गायत्री देवी का स्थापन किया आदि लिंग है वहाँ जाकर जो ब्राह्मण गायत्रीका जप करते हैं सो दुष्ट पतिग्रहसे छूट जाते हैं ॥४१॥ शिवरहस्यमें भी लिखा है कि वेदकी माता गायत्रीने पाँच हजार वर्ष शिवका तप तप करके 'भर्ग' पदसे युक्त हुई ॥४२॥ भविष्य पुराण उत्तर पर्व अध्याय बत्तिसमें अर्जुनके प्रति श्री कृष्णका वचन है कि उमा महेश्वर नामक व्रत सब व्रतोंमें उत्तम है इस व्रतको अप्सराओंने

अनुशासनिके पर्वणि अष्टादशाध्याये ॥ विश्वामित्र-स्तदोवाचक्षत्रियोऽहं तदाऽभवत् ॥ ब्राह्मणोऽहं भवामीति मयाचाराधितोभवः ॥ तत्प्रसादान्मयाप्राप्तं ब्राह्मण्यंदुर्लभं महत् ॥४४॥ स्कान्दे आवन्त्यखण्डे चतुरशीतिलिङ्ग माहात्म्ये द्विचत्वारिंशत्यध्याये गङ्गेश्वर-माहात्म्यम् ॥ गङ्गयाराधितोयस्मात्समीहित फलप्रदः ॥४५॥ तत्रैव प्रभासखण्डे एकशतचतुःपञ्चाशदध्याये ॥ आद्यलिंगं महादेवि गायत्र्यासु प्रतिष्ठितम् ॥ तल्लिङ्गं

किया है और रुक्मीणी, रम्भा, सीता, अहिल्या, रोहिणी, दमयन्ती, तारा, अनुसूया आदि सबोंने किया है ॥४३॥४४॥ इस व्रतका विधान भविष्य पुराण और स्कन्द पुराणमें बहुत विस्तारसे लिखा है ॥ स्कन्द पुराणके रेवाखण्डमें लिखा है कि एक समय अग्नि देवता रोगसे बहुत पीड़ित रहे उनकी आँखे पीली पड़ गई थी तब उन्होंने पिंगलेश्वर नामक शिवका स्थापन कर बहुत वर्षों तक तप करनेसे उनका रोग छूटा पिंगलेश्वर महादेवके पूजनसे कायिक वाचिक मानसिक पाप दूर हो जाते हैं ॥४५॥ पुनः वहाँ ही अध्याय एकाशीमें लिखा है कि एक समय गरुड़ने स्त्रीयोंकी निन्दा की उसको सुनकर शाण्डिलीने शाप दिया कि तुमारा दोनों पाँख गिर जाय पक्षिराज गरुड़ पक्षहीन होकर बहुत दुःखी हुए तब उन्होंने गरुड़ेश्वर नामसे शिव लिंगका स्थापनकर तप करके शिवको प्रसन्न किये शिवके

समनुप्राप्य गायत्रीं प्रजपेत्तुयः ॥ ब्राह्मणस्तु शुचिर्भूत्वा मुच्यते दुष्पतिग्रहात् ॥४६॥ शिवरहस्येऽपि ॥ गायत्री वेदमाताच पञ्चवर्षसहस्रकम् ॥ आराध्यदेवमीशानं गर्भयुक्ता तदाभवत् ॥४७॥ भविष्यपुराणे उत्तरपर्वणि द्वात्रिंशेध्याये अर्जुनम्प्रति श्रीकृष्णेनोक्तम् ॥ उमा-माहेश्वरंनाम अप्सरोभिः पुराकृतम् ॥ रुक्मीण्यारम्भ-

कृपासे पुनः दोनों पाँख उनकी हो गई एक वर्ष जो उस स्थानमें वास करता है अथवा सोमवारको जो दर्शन करता है सो शिव लोकको जाता है ॥४६॥ नोट—साण्डिलीने कहा है कि (तस्मा-देवममा देशा दारा धयतु शंकरम् पक्षलाभाय नान्यस्य शक्तिर्दातु व्यवस्थिता) गरुड़ शिवका आराधना करें क्योंकि उनके अतिरिक्त दूसरे किसीमें शक्ति नहीं है जो इनको पक्ष दे सके पुनः वहाँ ही लिखा है कि सूर्यकी स्त्री प्रभा कुरूपा थी इससे सूर्य उनसे प्रसन्न नहीं रहते रहे तब उन्होंने शिवका तप करना प्रारम्भ किया शिवके प्रसन्न होनेपर प्रार्थना की कि हे परमेश्वर ! स्त्रीका पति ही देवता है विना उसके प्रसन्न हुए स्वर्ग मोक्ष आदि कुछ नहीं प्राप्त होता है अतः हमको रूपवती कीजिए जिससे मैं अपने पतिको प्रसन्न करूँ शिव एवमस्तु कहकर अन्तर्ध्यान हो गये ॥४७॥ प्रभासखण्डके अध्याय एक सौ पचासमें लिखा है कि ब्रह्माकी स्त्री सावित्रीने लिंग स्थापन करके बहुत दिनों तक तप किया शिव प्रसन्न होकर बहुत

याचैव सीतयाहिल्यया तथा ॥४८॥ रोहिण्यादमयन्त्या च तारयाचानुसूयया ॥ एताभिश्चरितं पार्थ व्रतं सर्वोत्तमं व्रतम् ॥४६॥ अथ अग्नेस्तपश्चर्य्या तदुक्तंस्कान्देरेवाखण्डे ॥ वाचिकं मानसं पापं कर्मजं यत्पुराकृतम् ॥ पिङ्गलेश्वरमाराध्य तत्सर्वं विलयम्ब्रजेत् ५० तत्रैव एकाशीतितमेध्याये गरुड़तपश्चर्य्या ॥ यो वैसम्वत्सरं पूर्णं वसेत्सशिवलोकगः ॥ अथवा सोमवारेण यस्तं पश्यति मानव ॥ सोऽपि याति न सन्देहः पुरुषः

वर दिये उस लिंगके दर्शनसे महापातकी भी मुक्त हो जाता ॥४८॥ शिवपुराण ज्ञानसंहिताके अध्याय एकतालिसमें लिखा है कि अत्रि ऋषि पतिव्रता अनुसूयाके साथ शिवका कठिन तप करके अत्रिश्वर नामक लिंग स्थापन किये अत्रिश्वरका जो दर्शन या मनसे भी ध्यान करते हैं सो स्वर्गको जाते हैं ॥४६॥ स्कन्दपुराण नगर खण्डमें अध्याय दो सौ आठमें लिखा है कि अहिल्याने इन्द्रके साथ पुश्चलता की उस पापके दूर होनेके निमित्त हाटकेश्वर क्षेत्रमें कठिन तप की और उनका पुत्र पति गौतमने भी तप किये गौतमेश्वर नामक लिंग स्थापन किये इस कथाको जो पढ़ते हैं सो परदारा गमन पापसे मुक्त हो जाते हैं ॥५०॥ अर्बुद खण्डके अध्याय पाँचमें लिखा है कि वशिष्ठ ऋषि शिवलिंगका स्थापन करके वहाँ गोमती नदीका आवाहन किये जो स्त्री उस तीर्थमें फल पुष्प आदिसे पूजन करती है सो

शिवमन्दिरम् ॥५१॥ सूर्यपत्नी प्रभा शिवाराधनं कृता तदुक्तं तत्रैव ॥ प्रियोवा यदिवा द्वेष्यः स्त्रीणां भर्ताहि देवता ॥ दुर्भगात्वेन दग्धाहं लोकमध्ये महेश्वर ॥५२॥ ब्रह्मणः पत्नी सावित्र्याऽपि शिवाराधनं कृताः तदुक्तं प्रभासखण्डे एकशतपञ्चपञ्चाशत्यध्याये ॥ महापातक युक्तोऽपि मुक्तो भवति पातकैः ॥ इत्येवमुक्त्वा देवेश स्ततोऽन्तर्धानमागतः ॥ सावित्री ब्रह्मलोकन्तु गता-संस्थाप्य शंकरम् ॥ ५३ ॥ शिवपुराणे ज्ञानसंहितायां एकचत्वारिंशेध्याये ॥ अत्रेस्तपश्चर्या ॥ अत्रीश्वरस्य माहात्म्यं श्रुत्वा कल्याणमाप्नुयात् ॥ मनसा चिन्तये-

पुत्रवती सौभाग्यवती होती है ॥५१॥ केदारखण्डके आठवाँ अध्याय में लिखा है कि पराशर ऋषि लिंग स्थापनकर तप किये हैं उस लिंगका जो पूजन करते हैं सो कल्याणको प्राप्त होते हैं ॥५२॥ महाभारतके अनुशासन पर्वमें कपिलका वचन है कि मैं अनेक जन्मोंमें शिवका आराधन किया तब शिव प्रसन्न हो संसार नाशक ज्ञान मुझे दिया ॥५३॥ कौमार खण्डके अध्याय बारहमें लिखा है कि लोमस ऋषि शिवलिंग स्थापनकर घोर तपके प्रभावसे साढ़े तीन करोड़ ब्रह्माके बीत जाने तक उनकी आयु हुई और उन्होंने कहा है कि शिवभक्ति करनेवाले मनुष्यको तीनों लोककी कोई वस्तु

द्यस्तु सस्वर्गमधिगच्छति ॥ ५४ ॥ स्कान्दे नगरखण्डे द्विशत अष्टमाध्याये अहल्यागौतम तपश्चर्या ॥ यश्चैत-च्छृणुयान्नित्यं श्रद्धयापरया युतः ॥ स मुच्येत्पातका-त्सद्यः परदार समुद्भवात् ॥५५॥ वशिष्टेन शिवाराधनं कृतम् ॥ तदुक्तं स्कान्देअर्बुदखण्डे पंचमाध्याये ॥ या स्त्री पुष्पफलान्येव तीर्थेचास्मिन्विसर्जयेत् ॥ सास्या-त्पुत्रवतीधन्या सौभाग्यञ्च प्रपद्यते ॥५६॥ तत्रैव केदार-खण्डे अष्टमाध्याये पाराशरेण लिङ्गस्थापनं कृतम् ॥ येर्चयन्ति शिवनित्यं लिंगरूपिणमेव च ॥ तं शिवं

अलभ्य नहीं है ॥५४॥ आवान्त्य खण्डके अध्याय छत्तीसमें लिखा है कि मृकण्डु ऋषि अजोनिज पुत्रके लिये शिवका कठिन तपस्या बहुत दिनों तक किये तब मार्कण्डेय पुत्र शिवने दिया और अनेक वर दिये ॥५५॥ महाभारत अनुशासन पर्व अध्याय चौदहमें लिखा है कि उपमन्यु ऋषि शिवलिंग स्थापन करके बहुत दिन तक तप किये तब शिव प्रसन्न होकर अनेक वर दिये ॥५६॥ स्कन्दपुराण नगरखण्डमें लिखा है कि वत्सऋषि शिव षड़क्षर मन्त्र (ॐ नमः शिवाय) का जप कर बहुत दिनों तक तप किये तब शिव प्रसन्न होकर उनके सब पापोंका नाश करके उनका शरीर युवा कर दिये शिव षड़क्षर मन्त्रका जप करनेसे ब्रह्मवध महापाप भी नाश हो

प्राप्नुवन्त्येव सर्वदुःखोप नाशनम् ॥ ५७ ॥ महाभारते अनुशासनिके पर्व्वणि कपिलस्य शिवराधम् ॥ कपिलश्च ततः प्राह सांख्यर्षिर्देवसम्मतः ॥ मयाजन्मान्यनेकानि भक्त्या चाराधितो भवः ॥ प्रीतश्च भगवान् ज्ञानं ददौ मम भवान्तकम् ॥५८॥ कौमारखण्डे द्वादशाध्याये लोमस तपश्चर्य्या ॥ न दुर्लभं न दुःप्राप्यं न चासाध्यं महात्मनाम् ॥ शिवभक्ति कृतां पुंसां त्रिलोक्यामपि निश्चितम् ॥ ५६ ॥ आवन्त्यखण्डेषट्त्रिंशेध्याये मृकण्डुतपश्चर्य्या ॥ शिव वाक्यम् ॥ ये मां

जाता है ॥५७॥ देवी भागवतमें लिखा है कि एक समय दुर्वासा ऋषि सर्वांगमें भस्म लगाये कुम्भीपाक नरक कुण्डको देखनेको गये उनके अंगोंसे भस्मका कँड़ा पड़ते ही नरक स्वर्ग हो गया वहाँ दुर्वासाने शिवलिंग स्थापनकर पितृ लोगोंका तीर्थ बना दिया नरक कुण्ड हटकर दूसरे जगह बनाया गया ॥५८॥ स्कन्दपुराण चतुरशीति लिंग माहात्म्यके अध्याय तीसमें लिखा है कि च्यवन ऋषि च्यवनेश्वर नामक लिंग स्थापन करके तप किये च्यवनेश्वरके दर्शनसे आजन्म संचित पाप दूर हो जाते हैं ॥५६॥ लिंगपुराण पूर्वार्द्ध अध्याय छत्तीसमें लिखा है कि राजा क्षुपसे पराजित होकर दधीचि ऋषि शुक्राचार्यके उपदेशसे शिवका स्थापनकर तप किये शिव

सम्पूजयिष्यन्तिहृद्यैः पुष्पैः सुगन्धिभिः ॥ दीर्घायुषो भविष्यन्ति ते सदा दुःखवर्जिताः ॥ ६० ॥ महाभारते अनुशासनिके पर्वणि चतुर्दशाध्याये उपमन्युनाऽपि शिवाराधनं कृतः ॥ एवमुक्त्वा स भगवान् सूर्य्यको-टिसमप्रभः ॥ ईशानः स वरान् दत्वा तत्रैवान्तर धीयत ॥ ६१ ॥ स्कान्दे नगरखण्डे वत्सतपश्चर्य्या ॥ शैवं षडक्षरं मन्त्रं योजपेच्छ्रद्धयान्वितः ॥ अपि ब्रह्म-

प्रसन्न होकर उनको ब्रज्रास्थित्व अवध्यत्व अदीनत्व प्राप्तकर क्षुपको संग्राममें पराजय किये राजा क्षुप भवानमुकुन्दको आराधन करके प्रसन्न किये विष्णु ब्राह्मणका रूप होकर दधीचीके आश्रममें जाकर प्रणाम कर बोले कि आप शिवभक्त हैं आपसे एक वर माँगता हूँ कि राजा क्षुपके आगे एक दफे आप यह कह दें कि मैं तुमसे डरता हूँ दधीचीने कहा कि आपकी माया मैं समझ गया आप विष्णु हैं मैं किसीसे नहीं डरता मेरे मुखसे ऐसा वचन नहीं निकल सकते विष्णु क्रोधमें आकर उनसे युद्ध किये विष्णुको उन्होंने पराजय कर दिया वही कुरुक्षेत्रमें स्थानेश्वर तीर्थ हुआ ॥६०॥ महाभारत अनुशासन पर्वमें कृष्णका वचन अर्जुनके प्रति है कि हे पाण्डव! सरस्वती नदीके तीरमें गर्ग ऋषि मनोयज्ञसे शिवको प्रसन्न कर चौसठ कला-ओंसे युक्त ज्ञान प्राप्त किये ॥६१॥ सेतु खण्डके अध्याय एकतीसमें अश्वत्थामाके प्रति व्यासका वचन है कि हे द्रोण पुत्र! तुमने सोये

वधात्पापं जातं तस्य प्रणश्यति ॥६२॥ देवी भागवते दुर्वाससापि शिवाराधनं कृतम् ॥ तनुजातमिदं सर्वं भस्मनो महिमात्वयम् ॥ इतः परन्तु तत्तीर्थं पितृलोकनिवासिनाम् ॥६३॥ स्कान्दे चतुरशीतिलिङ्ग-माहात्म्ये त्रिंशेध्याये ॥ भक्ताये पूजयिष्यन्ति अथैनं च्यवनेश्वरम् ॥ आजन्मप्रभवं पापं तेषां नश्यति तत्क्षणात् ॥६४॥ लिङ्गपुराणे पूर्वार्द्धेषट्त्रिंशेध्याये ॥ तदेवतीर्थमभवत्स्थानेश्वरमितिस्मृतम् ॥ स्थानेश्वरमनु-प्राप्य शिवसायुज्यमाप्नुयात् ॥६५॥ महाभारते अनु-

हुए शत्रुओंको तथा ब्रह्मवध किया है उन पापोंसे मुक्त होनेसे हेतु धनुःकोटि तीर्थमें जाकर शिवका तप करो ॥६२॥ रेवाखण्डके एक सौ सतसठवें अध्यायमें मार्कण्डेयने तप किया है उस स्थानको दूरसे भी जो देखते हैं सो ब्रह्महत्या आदि पापोंसे छूट जाते हैं ॥६३॥ प्रभास खण्डमें एक सौ अध्याय चौसठवेमें दशरथ राजाने पुत्रके लिये शिवलिंगका स्थापनकर तप किये उस लिंगका कार्तिक पूर्णिमाको जो विधिवत पूजन करते हैं सो यशस्वी होते हैं ॥६४॥ वहाँ ही ध्रुवने शिवलिंग स्थापन कर तप किया है उस लिंगका श्रावण अथवा अगहन पूर्णिमाको जो पूजन करते हैं उनको अश्वमेधका फल प्राप्त होता है ॥६५॥ शिवपुराण धर्मसंहिता अध्याय द्वितीयमें श्रीकृष्णके प्रति

शासनिके पर्वणि गर्गेणापि शिवाराधनं कृतम् ॥ चतुः षष्ठ्यांगमददत्कलाज्ञानं ममाद्भुतम् ॥ सरस्वत्यास्तटे तुष्टो मनोयज्ञेनपाण्डव ॥ ६६ ॥ सेतुखण्डे एकत्रिंशेऽध्याये व्यासवाक्यम् ॥ धनुःकोटिरितिख्यातं तीर्थमस्ति महत्तरम् ॥ अस्ति पुण्यतमं द्रौणे महापातक नाशनम् ॥६७॥ रेवाखण्डे एकशतषष्ठिसप्तत्यध्याये ॥ मार्कण्डेयेश्वरवृत्तान् यो दूरस्थानपि पश्यति ॥ ब्रह्महत्यादिपापेभ्यो मुच्यतेशंकरो ब्रवीत् ॥६८॥ प्रभासखण्डे एकशत चतुःषष्ठितमेध्याये ॥ पुत्रार्थं दशरथेन शिवलिङ्गस्थापनं कृतः ॥ तेन लिङ्गप्रभावेण प्राप्तं राज्ञामहद्यशः ॥ कार्तिक्यां कार्तिके मासे विधिना यः समर्चयेत् ॥ दीपपूजोपहारेण यशस्वी सोऽभिजायते ॥६९॥ तत्रैव

उपमन्यु ऋषिका वचन है कि शिवके प्रसादसे हिरण्यकशिपु नामक राक्षस सब देवोंका ऐश्वर्य लेकर दश लाख वर्ष राज्य किया ॥६६॥ और विद्युत्प्रभ नामक राक्षस शिवका तप करके एक हजार एक सौ वर्ष तक तीनों लोकका राजा हुआ ॥६७॥ याज्ञवल्क नामक ऋषि जिनका वेदमें जिक्र है उन्होंने शिवका आराधन करके उत्तम ज्ञानको प्राप्त किये ॥६८॥ अत्रिमुनीकी स्त्री अनुसूयाने तीन सौ वर्ष निराहार

ध्रुवेणापि शिवाराधनं कृतम् ॥ श्रावणस्य शुभां मायां यस्तल्लिङ्गं प्रपूजयेत् ॥ आश्वयुक् पौर्णमास्याम्वा सोऽश्व मेधफलं लभेत् ॥ ७० ॥ शिवपुराणे धर्म संहितायां द्वितीयाध्याये श्रीकृष्णम्प्रत्युपमन्युवाक्यम् ॥ शर्वात्स-र्वामरैश्वर्यं हिरण्यकशिपुः पुरा ॥ वर्षाणां दशलक्षाणि सोऽलभच्चन्द्रशेखरात् ॥ ७१ ॥ तुष्टोविद्युत्प्रभस्याऽपि त्रैलोकेश्वरतामदात् ॥ शतवर्षसहस्राणि सर्वलोकेश्व-रोऽभवत् ॥७२॥ याज्ञवल्क्य इतिख्यातो गीतोवेदेपुराऽखिल ॥ आराध्य स महादेवं प्राप्तवान् ज्ञानमुत्तमम् ॥७३॥ वेदव्यासस्तु यो नाम्ना प्राप्तवानतु लंयसः ॥

रहकर शिवका तप की है तब उनको बहुतसे पुत्र हुए ॥६९॥ उपमन्यु ऋषि कहते हैं कि हे मधुसूदन ! दत्तात्रेय चन्द्रमा दुर्वासा शिवका तप करके सिद्धिको प्राप्त हुए ॥७०॥ हे माधव ! साकल्य ऋषि एक सौ नव वर्ष मानसिक यज्ञ द्वारा शिवका आराधना किये ॥७१॥ सत्ययुगमें सावर्णि नामक ऋषिने इस स्थानपर एक सौ साठ वर्ष शिवका तप किये ॥७२॥ तब शिव प्रसन्न होकर उनको वर दिये कि ग्रन्थ बनानेवाला लोकमें विख्यात अजर अमर होवोगे ॥ ७३॥ स्कन्दपुराण केदारखण्ड अध्याय आठमें लिखा है कि सब चराचर जगत शिवभक्ति युक्त है ऐसे शिवको छोड़कर जो अज्ञानता

सोऽपि शङ्कर माराध्य त्रिकालज्ञान माप्तवान् ॥७४॥ अत्रेर्भार्याचानुसूयात्रीणि वर्ष शतानि च ॥ मुषलेषु निराहारासुप्ता शर्वात्ततः सुतान् ॥ ७५ ॥ दत्तात्रेयं मुनिं लेभे चन्द्रं दुर्वाससंतथा ॥ प्रसाद्य भगवान्सिद्धिं प्राप्तवा मधुसूदन ॥ ७६ ॥ साकल्पः संशितात्माऽसौ नववर्ष शतान्यपि ॥ भवमाराधयामास मनोयज्ञेन माधव ॥७७॥ सावर्णिरि तिविख्यातो ऋषिरासीत्कृते युगे ॥ इह तेन तपस्तप्तं षष्ठिवर्ष शतान्यपि ॥ ७८ ॥ तमाह भगवान् रुद्रः साक्षातुष्टोऽस्मितेऽनघ ॥ ग्रन्थ-कृल्लोकविख्यातो भवितास्यजरामरः ॥ ७९ ॥ स्कान्दे केदारखण्डे अष्टमाध्याये ॥ शिवभक्ति युतं सर्वं जग-

वस अन्य देवोंका भजन करते हैं वे मूढ़ हैं ॥७४॥ अर्घा विष्णु हैं लिंग शिव हैं अतः लिंग पूजा सब कर्मोंसे श्रेष्ठ है ॥७५॥ वलि, नमुचि, हिरण्यकशिपु, वृषपर्वा, वृष, संह्राद, वाणासुर, ये सब और शुक्राचार्यके जितने दैत्य दानव शिष्य हैं सो सब शिव पूजामें रत रहते हैं ॥७६॥७७॥ वाल्मीकीयमें लिखा है कि राक्षसेन्द्र रावण जहाँ जाता रहा है वहाँ अपने साथ जाम्बुनद सुवर्णका लिंग अपने साथ ले जाता रहा और उस लिंगको वालुकाकी वेदी बनाकर उसपर रखकर पुष्प धूप आदि सामग्रीसे पूजन करता रहा ॥७८॥७९॥

देतच्चराचरम् ॥ तं शिवं नौढ्यतस्त्यक्त्वा मूढाश्चान्यं भजन्ति ये ॥ ८० ॥ पीठिका विष्णुरूपस्याल्लिङ्गरूपी महेश्वरः ॥ तस्माल्लिङ्गार्चनं श्रेष्ठं सर्वेषामपि वैद्विजाः वलिश्च नमुचिश्चैव हिरण्यकशिपुस्तथा ॥ वृषपर्वा वृषश्चैव संह्लादोवाणएव च ॥ ८१ ॥ एते चान्ये च बहवः शिष्याः शुक्रस्य धीमतः ॥ एवं शिवार्चनरताः सर्वेतेदैत्यदानवाः ॥ ८२ ॥ वाल्मीकीये ॥ यत्र यत्रस्म याति रावणोराक्षसेश्वरः ॥ जाम्बूनदमयं लिङ्गं तत्र तत्र स्मनीयते ॥ ८३ ॥ वालुकावेदि मध्येतु तल्लिङ्गं स्थाप्य रावणः ॥ अर्चयामासगन्धाद्यैः पुष्पैश्चागरुगन्धिभिः ॥८४॥ स्कान्दे नगरखण्डे चतुःसप्तत्यध्याये

स्कन्दपुराण नगर खण्ड अध्याय चौहत्तरमें लिखा है कि महाराजा धृतराष्ट्रने अपने सौ पुत्रोंके साथ एक सौ लिंगोंका स्थापन किये ॥ ८०॥ और पाण्डवोंने पाँच लिंग स्थापन किये विदुर, शल्य, कलिंग, युयुत्सु, वाह्लिक और उनका पुत्र कर्ण और उनका पुत्र, सकुनी, द्रोणाचार्य, कृपाचार्य अश्वत्थामा सबोंने अपने-अपने नामसे पृथक्-पृथक् लिंग स्थापनकर पूजनकर वर प्राप्त किये हैं ॥ ८१॥८२॥८३॥ द्रौपदी, कुन्ती, गांधारी, भानुमती स्त्रियोंने भी अपने-अपने नामसे चार गौरीकी पूजा की है ॥८४॥ प्रेमसागर

ऽपि ॥ धृतराष्ट्रेण भूपेन शतपुत्रान्वितेनच ॥ लिङ्गानां स्थापितं तत्र एकोत्तरशतं द्विजाः ॥८५॥ तथापि पांडवैः सर्वैस्थापितं लिङ्गपञ्चकम् ॥ विदुरेणाऽथ शल्येन कलिंगेन युयुत्सुना ॥८६॥ वाल्मीकेन सुपुत्रेण कर्णेनाऽथ ससूनूना ॥ तथाशकुनिना तत्र द्रोणेन च कृपेण च ॥८७॥ अश्वत्थाम्ना पृथक्त्वेन लिंगमेकैकमुत्तमम् ॥ स्थापितं विधिवद्भक्त्या वरप्रासाद माश्रितम् ॥ ८८ ॥ द्रौपद्याचाऽथ कुन्त्याच गान्धर्य्याऽथ

अध्याय ५३ में रुक्मीणीका गौरी पूजन लिखा है—मोंपर गौरी कृपा तुम करो यदुपति दे मम दुःख हरो—और जानकी भी गौरी पूजन किया है रामायण बालकाण्डमें लिखा है—चौपाई, जै जै जै गिरिराज किशोरी जै महेश मुखचन्द्र चकोरी । जै गजवदन खड़ाननि माता जक्त जननि दामिनि दूयुति दाता ॥ मोर मनोरथ जानहु नीके बसहु सदा उरपुर सभहीके । अस कहि चरण गही वैदेही ॥ श्रीकृष्णने भी अपने नामसे लिंग स्थापन करके सब कार्यको साधन किये ॥८५॥ सात्वत, साम्ब, बलभद्र, प्रद्युम्न, अनिरुद्ध आदि जितने मुख्य यदुवंशी हैं सबोंने अपने अपने नामसे फरक फरक लिंग स्थापन किये हैं चारुदेष्णीके पुत्रोंने रुक्मीणीके दश पुत्रोंने पृथक् पृथक् अपने नामसे लिंग स्थापन किये हैं ॥८६॥८७॥८८॥ जितने यदुवंशी कुरु पाण्डव हुए हैं सो सब शिवका स्थापन पूजनकर अपनेको धन्य भाग्य मानकर

यदृच्छया ॥ भानुमत्याच गौरीणां स्थापितंच चतुष्टयम् ॥ ८६ ॥ तथा संस्थापितं तत्र विष्णुना प्रभविष्णुना ॥ लिङ्गप्रसादमासाद्य प्रोत्तुंग शिखरान्वितः ॥ ९० ॥ सात्वतेनापि साम्वेन बलभद्रेण धीमता ॥ प्रद्युम्नेनानिरुद्धेन तथान्यैर्मुख्ययादवैः चारुदेष्णादिभिः पुत्रैः रुक्मीण्यादशभिः सुतैः ॥ लिंगानांदशकं मुख्यं स्थापित श्रद्धयान्वितैः ॥ एवं संस्थाप्य लिङ्गानि सर्वे ते कुरुपाण्डवाः ॥ यादवाश्च सुसंहृष्टाः कृतकृत्यावभूविरे ॥९१॥ कौर्म्मे पञ्चविंशत्यध्याये श्रीकृष्णं प्रत्युपमन्युवचनम् ॥ इहाश्रमेपुरारुद्रं तपस्तप्त्वा सुदारुणम् ॥ लेभे महेश्वराद्योगं वशिष्टो भगवान् ऋषिः ॥ ९२ ॥

कृतकृत्य हुए हैं ॥८९॥ कूर्म्मपुराण अध्याय पचीसमें श्रीकृष्णके प्रति उपमन्यु ऋषिका वचन है कि इसी आश्रममें पूर्व कालमें वशिष्ठ ऋषि कठिन तप करके शिवयोगको प्राप्त किये ॥९०॥ और यहाँ ही कृष्णद्वैपायन व्यासने भी तपसे शिवको प्रसन्नकर ज्ञान प्राप्त किये ॥ ९१॥ और यहाँ ही सावर्णि ऋषि बहुत दिनों तक तप किये भृगु ऋषि भी तप करके शिवके प्रसादसे शुक्राचार्य ऐसा पुत्र पाये अतः आप भी यहाँ ही तप कीजिए तब शिवके कृपासे सब मनोभीष्ट फल प्राप्त होगा ॥९२॥ देवता मनुष्य गन्धर्व राक्षस आदि सब जीवधारी

इहैवभगवान् व्यासः कृष्णद्वैपायनः स्वयम् ॥ दृष्ट्वा तं परमेशानं लब्धवान् ज्ञानमुत्तमम् ॥९३॥ इहाराध्य-महादेवं सावर्णिस्तपसांवरः ॥ इहैवभृगुणा पूर्वं तप-स्त्वामहातपः ॥ शुक्रोमहेश्वरात्पुत्रो लब्धो योगविदाम्बरः ॥९४॥ देवा मनुष्या गन्धर्वा राक्षसा जीवधारिणः ॥ सर्वे सदाशिवं देवं भजन्ति नामभेदत ॥९५॥ यवना-श्चैव गोरण्डा जापानाश्चीन वर्वराः ॥ सर्वे लिंगं पूजयन्ति नामकर्म विभेदतः ॥९६॥

इति श्री मद्योगिवर्यविप्रराजेन्द्र स्वाम्यात्मज पं० कालिकेश्वर दत्त संग्रहीते सिद्धान्तरत्नाकरे चतुर्थ उपासनाखण्डे तृतीयस्तरङ्गः

एक सदाशिव ही का भजन करते हैं नामभेदसे ॥९३॥९४॥९५॥ मुसलमान कृश्चन जापान चीन बर्बर आदि सब विदेशोंमें भी रीतिभेदसे और नामभेदसे उसी आकाशाधिपति शिवका पूजन होता है इस विषय को तृतीय खण्डके भूमिकामें विस्तारपूर्वक लिख आये हैं ॥९६॥

इति श्री भाषाटीकायां चतुर्थखण्डे तृतीयस्तरङ्गः ॥

चतुर्थस्तरंगः

श्रीगणेशाय नमः ॥ सूक्ष्मोपासना चतुर्थस्तरंगः ॥

यम्ब्रह्मा वरुणेन्द्ररुद्रमरुतः स्तुन्वन्ति दिव्यैस्तवैः
वेदैः सांगपदक्रोमपनिषदैर्गायन्ति यं सामगाः ॥
ध्यानावस्थिततद्गतेन मनसा पश्यन्ति यं योगिनो
यस्यान्तं न विदुः सुरासुरगणाः देवाय तस्मै नमः ॥१॥

श्रीगणेशाय नमः ॥ दोहा—

ब्रह्म सच्चिदानन्द जो कहत वेद वेदान्त ।
सो शिवसे हैं अन्य नहिं देखो मनकरि शान्त ॥

उपासना दो प्रकारकी है एक स्थूलोपासना जो मूर्ति या लिंग द्वारा की जाती है दूसरी सूक्ष्मोपासना जो वेदान्त और उपनिषदादि द्वारा श्रवण, मनन, निदिध्यासनसे मनको शान्त कर शिवोहं, ऐसा भाव दृढ़ हो जाना ॥ उसका क्रम प्रमाणयुक्त आगे लिखते हैं ॥ जिस देवका ब्रह्मा, वरुण, इन्द्र, रुद्र, वायु आदि सब देवगण दिव्य स्त्रोत्रसे स्तुति करते हैं और वेद वेदांग पदक्रम जटाघन उपनिषद और सामवेदके गान करनेवाले जिनका गान करते हैं और ध्यान द्वारा समाधिमें होकर योगी लोग जिसको देखते हैं और जिसका अन्त देवता असुर किसीने नहीं पाया उनके लिंगका अन्त लेनेको ब्रह्मा हजारों वर्ष उपरको गये और विष्णु हजारों वर्ष नीचेको गये अन्त नहीं पाये लौट आये ऐसे अनन्तदेवको मैं नमस्कार करता हूँ ॥१॥

अज्ञानमूढा मुनयोवदन्ति पूजोपचारादि वलिक्रियाभिः तोषं गिरीशोभजतीति मिथ्या कुतस्त्व मूर्तस्यतु भोग-लिप्सा ॥२॥ ज्ञानकाण्डेऽपि शिवस्यैव सर्वतः परत्वं सर्वकर्तृत्वं पुराणवेदोपनिषदादौ स्फुटीकृतम् ॥ तदुक्तं वाशिष्टे ॥ ब्रह्मार्क विष्णु हर शक्र सदा शिवादि शान्तौशिवं परममेतदिहैक मास्ताम् ॥ सर्वोपाधिव्यव-सादविकल्प रूपं चैतन्यमात्रमय मुम्भित विश्वदाङ्गम् ॥३॥ सूतसंहितायामपि ॥ आकाशादीनि भूतानिपञ्च-

शिवगीतामें रामचन्द्रका वचन है कि अज्ञानी पुरुष यह जानते हैं कि पूजा भोगसे शिव प्रसन्न होते हैं परन्तु वह निराकार मूर्तिसे रहित हैं उनको भोगका लिप्सा कहांसे है ॥२॥ सम्पूर्ण वेद वेदान्त पुराणोपनिषदादिका सिद्धान्त एक शिव हैं 'एको रुद्रो न द्वितीया यतस्थुः यइमान्लोकानीशते इशनीभिः' 'शिवमद्वैतं तूरीयं मन्यन्तेस आत्मा सविज्ञेयः' 'यो रुद्रो अग्नौ अप्सु विश्वाभुवनानि विवेशतस्मै रुद्राय नमोऽस्तु' इत्यादि श्रुतियोंसे सिद्ध होता है कि सर्वत्र व्यापक परमात्मा शिव हैं इस विषयको आगे प्रमाणके साथ लिखते हैं ॥ वाशिष्ठोपपुराणमें लिखा है कि ब्रह्मा, सूर्य, विष्णु, रुद्र, इन्द्र, सदाशिव, आदि सब परम शिवमें लय होते हैं और वह परम शिव उपाधिसे तथा व्यवसायसे रहित चैतन्य मात्र है ॥३॥ सूत-

तेषां प्रकीर्तिताः ॥ गुणाः शब्दादयः पञ्च पञ्चकर्मेन्द्रियाणि च ॥४॥ ज्ञानेन्द्रियाणिपञ्चैव प्राणाद्यादशवायवः मनोबुद्धि रहंकारश्चित्तंचेति चतुष्टयम् ॥५॥ तेषांकारण भूतैक विद्याषट्त्रिंशकः पशुः ॥ विश्वस्य जगतः कर्तापशोरन्यः परः शिवः ॥६॥ महाभारतेऽपि ॥ यश्चसर्वमयोदेव स्तस्मै सर्वात्मनेनमः ॥७॥ ईशावास्योपनिषदि ॥ अन्धन्तमः प्रविशन्तिये अविद्यामुपासते ॥

संहितामें लिखा है कि आकाश १, वायु २, तेज ३, जल ४, पृथ्वी ५, और उसका गुण शब्द ६, स्पर्श ७, रूप ८, रस ९, गन्ध १०, कर्मेन्द्रिय पाँचवाक् ११, पाणि १२, पाद १३, पायु १४, उपस्थ १५, ज्ञानेन्द्रिय पाँच त्वचा १६, श्रोत्र १७, नेत्र १८, नासिका १९, जिह्वा २०, और वायु दशप्राण २१, अपान २२, उदान २३, व्यान २४, समान २५, नाग २६, कूर्म्म २७, कृकल २८, देवदत्त २९, धनंजय ३०, अन्तःकरण चारि मन ३१, बुद्धि ३२, चित्त ३३, अहंकार ३४, और माया ३५, मह तत्व ३६, इन छत्तीसोंका कारण पशुपति सदाशिव हैं उनसे परे परम शिव हैं ॥४॥५॥६॥ महाभारतमें भी लिखा है कि जिसमें सब जगत जिससे सब हुआ जो सब जगतरूप और जो सबमें व्यापक होकर रहता है ऐसे सर्वात्मा शिवको मैं नमस्कार करता हूँ ॥७॥ ईशावास्योपनिषदमें लिखा है कि अन्धतम लोकको वे जाते हैं जो अविद्याका उपासना करते हैं और प्रकाशमय लोकको वे जाते हैं जो

ततो भूयइवतेऽतमोयउ विद्याया छं रताः ॥८॥ तथा-केनोपनिषदि ॥ श्रोत्रस्यश्रोत्रं मनसोमनो यद्वाचोह-वाच छं सउ प्राणस्य प्राणश्च चुषश्च चुरतिमुच्य धीराः प्रेत्यस्माल्लोकाद मृता भवन्ति ॥९॥ तत्रैव यक्ष-रूपेणाविर्भूय देवानां मानध्वंसनम् ॥ तद्धैषांविजज्ञौ तेभ्योह प्रादुर्बभूव तन्नव्यजानन्तकिमेतद्यक्षमिति ॥१०॥ तथेति तमभ्य द्रवत् तमभ्यवदत् कोऽसीति अग्निर्वाहमस्मीत्यब्रवीज्जात वेदावाहमस्मीति ॥ तस्मिं-छं स्त्वयिकिं वीर्य्यमित्यपिद छं सर्वंदहेयं पृथि व्या-

'उ' (शिव) विद्यामें रत रहते हैं ॥८॥ केनोपनिषदमें लिखा है कि जो 'उ' (शिव) कानका भी कान नेत्रका भी नेत्र वचनका भी वचन प्राणका भी प्राण मनका भी मन है उनको जो जानते हैं सो अमृत हो जाते हैं ॥९॥ पुनः वहाँ ही लिखा है कि एक समय सब देवताओंने यह विचार किया कि शिव संहारकर्ता हैं उनको हम लोग छोड़ दें तो क्या हानि है सृष्टिपालन होगा संहारका कोई आवश्यकता नहीं है शिवको छोड़कर देवताओंने एक सभा की उस सभाके समीप ही शिव यक्ष रूपसे आविर्भाव हुए देवताओंने नहीं जाना कि कौन यक्ष है ॥१०॥ देवताओंने अग्निको आज्ञा दिया कि तुम पता लगाओ कि वह कौन यक्ष है आज्ञा पाकर अग्निदेव यक्षके समीप गये यक्षने

मिति ॥ तस्मैतृणं निदधावेतद्दहेति तदुपप्रेयाय सर्वजवेन तन्नशशाकदग्धुं सतत एव निववृते नैतदशकं विज्ञातुंकिमेतद्यक्षमिति ॥११॥ एवं वायुस्ततो इन्द्रस्तस्मात्तिरोदधे ॥ सतस्मिन्ने वाकाशेस्त्रियमा जगाम बहुशोभमानां उमां हैमवतिं ता ७ं हो वाचकि मेतद्यक्षमितिसा ब्रह्मेति होवाच ब्राह्मणो वा विजये असहिय ध्वमिति ॥१२॥ ब्रह्मगीतायाम् ॥ यक्षरूपो महा-

पूछा तुम्हारा नाम क्या है अग्निने कहा कि मेरा नाम अग्नि और जातवेदा हैं यक्षने कहा कि तुम्हारेमें कुछ पराक्रम है अग्निने कहा हाँ मैं सबको भस्म कर देता हूँ यक्षने एक तृण रख दिया और कहा कि भस्म करो अग्नि सब बल लगा दिये परन्तु तृणको न जला सके लज्जित हो लौट आये देवताओंसे कहे कि मैं नहीं जान सकता कि वह यक्ष कौन है ॥११॥ बाद देवताओंने वायुको भेजा वायुसे भी यक्षने पूछा तुम कौन हो वायुने कहा कि मैं वायु हूँ सब वस्तुको मैं खींच लेता हूँ यक्षने पुनः वही तृण रख दिया और कहा कि खींचो वायु सब बल लगा दिये परन्तु तृण नहीं हिला लज्जित हो लौट आये बाद देवताओंका राजा इन्द्र स्वयं वहाँ गये यक्ष अन्तरध्यान हो गये इन्द्र चारों तरफको देखने लगे तो आकाशमें हिमवानकी पुत्री उमाको देखा उनसे इन्द्रने पूछा यह कौन यक्ष रहा है तब भगवतीने कहा सही सच्चिदानन्द परब्रह्म हैं इन्हींके रहते तुम सब अपना कार्य

देवः कोशीत्पाहानलं प्रति ॥ अग्निर्वाहम स्मीतियत्त्वं प्रत्याह सोऽपिच ॥१३॥ सोपिप्रोवाच भगवान् तव-किंवीर्य्यइत्यपि ॥ इदं सर्वदहेयं यद्भूम्यां समवस्थि-तम् ॥१४॥ इत्याहाग्नि स्त्रिणं तस्मैनिधाय परमेश्वरः तद्दहेतीतिः भगवान्स्मयमानोभ्यभाषत ॥१५॥ अग्निः सर्वजवेनैव न दग्धुं तृणमास्तिकाः ॥ अशक्तो लज्जया-युक्तो भीतोगच्छन्सुरान्प्रति ॥१६॥ कठोपनिषदि ॥ यइमं अध्वदंवेद आत्मानं जीवमन्तिकात् ॥ ईशानं भूतभव्यस्य ततोन विजुगुप्सते ॥१७॥ अंगुष्ठमात्रः पुरुषो ज्योतिरिवाधूमकः ॥ ईशानो भूतभव्यस्य सए

करनेमें समर्थ हो सकते हो अन्यथा कुछ नहीं कर सकते हो ॥१२॥ ब्रह्मगीतामें भी इसी श्रुतिका भाव लेकर लिखा है कि यक्षरूप महादेवके समीप अग्नि गये उन्होंने अग्निसे प्रश्न किया कि तुम्हारा नाम क्या है और शक्ति कौन है तब अग्निने कहा अग्नि मेरा नाम है दहनात्मिक शक्ति है ॥१३॥१४॥ मन्द हास्य करके एक तृण रख दिये इसको दहन करो ॥१५॥ अग्नि सब बल लगा दिये तृण दग्ध नहीं हुआ लज्जित होकर देवताओंके पास लौट आए ॥१६॥ कठो-पनिषदमें लिखा है कि भूत भविष्य वर्तमान तीनों कालमें रहनेवाले आत्मा (शिव) को जो जानते हैं वे कभी खेदको नहीं प्राप्त होते

वाद्यः स ऊ श्वः ॥१८॥ श्वेताश्वतरोपनिषदि ॥ क्षरं प्रधानम मृताक्षरं हरः ॥ क्षरात्माना वीशते एकदेवः ॥ तमभिध्याना द्योजनात्तत्वभावादूभूयश्चान्ते विश्वमाया निवृत्तिः ॥१६॥ एषोहिदेवः प्रदिशोनुसर्वाः पूर्वोहि जातः सउगर्भे अन्तः सएव विजातः सजनिष्यमाणः प्रत्यग्जनास्तिष्ठति विश्वतोमुखः ॥२०॥ एकोरुद्रो नद्वितीयायत स्थुर्यइमान् लोकानीशते ईशनीभिः ॥ प्रत्यग्जनास्तिष्ठति सञ्चुकोचान्तकाले समृज्य विश्वा-भुवनानि गोपाः ॥२१॥ यो देवानां प्रभवश्चोदूभवश्च विश्वाधिको रुद्रो महर्षिः ॥ हिरण्य गर्भं पश्यत जाय

हैं ॥१७॥ तीनों कालका अधिपति अंगुष्ठमात्र पुरुष धूमरहित ज्योति स्वरूप हैं (शिव हैं) ॥१८॥ श्वेताश्वतर उपनिषदमें लिखा है कि क्षर प्रधान अमृताक्षर हर हैं क्षरात्मा ईश (शिव) एक देव हैं उनका जो ध्यान करते हैं सो मयासे मुक्त हो जाते हैं ॥१६॥ वही एक देव पहले रहा और रहेगा चारो तरफ रहता है और वही उ (शिव) गर्भमें है आगे पीछे बगलमें वही है ॥२०॥ एक रुद्र हैं दूसरा नहीं है जो इस लोकको अपने मायारूपी शक्तिसे पालन करता है और सदा समीप रहता है अन्तमें जगतको अपनेमें लय कर लेता है ॥२१॥ जो देवताओंको उत्पन्न करनेवाला विश्वसे अधिक सृष्टिके

मानं सनोबुद्धया शुभया संयुनक्तु ॥२२॥ सूक्ष्मातिसूक्ष्मं कलिलस्यमध्ये विश्वस्य श्रष्टारमनेक रूपम् ॥ विश्वस्यैकं परिवेष्टि तारं ज्ञात्वा शिवं शान्तिमत्यन्तमेति ॥२३॥ मायान्तु प्रकृतिं विद्यान्मायिनन्तु महेश्वरम् ॥ तस्यावयव भूतेन व्याप्तं सर्वमिदं जगत् तमीश्वराणां परमं महेश्वरम् तं देवतानां परमाधि दैवतम् ॥ पतिंपतीनां परमं परस्ताद्विदाम देवं भुवनेशमीड्यम् ॥२५॥ ब्रह्मविन्दुपनिषदि ॥ नैवचिन्त्यं नचाचिन्त्यं अचिन्त्यं चिन्त्यमेवच ॥ पक्षपात विनिर्मुक्तं ब्रह्मसम्पद्यतेतदा ॥२६॥ निर्विकल्पमनन्तं च हेतुदृष्टान्त वर्जितम् ॥

आदिमें हिरण्यगर्भको उत्पन्न किया वही महर्षि रुद्र हम सबको शुभ कर्मोंमें प्रेरणा करे ॥२२॥ सूक्ष्मसे भी अति सूक्ष्म होकर हृदय कमलमें वास करनेवाला जगतको उत्पन्न कर व्यापक होकर रहते हैं उनको जो जानते हैं सो अत्यन्त शान्तिको प्राप्त होते हैं ॥२३॥ माया प्रकृति शक्ति है उसका अधिपति महेश्वर है इन्हीं दोनोंमें सब जगत है ॥२४॥ जो ईश्वरोंका भी ईश्वर देवताओंका अधिदेवता पतियोंका पति और सब बड़ोंमें बड़ा चौदहो भुवनसे पूज्य शिवको मैं जानता हूँ ॥२५॥ जो मन वचन कर्म अप्राप्य और प्राप्य भी है

अप्रमेय मनाद्यञ्च ज्ञात्वाच परमं शिवम् ॥२७॥ स्कान्दे सौर संहितायाम् ॥ त्रिमूर्तिनान्तु सर्ग स्थानं तत्परमं शिवः ॥ शब्दा दीनान्तु भूताना मुत्पत्तिं कुरुते स्वयम् ॥२८॥ भर्गोपनिषदि ॥ यदि योन्याः प्रमुच्येहं तत्प्रपद्ये महेश्वरम् ॥ अशुभक्षय कर्तारं फल मुक्ति प्रदायकम् ॥२९॥ नारायणोपनिषदि ॥ एषोहि देवः प्रदिशोऽनुसर्वाः पूर्वोंहिजातः सउगर्भे अन्तः सविजायमानः जनिष्य माणः प्रत्यङ्मुखास्तिष्ठ-तिविश्वतोमुखः ॥३०॥ ब्रह्मोपनिषदि ॥ एकोवशी सर्व भूतान्तरात्मैकं रूपं बहुधायः करोति ॥ तमात्मस्थं

समष्टि व्यष्टि ज्ञानसे पक्षपात रहित ब्रह्म निर्विकल्प कारण दृष्टान्तसे वर्जित अप्रमेय अनादि परमशिव जानने योग्य हैं ॥२६॥२७॥ स्कन्द-पुराणके सौर संहितामें लिखा है कि ब्रह्मा विष्णु रुद्र तीनोंको उत्पन्न करनेवाला तथा आकाशादि पंचभूतोंको शब्दादि गुणोंके साथ उत्पन्न करनेवाला परम शिव हैं ॥२८॥ भर्गोपनिषदमें लिखा है कि यदि इस योनिसे मैं छुटूँगा तो शिवके शरणमें जाऊँगा जो अशुभका नाशक तथा मुक्ति फलदाता हैं ॥२९॥ नारायणोपनिषदमें लिखा है कि सब दिशा विदिशाओंमें व्याप्त बाहर भीतर गर्भमें रहनेवाला चारो तरफ मुखवाला वही उ (शिव) है ॥३०॥ ब्रह्मोपनिषदमें लिखा

येनु पश्यन्ति धीरास्तेषां सुखं शास्वतंनेतरेषाम ॥२१॥ अथर्वशिर उपनिषदि ॥ ध्यायितेशानं प्रध्यायितव्यं ब्रह्मविष्णु रुद्रास्ते प्रस्तुवन्ति ॥ शिव एकोध्येयः शिवंकरः सर्वमन्यत्परिज्य ॥२२॥ नृसिंहता पिन्युपनिषदि ॥ ऋतं सत्यं परब्रह्म पुरुषं कृष्णपिङ्गलम् ॥ उर्ध्वरेतं विरूपाक्षं शंकरं नीललोहितम् ॥ २३ ॥ उमापतिः पशुपतिः पिनाकीह्यमितद्युतिः ॥ ईशानः सर्वविद्यानामीश्वरः सर्वभूतानां ब्रह्माधिपति र्यो वैयजुर्वेदवाच्यस्तं सामजानीयाद्योजानीते सोमृतत्वञ्च गच्छति ॥२४॥ एषसर्वेश्वरः एष सर्वज्ञः एषोऽन्तर्य्या-

है कि वही एक सब जीवोंके भीतर रहनेवाला रूप रूपमें होकर अनेक रूप होता है जो ज्ञानी पुरुष उनको अपनेमें देखते हैं उनको निरन्तर सुख प्राप्त होता है ॥२१॥ अथर्वशिर उपनिषदमें लिखा है कि ब्रह्मा विष्णु रुद्र जिनका सदा ध्यान करते हैं सब छोड़कर उन्हींका ध्यान करना चाहिए ॥२२॥ नृसिंहतापिनी उपनिषदमें लिखा है कि नित्य सत्य परब्रह्म कृष्णपिंगल उर्ध्वरेता त्रिनेत्र नीललोहित शंकर हैं ॥२३॥ उमापति पशुपति पिनाकी अमितप्रकाशमान शिव सब विद्याओंका अधिपति हैं और सब जीवोंका अधिपति हैं जिनको यजुर्वेद कहता है सामवेद गान करता है उनको जो जानते हैं सो

म्मेषयोनिः सर्वस्यप्रभवाप्ययौहिं भूतानाम् ॥ नान्तः प्रज्ञंनवहिः प्रज्ञं नोभयतः प्रज्ञं नप्रज्ञं नाप्रज्ञं प्रज्ञानघनं प्रपञ्चोपसमं शान्तं शिवमद्वैतं तूरीयं मन्यन्ते स आत्मा स विज्ञेयः ॥३५॥ नारद परिव्राजकोपनिषदि ॥ संयुक्तमेतत्क्षरम क्षरञ्च व्यक्ताव्यक्तं भरते विश्वमीशः ॥ अनीश आत्मा बुध्यते भोक्तृभावञ्ज्ञात्वादेवं मुच्यते सर्वपाशैः ॥३६॥ क्षरम्प्रधानममृताक्षरं हरः क्षरात्मानावीशते एकदेवः ॥ तमभिध्यानाद्योजना त्तत्वभाभाद्भूयश्चान्ते विश्वमायानिवृत्तिः ॥ ३७ ॥ त्रिशिखी-

अमृत हो जाते हैं ॥३४॥ और एही सर्वेश्वर सर्वज्ञ अन्तर्जामी सब जीवोंका योनिरूप पालक उत्पादक नाशक है जो भीतरके बुद्धिसे और बाहरके बुद्धिसे नहीं प्राप्त होता है प्रज्ञान घन वृत्ति द्वयातीत (फलव्याप्तिज्ञान १ वृत्तिव्याप्तिज्ञान २) इन दोनोंसे परें हैं उनको जाननेसे संसार नष्ट हो जाता है वहीं आत्मा शिव तूरीया (समाधिसे) प्राप्त होता है ॥३५॥ नारदपरिव्राजकोपनिषदमें लिखा है कि क्षर अक्षर दोनों संयुक्त होकर साकार निराकारका पोषण करनेवाला ईश (शिव) हैं जिनका कोई ईश नहीं है उनको जो जानता है सो सब वन्धनोंसे छूट जाता है ॥३६॥ क्षरप्रधान अमृताक्षर हर हैं क्षरात्मा ईश एक देव हैं उनको जाननेसे संसारकी माया निवृत्त हो जाती

ब्राह्मणोपनिषदि ॥ पञ्चीकृतानन्तभव प्रपञ्चं पञ्चीकृत-
स्वावयवैरसंवृतम् ॥ परात्परं यन्महतोमहान्तं स्वरूपते-
जोमयशाश्वतं शिवम् ॥३८॥ मण्डलब्राह्मणोपनिषदि ॥
परमात्मदृष्ट्या प्रत्ययलक्षणानि दृष्ट्वा तदनुसर्वेशं
अप्रमेयमजं शिवं परमाकाशं निरालम्बाद्वयं ब्रह्मविष्णु
रुद्रादीनामेकलक्ष्यं सर्वकारणं दीपवदचलं ब्रह्मप्राप्नोति ॥
॥ ३९ ॥ द्रष्टुर्दर्शनदृश्यानां मध्येयद्दर्शनं स्मृतम् ॥
नातः परतरं किंचिन्निश्चयोस्त्यपरोमुने ॥४०॥ सन्न्या-
सोपनिषदि निर्मनस्कस्वभावत्वान्नतत्र कलनात्मकम् ॥

है ॥३७॥ त्रिशिखी ब्राह्मण उपनिषदमें लिखा है कि पंचभूतात्मक
अनन्त जगत जो पञ्चीकृत अवयवोंसे वेष्ठित है उसका अधिपति
उसमें रहनेवाला परसे पर महानसे भी महान तेजोमय रूप निरन्तर
रहनेवाला शिव हैं ॥३८॥ मण्डल ब्राह्मण उपनिषदमें लिखा है कि
योगी लोग चित्तको स्थिर करके जब समाधिको प्राप्त करते हैं उस
समय सर्वेश उत्पत्ति नाशरहित परमशिव आकाशवत व्यापक
निरालम्ब जिनका ब्रह्मा विष्णु रुद्र ध्यान करते हैं ज्योतिके सदृश
अचल ब्रह्म प्राप्त होते हैं ॥३९॥ देखनेवाला जो देखा जाय दर्शनरूप
क्रिया इन तीनोंके बीचमें जो दर्शन है उससे परें निश्चय दूसरा नहीं
है ॥४०॥ सन्यास उपनिषदमें लिखा है कि योगी जहाँ जानेपर

सा सत्यता साशिवता सावस्था परमात्मकी ॥ ४१ ॥ योगशिखोपनिषदि ॥ स्वात्मप्रकाश रूपं तत् किं शास्त्रेण प्रकाश्यते ॥ निष्कलं निष्क्रियं शान्तं सर्वातीतं निरामयम् ॥ तदेव जीवरूपेण पुण्यपाप फलैवृतम् ॥४२॥ लज्जा तृष्णा भयक्रोधो विषादो हर्षएवच ॥ एभिर्दोषैर्विनिर्मुक्तः स जीवः शिव उच्यते ॥४३॥ कुण्डलिकोपनिषदि ॥ अथशैवं पदं यत्र तद्ब्रह्म ब्रह्मतत्परम् ॥ तदभ्यासेन लभ्येत पूर्वजन्माऽर्जिताऽऽत्मनाम् ॥ ४४ ॥ कठरुद्रोपनिषदि ॥ यदाह्येवैषमेतस्मिन्नप्यल्प मन्तरं नरः ॥ विजानाति तदा तस्य

मनका संकल्प विकल्पसे रहित हो जाता है वही सत्य परमात्मा शिव हैं ॥४१॥ योगशिखा उपनिषदमें लिखा है कि प्रकाशरूप आत्माको मैं शास्त्रसे क्या वर्णन करूँ जो कलारहित क्रियारहित शान्त मन वचनसे परें है और वही जीवरूपसे सबके हृदयमें पुण्य पापफलोंसे आवृत्त है ॥४२॥ लज्जा, तृष्णा, भय, क्रोध, विषाद, हर्ष, इन दोषोंसे छुटा हुआ जीव शिव है ॥४३॥ कुण्डलिकोपनिषदमें लिखा है कि जो शैव पद है वही ब्रह्मपद है और जो ब्रह्मपद है वही शैवपद है ऐसा ज्ञान पूर्वजन्मके पुण्यसे और अभ्यास करनेसे प्राप्त होता है ॥ ४४॥ कठरुद्रोपनिषदमें लिखा है कि जो पुरुष शिवपद और ब्रह्मपदमें

भयंस्यान्नात्र संशयः ॥ ४५ ॥ अस्यैवानन्दकोशेन ब्रह्मन्ता विष्णुपूर्वकाः ॥ भवन्ति सुखिनो नित्यं तारतम्यक्रमेण तु ॥४६॥ यावालदर्शनोपनिषदि ॥ ऋतं सत्यं परब्रह्म सर्वं संसार भेषजम् ॥ उर्ध्वरेतं विरूपाक्षं विश्वरूपं महेश्वरम् ॥ ४७ ॥ वाराहोपनिषदि ॥ शिवो गुरुः शिवोवेदः शिवोदेवः शिवः प्रभुः ॥ शिवोस्म्यहं शिवस्सर्वं शिवादन्यं न किंचन ॥ ४८ ॥ तमेव धीरोविज्ञाय प्रज्ञां कुर्वीत ब्राह्मणः ॥ नानुध्यायेद्बहुंच्छब्दान्वाचो विग्लापनंहि तत् ॥ ४९ ॥ साण्डिल्योपनिषदि ॥ आकाशवत्सर्वगतं सुसूक्ष्मं निरंजनं

कुछ भी अन्तर मानता है सो महाभयको प्राप्त होता हैं ॥४५॥ उसी ब्रह्मानन्दके भीतर ही ब्रह्मा विष्णु आदि देवगण अपनेको सुखी मानते हैं ॥४६॥ या वालदर्शन उपनिषद्में लिखा है कि नित्य सत्य परब्रह्म संसाररूपी रोगका महौषध उर्ध्वरेता त्रिनेत्र जगन्मय महेश्वर शिव हैं ॥४७॥ वाराहोपनिषदमें लिखा है कि एक शिव ही गुरू वेदरूप देवता हैं और शिवमय सब जगत. शिव शिवसे अन्य कुछ नहीं है ॥४८॥ धीर ज्ञानी पुरुष उन्हींको सबमय जानकर उसी विषयमें बुद्धिको बढ़ावें बहुत पढ़नेसे क्या लाभ है ॥४९॥ साण्डि-

निष्क्रियं सन्मात्रं चिदानन्दैकरसं शिवं प्रशान्तं अमृतं ब्रह्म यश्चविश्वं सृजतिविश्वं विभर्तिविश्वं भुंक्ते स आत्मा ॥५०॥ महोपनिषदि ॥ नसन्नाऽसन्नसदभावो-भावनञ्च ॥ चिन्मात्रं चैतन्यरहितमनन्तमजरं शिवम् ॥ आदिमध्यान्तपर्यन्तं यदनादि निरामयम् ॥ ५१ ॥ शिव गीतायां प्रथमाध्याये ॥ सत्यज्ञानात्मको नन्तः विभुरात्मा महेश्वरः ॥ तस्यैवांशो जीवलोके हृदये प्राणिनां स्थितः ॥ ५२ ॥ स्कन्दोपनिषदि ॥ जीवः शिवः शिवोजीवः सजीवः केवलः शिवः ॥ तुषेण वद्धो वृहिस्यात्तुषाभावेतु तन्तुलः ॥५३॥ एवं वद्धस्त-

ल्योपनिषदमें लिखा है कि आकाशवत् व्यापक सूक्ष्म निष्कृय सत्ता मात्र चैतन्य आनन्दरूप एकरस शिव शान्त अमृत ब्रह्म है और वही आत्मा जगतका उत्पत्ति पालन नाश करता है ॥५०॥ महोपनिषदमें लिखा है कि सत असत दोनोंसे रहित चैतन्यमात्र चैतन्यसे भी रहित अनन्त अजर अमर आदि मध्य अन्तसे रहित निरामय शिव हैं ॥५१॥ शिवगीताके अध्याय प्रथममें लिखा है कि सत्य ज्ञान अनन्त विभु आत्मा महेश्वर हैं और उन्हींका अंश जीवरूपसे सबके हृदयमें स्थित है ॥५२॥ स्कन्दोपनिषदमें लिखा है कि जीव शिव है और

थाजीवः पाशमुक्तः सदाशिवः ॥५४॥ श्वेताश्वररोपनिषदि यजुर्वेदेऽपि ॥ यो देवोऽग्नौ योऽप्सु यो विश्व भुवनमाविवेश ॥ य औषधीषु योवनस्पतिषु तस्मै देवाय नमोनमः ॥५५॥ यो देवानां प्रभवश्चोद्भवश्च विश्वाधिपोरुद्रो महर्षिः ॥ हिरण्यगर्भं रचयामास पूर्वं सनोबुध्या शुभया संयुनक्तु ॥ ५६ ॥ वेदाहमेतं पुरुषं महान्त मादित्यवर्णं तमशः परस्तात् ॥ तमेवमविदित्वाऽति मृत्युमेतिनान्यः पन्था विद्यतेऽयनाय ॥ ५७ ॥

शिव जीव है अन्तःकरण चतुष्टय मन १ बुद्धि २ चित्त ३ अहंकार ४ से रहित केवल जीव शिव है जैसे भुसाके साथ धान भुसा छूट जानेपर चावल उसका नाम हो जाता है वैसे ही कर्मपासमें बँधा हुआ जीव है कर्मोंके नाश हो जानेपर वही जीव शिव हो जाता है ॥५३॥५४॥ श्वेताश्वतरोपनिषद तथा यजुर्वेदमें लिखा है कि जो देव अग्नि जल आदि सबमें व्याप्त होकर विश्वके भुवनोंमें प्रविष्ट है और जो वृक्ष औषधियोंमें है उस देवको मैं नमस्कार करता हूँ ॥५५॥ जो रुद्र देवताओंका उत्पादक नाशक है और विश्वसे अधिक है उसने पूर्वकालमें हिरण्यगर्भको उत्पन्न किया वही रुद्र शुभकर्मोंमें हमारे बुद्धिको प्रेरणा करें ॥५६॥ मैं उस महापुरुषको जानता हूँ जो तमसे परें सूर्यके प्रकाशके सदृश है उनको जो नहीं जानते हैं सो अति मृत्युको प्राप्त होते हैं उनके अतिरिक्त मोक्षका

तदेवाग्निस्तदादित्यः स्तद्वायुस्तदुः चन्द्रमा ॥ तदेव शुक्रं तद्ब्रह्म तदापस्तत्प्रजापतिः ॥ ५८ ॥ सूक्ष्माति सूक्ष्मं कलिलस्य मध्ये विश्वस्यश्रष्टार मनेकरूपम् ॥ विश्वस्यैकं परिवेष्टितारं ज्ञात्वा शिवं शान्ति मत्यन्त-मेति ॥५९॥ यत्राऽतमस्तं नदिवानरात्रिर्नसन्नचास-च्छिव एव केवलः ॥ सदक्षरं तत्सवितुर्वरेण्यं प्रज्ञाच तस्मात्प्रसृता पुराणी ॥ ६० ॥ न तस्य कार्य्यं करणञ्च विद्यते नतत्समश्चाप्यधिकश्च विद्यते ॥ पारास्य शक्ति

दूसरा मार्ग नहीं है ॥५७॥ वही एक शिव अग्नि, चन्द्र, सूर्य, वायु, ब्रह्म, प्रजापति है उकाराक्षर वाच्य तथा शुक्र अर्थात् शुद्ध तेजोमय वही है ॥५८॥ सूक्ष्मसे भी अति सूक्ष्म होकर सब प्राणियोंके हृदयमें रहते हैं तथा अनेक रूप धारणकर जगतका सृष्टि करते हैं और विश्वके बाहर भीतर रहते हैं उनको जो जानते हैं वे अत्यन्त शान्तिको प्राप्त होते हैं ॥५९॥ ब्रह्मग्रन्थि १ विष्णुग्रन्थि २ रुद्र-ग्रन्थि ३ तीनों ग्रन्थिको भेदन कर योगी परम शिवमें जब लय होता है तब वहाँ दिन रात्रि सत असतका विभागं नहीं रहता और अक्षर 'सवितुर्वरेण्य' जो गायत्रीसे कहे गये हैं उन्हीमें लय हो जाता है ॥६०॥ उसका हम लोगोंके सदृश पञ्चभौतिक शरीर नहीं है और उसके समान वा अधिक कोई नहीं है उसकी पवित्र शक्ति

विविधैव श्रूयते स्वाभाविकी ज्ञानबलक्रियाच ॥६१॥ न तस्यकश्चित्परमस्तिलोके न चेशिता नैवच तस्य लिङ्गम् ॥ स कारणं कारण कारणाधिपो न चास्य कश्चिज्जनिता न चाधिपः ॥ ६२ ॥ यो ब्रह्माणं विदधाति पूर्वं यो वै वेदाश्च प्रहिणोति तस्मै अजात इत्येवं कश्चिद्भीरुः प्रतिपद्यते रुद्रयत्ते दक्षिणं मुखं तेन मां पाहिनित्यम् ॥६३॥ मायान्तु प्रकृतिम्विद्धि मायिनन्तु महेश्वरम् ॥ तस्यावयवभूतेन व्याप्तं सर्वमिदं जगत् ॥ ६४ ॥ सर्वान न शिरोग्रीवः सर्वभूत गुहाशयः ॥ सर्वव्यापी स भगवान् तस्मात्सर्वगतः शिवः

वेद शास्त्रों द्वारा सुननेमें आती है ॥६१॥ लोकमें उससे परे वा उसका नियन्ता कोई नहीं है सब कारणोंका कारण सब अधिपतियोंका अधिपति चिन्हरहित एक वही है उसका उत्पन्न करनेवाला कोई नहीं है ॥६२॥ जो पूर्वकालमें ब्रह्माको उत्पन्नकर वेदोंको दिये संसारसे डरता हुआ कोई पुरुष ऐसा कहता है कि हे रुद्र ! जन्म मृत्यु जरासे रहित जो आप हैं सो आपका जो पाँच मुखोंमें जो दाहिने तरफका मुख है उस मुखसे रक्षा कीजिये ॥६३॥ माया प्रकृति (शक्ति) मायायुक्त महेश्वर शिव हैं उन्हींके अवयवमें सब जगत है ॥६४॥ वह भगवान सर्वव्यापी सब ओर मुखवाले

॥६५॥ शुल्क यजुर्वेदसंहितायां पञ्चविंशेध्याये मं० १८ तमीशानं जगतस्तस्थुषस्पतिं धियं जिन्वबसे हूमहेवयम् ॥ पूषानो यथाव्वेदंसामसद्वृधेरक्षितापा युरदब्धः स्वस्तये ॥६६॥ तत्रैवद्वात्रिंशेऽध्याये मं० १ तदेवाग्निस्तदादित्य स्तद्वायुस्तदुश्चन्द्रमाः ॥ तदेवशुक्रं तद्ब्रह्म तदापः स प्रजापतिः ॥६७॥ तत्रैवचतुस्त्रिंशत्य-ध्याये मं० १ यज्जायतो दूरमुदैतिदैवं तदुसुप्तस्य तथै-वैति ॥ दूरङ्गमं ज्योतिषां ज्योतिरेकं तन्मेमनः शिवसंकल्प

सबके हृदयमें रहनेवाले हैं अतः शिव ही सर्वव्यापी हैं ॥६५॥ शुल्क यजुर्वेद अध्याय पचीस मन्त्र १८ में लिखा है कि उस प्रसिद्ध स्थावर जंगम चराचर सब जगतका पति और सब प्राणियोंको बुद्धि देनेवाले ईशान (रुद्रदेव) को रक्षाके लिये बुलाता हूँ अवि-नाशी पोषण करनेवाले देव हमारे धनपुत्रादिका पालन करनेवाले हों ॥६६॥ पुनः वहाँ ही अध्याय ३२ मन्त्र १ में लिखा है कि वही एक देव अग्नि, सूर्य, वायु, उकाररूप, चन्द्रमा, शुद्ध, ब्रह्म, प्रजापति, सबरूपसे रहता है ॥६७॥ अध्याय ३४ में लिखा है कि जिनके जाग्रत हो जानेपर (प्रसन्न हो जानेपर) दूर भी जो प्रारब्ध है सो उदयको प्राप्त हो जाती है और वहीं उ (शिव) के सूत जानेपर उत्तम भी प्रारब्ध सुख नहीं देती है वह शिव कैसे हैं कि

मस्तु ॥६८॥ यत्प्रज्ञानमुतचेतो धृतिश्च यज्ज्योति रन्तर-मस्मृतं प्रजासु ॥ यस्मान्नऋृतेकिञ्चनकर्म क्रियते तन्मे-मनः शिवसंकल्पमस्तु ॥ ६९ ॥ तत्रैव उनचत्वारिंशे-ध्याये मं०॥ ९ उग्रं लौहित्येन मित्रꣳ सौव्रत्येन रुद्रं दौर्व्रत्येनेन्द्रं प्रकीडेन मरुतो बलेन साध्यान्प्रमुदा ॥ भवस्य कठ्यꣳ रुद्रस्यान्तः पार्श्वं महादेवस्य यकृत् शर्वस्य वनिष्टुः पशुपतेः पुरीतत् ॥७०॥ अ० १६ मं० ८ ॥ नमोस्तु नीलग्रीवाय सहस्राक्षाय मीढुषे ॥

जहाँ सूर्य चन्द्र अग्निका प्रकाश नहीं है दूरंगम सब ज्योतियोंका एक ज्योति स्वरूप उनमें मेरा मन संकल्प करे ॥६८॥ जो बुद्धि चित्त घृत्ति रूप है और जो सब जीवोंके अन्तर ज्योतिरूपसे रहता है जिससे बाहर होकर मनुष्य कोई काम नहीं कर सकता है उस शिवमें मेरा मन संकल्प करे ॥६९॥ पुनः अध्याय ३९ में लिखा है कि लोहित द्वारा उग्रदेवको श्रेष्ठगत्या कर्म करनेवालेसे मित्रदेवको जो शरीरका रक्त दुवृत्त करनेको प्रवृत्त होता है उससे रुद्रको क्रीड़ा करनेमें समर्थ रक्त द्वारा इन्द्रको बलप्रकाशमें समर्थ द्वारा वायुको प्रसन्नता करनेवाला रक्तद्वारा साध्यदेवको पार्श्वके मध्य रक्तसे रुद्रको यकृतके द्वारा महादेवको स्थूलान्त्र द्वारा शर्वको हृदयाच्छादक नाड़ीके रक्तिमासे पशुपतिको प्रसन्न करता हूँ ॥७०॥ पुनः अध्याय १६ में लिखा है

अथोयेऽय सत्वानो हन्तेभ्यः करवन्नम ॥ ७१ ॥ मन्त्र २९॥ नमः कपर्दिनेच व्युप्तकेशाय च नमः सहस्राक्षायच शतधन्वनेच नमोगिरिशयाच शिपिविष्ठायच नमो मीढुष्टमाय चेषुमतेच ॥ ७२ ॥ ऋग्वेदेऽपि ॥ अन्तरिच्छन्ति तं जनो रुद्रम्परो मनीषया जृम्णाति जिह्वाया स समिति ॥ ७३ ॥ आश्वलायनोऽपि तस्मै शिवाय महते नमः सूक्ष्मा क्षरात्मने ॥ ७४ ॥ अथर्व वेदे नमस्ते अस्त्वायते नमो अस्तु परायते नमस्ते रुद्र

कि 'नीलग्रीव' नीलजोतम अविद्या उसको गृणाति अर्थात् ग्रहण करे वा विषयको ग्रहण करनेवाला 'सहस्राक्ष' अनन्त नेत्रसे जगतको देखनेवाला वा इन्द्ररूप 'मीढुषे' मेघरूपसे वृष्टि देनेवाला उनके निमित्त नमस्कार है ॥७१॥ मन्त्र २९ में लिखा है कि 'कपर्दिने' जटाजूटधारी 'व्युप्तकेशाय' आकाशमें व्यापक केशवाले 'सहस्राक्षाय' अनन्त नेत्रवाले अथवा इन्द्ररूप सैकड़ों धन्वा धारण करनेवाले 'गिरिशयाय' कैलाश पर्वतपर शयन करनेवाले 'शिपिविष्टाय' विष्णु रूप वा यज्ञरूप अथवा शिपि पशुको कहते हैं उसपर बैठनेवालेको नमस्कार है ॥७२॥ ऋग्वेदमें लिखा है कि बिना रुद्रका ध्यान किये जो भोजन करते हैं सो जिह्वासे मल ग्रहण करते हैं ॥७३॥ आश्वलायनने लिखा है कि सूक्ष्म अक्षरात्मा शिवको हमारा नमस्कार है ॥७४॥

तिष्ठत आसीनायते नमः ॥ ७५ ॥ योभियातो निलये त्वां रुद्रविचिकीर्षति पश्चादनुप्रयुङ्क्तेतं विद्धस्य पदवीरिव ॥७६॥ नादविन्दुपनिषदि ॥ अतीन्द्रियं गुणातीतं मनोलीनं यदा भवेत् ॥ अनूपमं शिवं शान्तं योगयुक्तं तदाविशेत् ॥७७॥ ध्यानविन्दुपनिषदि ॥ रेचकेन तु विद्यात्मा ललाटस्थं त्रिलोचनम् ॥ शुद्धस्फटिकसंकाशं निष्कलं पापनाशनम् ॥ ७८ ॥ रुद्रहृदयोपनिषदि ॥ श्रीरुद्ररुद्ररुद्रेति यस्तं ब्रूयाद्विचक्षणः ॥ कीर्त-

अथर्ववेदमें लिखा है कि हे रुद्र ! हमारे सन्मुख आते हुये परांमुख जाते हुए जहाँ आप हों अथवा अपने स्थानमें स्थित आपको नमस्कार है ॥७५॥ जो दुःकर्मी गुप्तरीतिसे भी आपका आज्ञा भंग करता है उसे आप दण्ड देते हैं जैसे व्याधा घायल मृगको रुधिरादि चिह्नसे पकड़ लेता है वैसे ही हे रुद्र देव ! आप भी उस दोषीको पकड़ लेते हैं ॥७६॥ नादविन्दुपनिषदमें लिखा है कि योगी लोग जब मनको शान्त करके समाधिमें लीन होते हैं तब उनको इन्द्रियोंसे परें तीनों गुणोंसे भी परें उपमारहित शान्त शिव प्राप्त होते हैं ॥७७॥ ध्यानविन्दुपनिषदमें लिखा है कि प्राणायाममें रेचकके (छोड़नेके) समय ललाटमें सब विद्याओंको उत्पन्न करनेवाला शुद्ध स्फटिकके सदृश तीन नेत्र कलारहित पापनाशक शिवका ध्यान करना

नात्शर्वदेवस्य सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥७६॥ त्रिपुरातापिन्युपनिषदि ॥ शिवोऽयं परमोदेवः शक्ति रेषातु जीवज्ञा ॐ नमः शिवायेति यजुषामन्त्रोपासको रुद्रत्वं प्राप्नोति य एवं वेद ॥८०॥ यजुर्वेदेऽपि ॥ नमः शम्भवाय च मयोभवायच ॐ मनः शिवाय च मयस्करायच ॥८१॥ निरालम्बोपनिषदि ॥ ॐ नमः शिवाय गुरवेसच्चिदानन्दमूर्तये ॥ निष्प्रपञ्चाय शान्ताय निरालम्बाय तेजसे ॥८२॥ वृहज्जावालोपनिषदि ॥ शिवश्चोर्ध्वमयः शक्तिः शक्तिरुर्ध्वमयः शिवः ॥ तदित्थं शिवशक्तिभ्यां नाव्याप्तमिह किंचन ॥८३॥ लिंगाध्याये ॥

॥७८॥ रुद्रहृदयोपनिषदमें लिखा है कि श्रीरुद्र रुद्र रुद्र तीन बार जो स्मरण कीर्तन करते हैं उनके सब पाप छूट जाते हैं ॥७६॥ त्रिपुरातापिनी उपनिषदमें लिखा है कि परमदेव शिवशक्तिका यजुर्वेदसे कहा हुआ मन्त्र 'ॐ नमः शिवाय' का जो जप करते हैं सो शिवरूप हो जाते हैं ॥८०॥ यजुर्वेदमें भी लिखा है कि सम्भवाय मयोभवाय नमः शिवाय मयस्कराय इन सब नामवाले शिवको मैं नमस्कार करता हूँ ॥८१॥ निरालम्बोपनिषदमें लिखा है कि सच्चिदानन्द मूर्ति निष्प्रपंच शान्त निरालम्ब गुरुरूप शिवको मैं नमस्कार करता हूँ ॥८२॥ वृहज्जावालोपनिषदमें लिखा है कि शिवके ऊपर शक्ति और

सर्वव्रतेषु सम्पूज्य देवदेव मुमापतिम् ॥ जपेत्पञ्चाक्षरीं विद्यां विधिनैव द्विजोत्तम ॥८४॥ अथ महावाक्यानि चत्वारि यथा ॥ ॐ ज्ञान मानन्दं ब्रह्म १ ॐ अहं ब्रह्मास्मि २ ॐ तत्वमसि ३ ॐ अययात्मा ब्रह्म ॥ ४ तत्वमसीत्यभेद वाचक मिदं ये जपन्ति ते शिव सायुज्यमुक्ति भाजो भवन्ति ॥ ८५ ॥ श्वेताश्वतरोपनिषत्प्रदीपे ॥ तवरुद्रतनुर्य्याऽत्र प्रसिद्धामङ्गलात्मिका ॥

शक्तिके ऊपर शिव दोनों करके व्याप्त यह जगत है ॥८३॥ लिंगाध्यायमें लिखा है कि सब व्रत यज्ञ दान आदि कर्मोंमें देव देव उमापतिका पूजन और पञ्चाक्षर मन्त्रका जप करना आवश्यक है जैसे कि लिखा है (सर्वेशुभाशुभे कार्ये कलशस्थापनं भवेत ॥ अर्द्धनारीश्वरस्येयं पूजोक्ता कलशाग्रतः) सब शुभ या अशुभ कार्योंमें कलशस्थापन होता है और कलशके अग्रभागमें गोमयका दो पिण्डी बनाया जाता है वही शिव पार्वतीका पूजन होता है ॥८४॥ चारों वेदोंमें चार महावाक्य है पहला ब्रह्मज्ञान और आनन्दरूप है।

दूसरा—मैं ब्रह्म रूप हूँ।

तीसरा—तवन ब्रह्म तुम हो।

चौथा—यह जीवात्मा ब्रह्मरूप है।

इन चारों महावाक्योंको शिवसे अभेद मानकर जो जप करते हैं सो शिव सायुज्य मुक्तिको प्राप्त होते हैं ॥८५॥

सौम्यरूपाथ पापानां हारिणी गुरुरूपिणी ॥ ८६ ॥
तयातन्वामहेशान ह्यानन्द तमयापि च ॥ अस्मान्मोह-
पिनद्धाद्धान् गिरिशस्त्वं प्रकाशय ॥८७॥

अथ सोऽहं मन्त्र जपस्य क्रममुच्यते यद्दत्तंगुरुणा ॥
पीताभं भ्रमरस्थानं द्वादशैतद्दलावृतम् ॥
मनः प्राणलयस्थानं शिखास्थानं निदर्शितम् ॥१॥
सस्रारे जपेद्धीमानेकविंशति संख्यया ॥ सहस्राणां
शतैषड्भिर्गुरवेतन्निवेदयेत् ॥ २ ॥ षट्शतानिदिवात्रौ

श्वेताश्वतरोपनिषदमें लिखा है कि हे रुद्र ! आपका सौम्य रूप मङ्गलमय पापोंको हरण करनेवाली जो शरीर है उस शरीरसे मोहान्धकारमें पड़े हुए हम सबोंको प्रकाश कीजिए ॥८६॥८७॥ (सोऽहं) अजपाजप जिसको कहते हैं षट् चक्रानुसार उसका क्रम जो हमको गुरु द्वारा प्राप्त हुआ है उसको आगे लिखते हैं ॥ शिखा स्थानमें पीतवर्ण बारह दलोंसे युक्त भ्रमर गुहा है जब ब्रह्मग्रन्थि, विष्णुग्रन्थि, रुद्रग्रन्थिको भेदनका प्राणवायु मनके साथ यहाँ पहुँचता है तदाकार वृत्ति होकर लय हो जाता है ध्याता—ध्यान—ध्येय तीनोंसे विहीन होकर शिवरूप हो जाता है ॥१॥ उसके आगे ललाटमें सहस्र दल कमल है वहाँ शिव रूप गुरुका ध्यान करके एक इस हजार छः सब दफे (सोऽहं) मन्त्रका जप करके गुरुको समर्पण करना ॥२॥ इस देहमें बैठे हुए

सहस्राण्येकविंशतिः । हंसः सोहमिमं मन्त्रं जीवो जपति सर्वदा ॥ ३ ॥

शक्तिश्चैतन्यरूपात्र ऋषिश्चापि विराड् भवेत् ॥
देवतात्र गुरुः प्रोक्तस्तत्वार्थे विनियोजनम् ॥४॥
आज्ञाख्ये द्विदलस्थाने गुरोराज्ञेति कीर्त्यते ॥
चन्द्राग्निदेवते शक्तिश्चामृतात्मा ऋषिः परः ॥५॥

देवता सब सुकृत दुःष्कृत देखते रहते हैं इस भयसे यह जीव हर श्वासमें एकइस हजार छः सौ दफे दिन रातमें (सोऽहं) (वः ब्रह्म मैं हूँ) इस मन्त्रका जप करता है ॥३॥ इस स्थानका चैतन्य रूपा शक्ति विराट् ऋषि गुरु देवता तत्व ज्ञान प्राप्तिमें प्रयोजन है ॥४॥ उसके आगे दोनों नेत्र और भ्रूके मध्य रक्तवर्ण द्विदल हंक्षं दोनों वीजसे युक्त आज्ञा चक्र है यहाँपर शिव रूप गुरुका ध्यान कर मानस पूजा करना अग्नि शक्ति है चन्द्रमा ऋषि हैं जीव ब्रह्म दोनोंके एकता होनेमें प्रयोजन है मानस पूजाका क्रम ॥

लँ पृथिव्यात्मकं गन्धं समर्पयामि नमः
हँ आकाशात्मकं पुष्पं समर्पयामि नमः
यँ वाय्वात्मकं धूपं समर्पयामि नमः
रँ वह्न्यात्मकं दीपं समर्पयामिनमः
वँ अमृतात्मकं षड्रसोपेतं नैवेद्यं समर्पयामि नमः
सँ सर्वात्मकं ताम्बूलं समर्पयामि नमः

जीवब्रह्मद्वयोरैक्ये विनियोगः प्रकीर्तितः ॥
लम्बीजाद्यैः शिवं ध्यात्वा पूजयेद्विदलान्तरे ॥६॥
सहस्रैकं जपेत्सोहं जप्त्वा देवाय चार्पयेत् ॥
ज्ञं द्वं वीजद्वयं यत्र दलेरक्तेसु संस्थितम् ॥७॥
विशुद्धयाख्ये दलेचास्मिन्कण्ठे धूम्रं प्रकीर्तितम् ॥
देवता वरुणो ह्यत्र ऋषिर्ब्रह्मा चतुर्मुखः ॥ ८ ॥
ज्ञानेच्छा कृतिः शक्तिः षोडशारेसुचिन्तयेत् ॥
स्वरैः षोड़शकैर्य्युक्तैः प्रतिपत्तं विभावयेत् ॥९॥
सम्पूज्य मानसैर्देवं परमात्मानमन्वहम् ॥
जपेत्सोहं सहस्रेण जप्त्वा देवाय चार्पयेत् ॥१०॥

भ्रूके मध्यमे शिवरूप गुरुका इसी मन्त्रोंसे मानस पूजा करना ॥५॥६॥

दोनों दलमें ज्ञँ—द्वँ दोनों बीज है एक हजार सोऽहं मन्त्रका यहाँ जप करके शिवको समर्पण करना ॥७॥ विशुद्धाख्य नाम करके कण्ठमें सोलह दलका चक्र धूम्रवर्ण है वरुण देवता हैं ब्रह्मा ऋषि हैं ॥८॥ ज्ञान इच्छा कृति शक्ति है सोलहों स्वरोंसे युक्त है ॥९॥ यहाँपर मायायुक्त महेश्वरका पूजन कर एक हजार सोऽहं मन्त्रका जपकर देवको समर्पण करना—समर्पणका मन्त्र ॥ गुह्यातिगुह्य गोप्तात्वं गृहाणास्मत्कृतं जपम् ॥ सिद्धिर्भवतुमेदेवत्वत्प्रसान्मयिस्थितिः

अनाहते हृदस्थाने श्वेतवर्णम्प्रकीर्तितम् ॥
दलं द्वादशसंख्यंस्यात्कादिठान्ताक्षरैर्युतम् ॥११॥
देवतावैशिवस्तत्र ऋषिर्नारायणो भवेत् ॥
मोक्षार्थे विनियोगस्यात्षट् सहस्रैर्जपेध्रुवम् ॥१२॥
इहैवाधोमुखं नालदण्डेपद्मं व्यवस्थितम ॥
कदलीपुष्पसंकास मत्यतिष्ठद्दशांगुलम् ॥१३॥
तत्पद्मे कर्णिकामध्ये यदाविश्राम्यते मनः ॥
तदा सर्वगुणज्ञाने चैतन्येच मतिर्भवेत् ॥१४॥
ईशाने तु कृपाज्ञान मुत्तरेभोगवर्द्धिनी ॥
वायव्ये विमतिश्चिन्ता पश्चिमेहर्षवर्द्धिनी ॥१५॥

॥१०॥ अनाहत चक्र हृदय स्थान श्वेतवर्ण है वारह दल और कसेठ तक बारह अक्षरोंसे युक्त है यहाँका देवता शिव हैं नारायण ऋषि हैं मोक्षमे प्रयोजन है छः हजार (सोऽहं) मन्त्रका जप यहाँ करना और शिवको समर्पण करना ॥११॥१२॥ और यहाँ ही पर अनाहत चक्रके नीचे केलाके फुलके सदृश कमल है मन उसमें रहता है दश दल है ॥१३॥ उस कमलके कर्णिकामें जब मन जाता है तब सब गुण ज्ञान चैतन्य शुद्ध मन होता है ॥१४॥ ईशान दलमें जब मन जाता है तो कृपा ज्ञानमें मती होती है वायव्यमें कुबुद्धि चिन्ता पश्चिममें हर्ष नैऋत्यमें मोह दक्षिणमें क्रोध द्वेष अग्निकोणमें निद्रा आलस्य

नैऋत्ये तु दलेमोहो दक्षिणे क्रोधमत्सरौ ॥
निद्रालस्ये तथाग्नौच सन्धौजाड्यं त्रिदोषदा ॥१६॥
मणिपूरन्ततो नाभौ पद्मं कपिलवर्णकम् ॥
डादिफान्ताक्षरैर्युक्तं ध्यायेत्तत्र विशालधिः ॥१७॥
देवता विष्णुराख्यातश्चन्द्रोवैऋषिरादृतः ॥ षट्सहस्राण्यथो जप्त्वा मानसैः पूजयेत्सुधिः ॥१८॥ तस्याधस्तु भवेद्देवी शक्तिः कुण्डलनीपरा ॥ रक्तवर्णा च कामाख्या सर्परूपाति शोभना ॥१९॥ अधोमुखीस्फुरद्वक्त्रा वामभागमुखासना ॥ यत्किंचिद्भुज्यते चान्नं

पत्रोंके सन्धिमें जड़ता त्रिदोषमें मती होती है ॥१५॥ उसके नीचे नाभीमें मणिपूरक नामका चक्र है कपिल वर्ण है उसमें ड से फ तक दस दलोंमें दस अक्षरोंसे युक्त है वहाँ ध्यान विष्णुका करना ॥१६॥ यहाँका देवता विष्णु ऋषि चन्द्रमा है छः हजार सोऽहं मन्त्रका जपकर मानसपूजा करना ॥१७॥ उसके नीचे कुण्डनी नाम शक्ति रहती है रक्त वर्ण सर्प रूप अति शोभायमान है ॥१८॥ साढ़े तीन आवर्त होकर नीचेको मुख करके बायें तरफ उसका मुख रहता है और उसके मुखसे ज्वाला निकलकर जो कुछ भोजन किया अन्न है उसको भस्म करके उसका रस सब नाड़ियोंमें पहुँचाती है ॥१८॥ उसके नीचे स्वाधिष्ठान नामक छः दल चक्र है बसे लेकर ल तक

भस्मसात्कुरुते समम् ॥ रसंतन्त्रागतं सर्वं साधकं वाधकं भवेत् ॥ २० ॥

स्वाधिष्ठान ततः पीतं वादिलान्ताक्षरैर्युतम् ॥
षट्दलं हीरकप्रख्यं ब्रह्मादेवः प्रकीर्तितः ॥२१॥
गायत्रीऋषिराख्यातो मोक्षार्थे विनियोजनम् ॥
षट्सहस्रं जपेध्यात्वा पूजयित्वाथमानसैः ॥२२॥
आधारे तु त्रिकोणाख्ये रक्तवर्णं चतुर्दलम् ॥
मध्येस्वयम्भुलिङ्गन्तु बीजं शक्ति समन्वितम् ॥२३॥
वादिशान्ताक्षरैर्युक्तं देवता विघ्ननाशकः ॥
शक्तिस्सिद्धिः समाख्यातामोक्षार्थे विनियोजनम् ॥२४॥

छ अक्षरोंसे युक्त है पीतवर्ण है ब्रह्मा देवता हैं ॥२०॥ गायत्री ऋषि है मोक्षमें प्रयोजन है यहाँ भी छः हजार सोऽहं मन्त्रका जप करना और मानस पूजा करना ॥२१॥ उसके नीचे आधार चक्र है त्रिकोणके बीचमें चार दलका लाल वर्ण कमल है बीचमें शिवका लिंग बीज और शक्तिके सहित है ॥२२॥ वसे स तक चार अक्षरोंसे युक्त है और यहाँका देवता गणेश हैं सिद्धि शक्ति है मोक्षमें प्रयोजन है ॥२३॥ मानस पूजा करके छः सब सोऽहं मन्त्रका यहाँ जप करना—मनको स्थिर करनेका क्रम राज योगसे यह बताया गया है

षट्शतानि जपेदत्र पूजयित्वाथमानसैः ॥
मनसः स्थापनन्तत्वेराजयोग क्रमेण तु ॥२५॥
पञ्चभूतान्यहंकारे महत्तत्वेप्यहं कृतिम् ॥
महान्तं प्रकृतौमायामात्मनि प्रविलापयेत् ॥२६॥
सर्वोपनिषदां सारं समालोच्य मुहुर्मुहुः ॥
इदमेवहि निर्णीतं सर्वैः पूज्यो महेश्वरः ॥२७॥
महादेवात्परोदेवो नास्ति नास्ति श्रुतौ स्मृतौ ॥
तदुक्तमस्मिन्ग्रन्थेषु पक्षपात विवर्जितम् ॥२८॥

॥२४॥ पांचों भूतोंको अहंकारमें लय करना अहंकारको महतत्वमें महतत्वको मायामें मायाको आत्मा (शिवमें) लयकर योगी निर्विकल्प समाधिको प्राप्त हो जाता है इस प्रकार बारह वर्ष निरन्तर अभ्यास करनेसे शिव रूप हो जाता है जैसे कि लिखा है (द्वादशे शिवतुल्यो सौ कर्ता हर्ता स्वयं भवेत) इति २५ शिवम् सत्र वेद उपनिषद पुराण इतिहास आदि आर्ष ग्रन्थोंको बार-बार देखकर यह निश्चय हुआ कि सर्वोपरि सर्व पूज्य शिव हैं ॥२६॥ श्रुति स्मृति पुराणादि ग्रन्थोंके ग्रन्थि देखनेसे यह निश्चय हुआ कि सर्वोपरि सर्व पूज्य परमात्मा परमेश्वर शिव हैं इस विषयको प्रमाणयुक्त पक्षपात रहित इस ग्रन्थमें कहा गया है ॥२७॥ जो पुरुष भ्रममें पड़कर इधर-उधर दौड़ते हैं सो क्यों नहीं इस पुस्तकको पढ़कर परम शिवको

ये जना भ्रमसंयुक्ता धावन्ति च इतस्ततः ॥
स कस्मान्नेदमालोक्य जानन्ति परमंशिवम् ॥२९॥
ब्रह्मा विष्णुस्तथारुद्रश्चतुर्थश्च सदाशिवः ॥
पञ्चमं शिवसंज्ञं वै सर्वकारण करणम् ॥३०॥
विष्णोः परम्पदं तत्तु पुनरावृत्तिदुर्लभम् ॥
उक्तं भगवद्गीतायां तथोपनिषदेऽपि ॥
यत्र चन्द्रश्च सूर्य्यश्च नाग्निर्यत्र प्रकाश्यते ॥
तं शिवं शाश्वतं देवं तद्विष्णोः परम्पदम् ॥३१॥
यो वैष्णवः सोऽपिच योगकाले शक्तिस्वरूपेण
विचिन्त्य विष्णुं ॥ शिवात्मके धामनि योजयेत्स्या

जाते हैं ॥२८॥ ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र चौथा सदाशिव जिनसे यह सब हुए पांचवां शिव संज्ञक जिनको ब्रह्म सच्चिदानन्द आदि नामोंसे कहा जाता है सो सब कारणोंका कारण हैं ॥२९॥ और वही शिव विष्णुका परम्पद जहाँ जानेसे मनुष्य पुनः संसारमें नहीं आता है इस बातको भगवद्गीतामें अर्जुनके प्रति श्रीकृष्णचन्द्रने कहा है और उपनिषदोंमें विस्तारपूर्वक कहा है ॥३०॥ जहाँ चन्द्रमा सूर्य्य अग्नि प्रकाशमान नहीं होते वहीं शान्त शिव, विष्णुका परम्पद हैं ॥३१॥ जो विष्णु भक्त हैं उनको भी योगकालमें विष्णुको शक्ति

दत्तः शिचदानन्द मयोहिभक्तःइत्यादि बहुशः ॥३२॥
इति श्री विप्रराजेन्द्रस्यात्मजः कालिकेश्वरः ॥
संग्रिहीतमिदं रत्नं तेन तुष्यन्तु सज्जनाः ॥३३॥

रूप ध्यान कर शिव पदमें योजना करनेसे मुक्ति प्राप्त होती है इत्यादि बहुत ऐसा वाक्य हैं संक्षेपमें लिखा ॥ इति शिवम् ॥ ३२ ॥

श्री मयोगिवर्यविप्रराजेन्द्र स्वामीजीका पुत्र पं० कालिकेश्वर दत्तजीने इस रत्नका संग्रह किया इसको पढ़कर सज्जन लोग तुष्ट हो ॥३३॥

.॥ समाप्तोऽयं ग्रन्थः ॥

३ ९ ९ १
अग्न्यङ्कग्रहभूसंख्ये वैक्रमीये शुभे दिने ।
समाप्तोऽयमिदं ग्रन्थं बैशाखे पूर्णिमा तिथौ ॥

इति श्री भाषाटीकायां चतुर्थखण्डे चतुर्थस्तरङ्गः समाप्तः ॥

अवश्य पढ़िये

चारों खण्डोंका सिद्धान्त निष्कर्ष

संस्कृतमें अकृताभ्यास साधारण समाज जनोंके समझनेके लिये चारों खण्डोंका सारांश थोड़ेमें यहाँपर प्रकाश करता हूँ। वर्णाश्रम धर्मका पालन करते हुए वैदिक मार्गमें होकर एक परमेश्वरका उपासना करना बाँकी देव सब उन्हींके अन्तर्गत हैं विरोध अथवा निन्दा किसीकी नहीं ॥ अब यहाँपर यह सन्देह हुआ कि ईश्वर परमेश्वर कौन है वेद वेदान्तादि शास्त्रोंमें तो शिव विष्णु ब्रह्मा इन्द्रवरुण कुवेर आदि सबको ईश्वर कहा है और लोकमें राजा महाराजा तथा श्रीमान् पुरुषोंको भी ईश्वर कहा है ॥ उत्तर ईश्वर शब्द दो प्रकारका है एक यौगिक दूसरा रूढ़ि यौगिक उसे कहते हैं जो उसके अर्थसे निकले जैसे (ऐश्वर्यो अस्यास्तीति ईश्वरः) ऐश्वर्य्य जिसको हो सो ईश्वर हैं तो ब्रह्मा विष्णु आदि देवोंको तथा राजा महाराजोंको भी ऐश्वर्य्य है तो ईश्वर कहा सकते हैं परन्तु इन सबोंका जो ऐश्वर्य है सो सापेक्ष्य है स्वतन्त्र नहीं है जैसे महिम्नस्तोत्रमें कहा है (सुरां स्तास्तां मृद्धिं विदति भवद्भ्रू प्रणीहितां) और देवताओंकी जो ऋद्धि-सिद्धि है सो आपके भ्रू कटाक्षसे हुई है विष्णु भगवान हजार कमल पुष्पोंसे शिवका पूजन करनेका नियम किये एक रोज एक पुष्प न्यून होनेसे अपना

नेत्र निकालकर चढ़ा दिये शिव प्रसन्न होकर दैत्योंको मारनेवाला चक्र सुदर्शन दिये और वर दिये कि (सर्वज्ञत्वं चेश्वरत्वं नियन्तृत्वञ्च सर्वतः) सर्वज्ञता ईश्वरता सबका नियंता होवो ॥ शिवमें जो ईश्वरता है सो निरपेक्ष है किसीका दिया हुआ नहीं है यौगिक भी है रूढ़ि भी है कोशमें शिवका नाम गिनाया है (शम्भु रीशः पशुपतिः शिवः शूली महेश्वरः ईश्वरः सर्वः ईशानः शंकर श्चन्द्रशेखरः) इत्यादि गीतामें भी श्रीकृष्णजीने कहा है (ईश्वरः सर्वभूतानां हृद्देशेर्जुन तिष्ठति) और गीता माहात्म्यमें गीताको शिवरूप बताया है पाँच अध्याय शिवका पाँचों मुख दश अध्याय दशो बाहू एक उदर दो अध्याय दोनों चरण है (वाङ्मयी मूर्तिरैश्वरी) इत्यादि सम्वर्तागममें भृगुका वचन है कि ईश्वरोऽयं शिवः प्रोक्तो तस्मान्नविद्यते परः) और शास्त्रोंमें सैकड़ों जगह शिवको ईश्वर कहा है यदि कहिये कि और देवोंको भी ईश्वर कहा है तो तत्वतः (ब्रह्मभावतः) स्वरूपतः नहीं गीतामें श्रीकृष्णजीने कहा है (ततो मां तत्वतो ज्ञात्वा विशते तदनन्तरम्) और शिवमें ईश्वरता स्वरूपतः भी है तत्वतः भी है लोकमें रामेश्वर ध्रुवेश्वर प्रह्लादेश्वर इत्यादि हजारों जगह शिव ही के लिए ईश्वर शब्दका प्रयोग किया गया है। लोकमें ईश्वर नामसे विष्णु भगवानका स्थान भी नहीं है देवताओंका स्थापित स्थान भी नहीं है जहाँपर औरोंको ईश्वर कहा तो उनको महेश्वर कहा विष्णु जगन्नाथ हुए तो शिव भुवनेश्वर होकर बैठे और विष्णु राम कृष्ण

आदि देवोंका जो वैदिक मार्गमें होकर भक्ति करते हैं उनकी भी मुक्ति होती है आखिरमें विष्णुको शक्तिरूप ध्यान कर शिवमें योजना करनेसे होती है रामरहस्योपनिषदमें लिखा है (यो वैष्णवः सोऽपि च योगकाले शक्तिः स्वरूपेण विचिन्त्य विष्णुं शिवात्मके धामनि योजयेत्स्या दतः श्चिदानन्द मयोहिमक्तः) शक्ति शक्तिमान रूपसे शिव विष्णुमें एकता है एकतामें भी छोटा-बड़ा होता है। शक्ति मा नहीं को सब शास्त्रकारोंने बड़ा माना है। जो वैदिक विष्णुभक्त हैं सो मरनेपर विष्णुमें लय होंगे तो जब विष्णु शिवमें लय होंगे तब उनकी मुक्ति होगी, क्योंकि जब विष्णु भगवान नहीं गर्भवास तथा जन्मसे मुक्त नहीं है तो दूसरेको कैसे मुक्त कर सकते हैं और जो पाञ्चरात्रादि तन्त्रोक्त अवैदिक मार्गमें होकर कराठी तिलक मुद्रा धारण कर भजन करते हैं उनकी मुक्ति सायद हो क्योंकि जबसे सृष्टि हुई तबसे और देवोंके बराबर शिवको एक कामने जाना सो भस्म होकर नरकको गया और सब देवोंसे छोटा शिवको दक्ष-प्रजापतिने जाना तो उनकी गति और उनका सहायक विष्णु आदि देवोंकी जो गति हुई सो यगतप्रसिद्ध है आजकल कलिकालके प्रभावसे बड़े-बड़े पंडित अध्यापक उपदेशक इसी पूर्वोक्त मार्गको आश्रयण कर अभिमानी बने हैं जैसे कि लिखा है (अविद्याया मन्तरे वर्तमानाः स्वयं धीराः पंडितं मन्यमाना दन्द्रम्यमाणाः परियन्ति मूढ़ा अन्धेनैव नीयमाना यथान्धाः)

शिवको कौन कहे उनके पुत्र गणेश सब शुभाशुभ कर्मोंमें प्रथम पूज्य होते हैं तथापि मोहान्धकारमें पड़े हुए मनुष्योंकी आँख नहीं खुलती है उनका भक्त दधीचि रावण विद्युत्प्रभ आदिका बराबरी करनेवाला कोई देव दानव नहीं हुए। अन्य देवोंके बराबरीमें शिवको माननेवाले अथवा अन्य देवोंको श्रेष्ठ माननेवाले पुरुषोंकी गति वही होगी जो काम और दक्षकी हुई ॥

पुराणोंके रीतिसे सृष्टिका क्रम यह है ॥ सबके आदिमें परमशिव जिनको आत्मा परमात्मा ब्रह्म ईश आदि नामोंसे सम्बोधन किया है (ईशावास्यमिदꣳसर्वं यत्किञ्चिज्जगत्यां जगत्) तथा शिवमद्वैतं तूरीयं मन्यन्ते स आत्मा विज्ञेयः) इत्यादि सैकड़ो श्रुति है उनसे सदा शिव हुए जो शब्द गुणके अधीश हुए सदा शिवके सहस्त्रांशसे ईश्वर हुए शब्दसे स्पर्शगुण हुआ उसके अधिपति ईश्वर हुए ईश्वरके सहस्त्रांशसे रुद्र हुए और स्पर्शसे रूप गुण हुआ उसके अधिपति रुद्र हुए रुद्रके सहस्त्रांशसे विष्णु हुए और रूपसे रसगुण उत्पन्न हुआ उसके अधिपति नारायण हुए और रससे गन्ध गुण हुआ विष्णुके सहस्त्रांशसे ब्रह्मा हुए सो गन्धका अधिपति हुए आगे शब्दसे आकाश उसका स्वामी गणेश हैं जो ईश्वर और रुद्रकी सन्धिमें रहते हैं स्पर्शसे वायु उसकी अधिष्ठात्री शक्ति हैं जो रुद्र और विष्णुके सन्धिमें वर्तमान रहती हैं रूपसे अग्नि हुए उसका स्वामी सूर्य हैं वह विष्णु और ब्रह्माके सन्धिमें रहते हैं रससे जल हुआ उसके स्वामी मनुभये

जो ब्रह्मा और कश्यपके सन्धिमें रहते हैं गन्धसे पृथ्वी हुई उसके स्वामी कश्यप हुए इस तरहसे दश प्रकारके जो सृष्टि कर्ता हैं सो परम शिवके अन्तर्गत हैं और वेदमें भी इस प्रकार सृष्टिका क्रम वर्णित है।

आत्मासे आकाश उसका अधिपति रुद्र आकाशसे वायु उसका अधिपति गणेश वायुसे अग्नि उसका अधिपति सूर्य अग्निसे जल उसका अधिपति नारायण जलसे पृथ्वी उसका अधिपति भगवती हुई यही पाँच देवोंकी उपासना जगत्प्रसिद्ध है योगशास्त्रमें भी षट चक्रोंको भेदन कर परम शिवमें लय होना है अतः सब शास्त्रोंका परम एक ही मत है कि परमकारण शिव हैं।

इस सिद्धान्तरत्नाकर नामक ग्रन्थमें मैं पक्षपात रहित शास्त्र वेदादि आर्ष (ग्रन्थोंसे) तथा अन्य धर्मावलम्बियोंके पुस्तकोंसे जो कहा है सो सिद्धान्त ही कहा है सिद्धान्तका लक्षण यह है (सर्व प्रमाण सिद्धोर्थो ध्रुवो यन्नं विचाल्यते सोऽयं सिद्धान्त इत्युक्तो ना ध्रुवश्चाल्यते यतः) सब प्रमाणोंसे सिद्ध जो वस्तु हैं कभी अन्यथा नहीं होनेवाली हैं उसीको सिद्धान्त कहते हैं क्योंकि मैं किसी पक्षका पक्षपाती नहीं हूँ जो सब प्रमाणोंसे सिद्ध हो वही मेरा पक्ष है शैव वैष्णवादि मतोंमें जो पीछेसे पाखण्ड प्रचलित हुआ है उसका निराकरण करके सिद्धान्त मार्गको दिखाया है।

परन्तु आजकलके बहुत अल्पज्ञ मनुष्य कलिकालके प्रभावसे

आधुनिक अवैदिक मतानुजायी हो द्वेष पक्ष पातमान कर खण्डनका साहस करते हैं तो उनको मैं सूचना देता हूँ कि हमारे दिए हुए प्रमाणोंको मिथ्या सिद्ध करें अथवा उन वचनोंको समन्वय करके आर्ष वचनोंसे अविरोध कर श्रेष्ठता दिखावें हमको स्वीकार है एक पण्डितको कौन कहे हजारों दफे पण्डितोंके सभासे यह निश्चय हो चुका है कि वर्णाश्रमसे वाह्य अतीत वैरागी नागा नान्हकशाही आदि आदि जितने मार्ग आजकल प्रचलित हैं सो वैदिक धर्म नहीं है पीछेसे प्रचलित हुए हैं जैसे तुलसीदाशजीने कहा है ।

दम्भिन निजमत कल्पिकरि प्रगट कीन बहु पन्थ ॥

सबसे बड़ा जब होगा तो कोई एक ही होगा सो कौन है आवागमनसे रहित ज्ञान मुक्तिके लिए सब देव भक्तोंको शिव ही के शरणमें जाना पड़ा है । कूर्मपुराणमें कहा है (यस्तु ज्ञानं तथा मोक्षं इच्छेतद्ज्ञानमैश्वरम् ॥ सोर्चयेद्वै विरूपाक्षं प्रयत्नेन महेश्वरम् ।) इत्यादि ॥

यह सिद्धान्तरत्नाकर नामक पुस्तक चार खण्डोंमें है चारों खण्ड छप रहा है जिनको विरोध करना है चारों खण्डोंको पूर्णरूपसे देखकर उसका विष मनमें धारणा करनेकी शक्ति सम्पादन कर करें मैं सप्रमाण उत्तर देनेके लिए सदा तैयार हूँ और जो बिना प्रमाणका अन्यथा लेख है उसका उत्तर क्या दिया जाय जैसे एक हाथी अपने गम्भीर चालसे चली जाती है कुत्ते भुँकते हैं तो हाथीका पराजय

कुत्तोंका जय नहीं कहा जायगा। मैं पण्डित उपदेशक नहीं हूँ एक तुच्छ परमेश्वरका शेवक हूँ।

बोद्धारो मत्सरग्रस्ता प्रभव स्मयदूषिताः।
अवोधोपहवाश्चान्ये जीर्णमंगेषु भाषितम्॥
अहंवद्धो विमुक्तस्या मितियस्यास्ति निश्चयः।
नात्यन्तमज्ञो नोतद्ज्ञः सोऽस्मिन्शास्त्रे धिकारवान्॥

(भर्तृहरिशतक)

गोःपदं पृथिवीमेरुः स्थाणुराकाश मुद्रिकाः।
तृणं त्रिभुवनं राम नैरास्या लंकृता कृतेः॥
अहं शिवः शिवश्चायं त्वञ्चापि शिवएव च।
सर्वं शिवमयं राम शिवादन्यं न किंचन॥

(योगवाशिष्ट)

पण्डित लोग द्वेषसे भरे हैं किसीका सदुपदेश नहीं रुचता है श्रीमान लोग अपने भोग विलास राज्य कार्यसें सुननेका समय नहीं है अन्य साधारणजनोंको बुद्धिहीन होनेसे समझ नहीं सकते जो कुछ वक्तव्य है सो शरीर हीमें बुढ़ा हो गया किससे कहा जाय॥ मैं वद्ध हूँ मुक्त हो जाऊँ ऐसा जिसको निश्चय है अत्यन्त अज्ञ नहीं है जो समझानेपर भी न समझे और अत्यन्त ज्ञानी भी नहीं है जो अपने बुद्धिके आगे दूसरेको कुछ नहीं समझता है वही इस मोक्ष मार्गका अधिकारी है॥ यह भर्तृहरिका वाक्य है—

हे राम! गौके खुरीके चिह्नके बराबर पृथ्वी सुमेरु पर्वतं एक स्तम्भ आकाश जो गोलाकार है एक अंगुठीके सदृश है तीनों भुवन तीन तृण है, ऐसा तुच्छ जगतको जानो। हम शिव यह सब जगत शिव तू भी शिव हे राम! सब शिवमय है ऐसा जानो शिवसे अन्य कुछ नहीं है।

योग वाशिष्ठमेंमें वशिष्टका उपदेश है रामके प्रति—

अद्वैतंहि शिवः प्रोक्तः क्रियायास विवर्जितः गुरुवक्त्रेण लभ्येत नाधीता गम कोटिभिः॥

अद्वैत (एक) शिव हैं क्रिया कलापसे वर्जित हैं ज्ञानी गुरुके कृपासे प्राप्त होते हैं करोड़ों शास्त्रोंको पढ़नेसे नहीं।

गरुड़ पुराणमें श्री विष्णु भगवान्का वचन है—

वाराहोपनिषद॥ शुकश्च वाँमदेवश्च द्वेस्टती देवनिर्मिते॥ शुकोविहङ्गमः प्रोक्तो वाँमदेवः पिपीलिका॥ अतद्व्यावृत्ति रूपेण साक्षाद्विधिमुखेनच महावाक्य विचारेण सांख्ययोग समाधिना॥ विदित्वा स्वात्मनोरूपं सम्प्रज्ञात समाधितः॥ शुकमार्गेण विरजाः प्रजान्ति परमंपदम्॥ यमाद्यासन ब्यायास हठा भ्यासा त्पुनः पुनः॥ विघ्नवाहुल्य सञ्जात अणिमादि वसादिह॥ अलब्ध्वापि फलंसम्यक् पुनर्भूत्वा महाकुले॥ पूर्ववासनयै वायं योगाभ्यासं पुनश्चरन्॥ अनेक जन्माभ्यासेन वाँमदेवेन वैपथा सोऽपिमुक्तिं समायाति तद्विष्णो परमंपदम॥

वाराहोपनिषदमें लिखा है कि ब्रह्म प्राप्तिका दो मार्ग है एक विहंगम दूसरा पिपीलिका दोनोंका प्रवर्त्तक दो ऋषि है शुकदेव विहंगमका वाँमदेव पिपीलिकाका विहङ्गम वह है कि सब संसारिक व्यवहार छोड़कर अतद्व्यावृत्ति रूपसे (अनिश्चित रूप) महावाक्योंको मननकर सम्प्रज्ञात समाधि द्वारा आत्माको साक्षात कर लेना ॥ और पिपीलिका वह है कि संसारिक व्यवहार करते रहना परन्तु उसको असत्य जान कर विघ्नोको हटाकर फल नहीं प्राप्त होनेपर भी अभ्यास करते रहना तो अनेक जन्मोंमें उसकी भी मुक्ति हो जाती है ॥ और वही विष्णुका परम्पद शिव संज्ञक है—

शिव शब्दार्थः ॥ शिशब्दो मङ्गलार्थश्च वकारो दातृवाचकः ॥ मङ्गलानां प्रदाताय: सशिवः परिकीर्तितः ब्रह्मवैवर्त ब्रह्मखण्ड सृष्ट्यर्थं सर्वतत्वानां लोकस्योत्पत्तिकारणात् योगिनामुप काराय स्वेच्छया गृह्यतेत्तनुम् वातुलशुद्धे ।

शिव शब्दका अर्थ यह है कि—शिव मंगल देनेवाला मगलको जो दे उसको शिव कहते हैं ॥

ब्रह्मवैवर्त ब्रह्मखण्डमें कहा है—

शिव पंचतत्वों द्वारा जगतको उत्पन्न करनेके लिए योगियोंके उपकारके लिए अपने इच्छासे शरीर धारण करते हैं वस्तुतः शरीर रहित क्रिया कलापसे वर्जित हैं

वातुल शुद्धका वचन है—

यह नाम रूपात्मक जो जगत है सो सब्र शिवमय है ॥

नामाक्षराणि त्रिगुणी[3] कृतानि सुवेद[4]युक्तेऽथ द्विधा[2]कृतानि ॥
शास्त्रस्य[6] भागल्लुमतेचशेषं भवेदशेषं शिवविश्वरूपम् ॥४॥

नामाक्षरको तिगुनकारी ॥ तामें चार[4] मिलाय ॥
दुगुनाकर[2] रसभागतें[6] ॥ शेष शिव हो जाय ॥१॥

नामाक्षरं[6] षड्गुणितं ऋषियुक्तं[7] त्रिनिघ्नकम्[3] ॥
गजभू[8] भागतः शेष महेशाख्य मिदं जगत् ॥२॥

नामाक्षर रसगुणकारी[6] ॥ तामें सात[7] मिलाय ॥
तिगुनाकरि[3] वसुभागतें[8] ॥ शेष महेश हो जाय ॥२॥

नामाक्षरं[9] प्रहैर्निघ्नदिग्युक्तं[10] श्रुतिभिर्हतम् ॥
रागिनी[36] मिस्ततोभागं महादेवमयं जगत् ॥३॥

नामाक्षर नवगुनकरि ॥ तामें दिशा[10] मिलाय ॥
चौगुन[4] छत्तिस[36] भागतें ॥ महादेव हो जाय ॥४॥

नामाक्षरं सूर्यगुणितं[12] विश्वेदेव[13] युतंगुणेत ॥
पञ्चभिः[5] शास्त्रभागेन[6] गौरीशंकर सञ्ज्ञकम् ॥५॥

नामाक्षर द्वादश[12] गुना ॥ तेरह[13] देइ मिलाय ॥
वाणगुना[5] छःव[6] भागतें ॥ गौरीशंकर होय ॥५॥

रूपका हाल देखिये ॥ उत्पत्ति गगलिंगसे चिन्ह है भगलिंग ॥
जीह्वाके ऊपर रहे जीवनमात्रको लिंग ॥
जिह्वा घंटा वजत है ब्रह्मरंध्र जलगेह—

सोमसूत्र जल मूत्र है शिवस्थान यह देह—ऐसे व्यापकदेवको जो नभजे नरमूढ़ सो कबहीं नहीं तरि सके परे नरकमें गूढ़

और जिनको इस विषयमें कुछ बहस करना हो सो लिखें या हमसे मिलें सप्रमाण उत्तर देनेके लिए सदा तैयार हूँ।

दोहा

हाथ उठायकर कहत हो नहीं सुनत है कोय
अर्थ धर्म अरु काम सब शिव पूजनते होय ॥१॥
कालिकेश्वर दत्तबुद्ध कह्यो यथारथ बात
पक्षरहित निन्दारहित वेंद सिद्ध सब बात ॥२॥
अबुधनको यह काम है करें बहुत छोद छेम
यदपि दोष पावें नहीं तदपि करें निजनेम ॥३॥

सज्जन पुरुषाणां शुभचिंतकः
पं० कालिकेश्वर दत्तः
राज्य डुमराँव, जिला आरा।

—०—

श्रीषडक्षर मन्त्रराज स्तोत्रम्

श्री मद्योगिवर्य्यविप्रराजेन्द्रकृत भाष्यम्

तदात्मजेन

पं० कालिकेश्वर दत्तेन

भाष्यप्रदीपं विरचितम्

भाषार्थश्च

पञ्चाक्षर स्तोत्रम्

श्री गणेशायनमः ॥ किंतस्य बहुभिर्मन्त्रै शास्त्रै र्वाबहुविस्तरैः ॥ यस्योन्नमः शिवायेति मन्त्राभ्यास स्थिरी कृतः ॥१॥

॥ भाष्यम् ॥

श्रीगणेशाय नमः ॥ नमस्कृत्य शिवं भक्त्या देवदेवं वृषाकपिम् ॥ ब्रह्मादिभिः समायुक्तं भाष्यं पञ्चाक्षराभिधम् ॥ अथ गच्छन् तिष्ठन् स्वपन् जाग्रन् उन्मिषन्नि मिषन्नपिती स्मृत्या यः पुरुषः सर्वकाले मन्त्राभ्यास परस्तस्य बहुभिर्मन्त्रैर्बहुविस्तर शास्त्रपठनेन किमपि फलं न भवतीत्याशयः ॥ १ ॥

॥ भाष्य प्रदीपम् ॥

श्रीगणेशाय नमः ॥ नमस्कृत्य गुरुं भक्त्या शिवेनाद्भुत वैभम् ॥ भाष्य-प्रदीपिकां कुर्वे संशयाघनिवर्तिनीम् ॥ अथ देवानां परमोदेवो यथावै त्रिपुरान्तके तिस्मृत्या सर्वेषां मध्ये शिवस्य गरिष्ठत्वं प्रतिपादितं तथैव सर्वमन्त्राधिकश्चायं ॐकाराद्यः षडक्षरेति स्मृत्या षडक्षरमन्त्रस्य सर्वमन्त्राधिकत्व मस्तीत्याशयः ॥१॥

तेनाधीतं श्रुतं तेन तेन सर्वमनुष्ठितम् ॥ यस्योनमः शिवायेति मन्त्रोयं हृदि संस्थितः ॥२॥ शिवज्ञानानि यावन्ति विद्यास्थानानियानिच ॥ षडक्षरस्य मन्त्रस्य कलान्नार्हन्ति षोडशीम् ॥३॥

॥ भाष्यम् ॥

येषां हृदये (ॐ नमः शिवाये ति) मन्त्रस्सदा प्रस्फुरति तेन सर्वंश्रुतं सर्वमनुष्ठित मितिभावः ॥ २ ॥ यावन्ति शिवज्ञानानिसन्ति तथा यावन्ति विद्यास्थानानिसन्ति ते सर्वे षडक्षरस्य मन्त्रस्य षोडशकला समं न भवन्तीत्याशयः ॥ ३ ॥

॥ भाष्य प्रदीपम् ॥

प्रस्फुरतीति ॥ तद्यथोक्तम् ॥ गच्छन् तिष्ठन् स्वपन् जाग्रन् उन्मीषन्निनमिषन्नपि मन्त्राभ्यासपरो यो वै मन्त्र योगोय मुच्यतेति स्मृत्योक्त्या ज्ञातव्यम् ॥२॥ ॥ षडक्षरस्येति ॥ वटवीजेति सूक्ष्मेपि महावटतरुर्यथा ॥ तद्वत् षडक्षरे मन्त्रे भूतानामागतिर्लयेति स्मृत्योक्त्या पञ्चभूताना मुत्पत्ति स्थिति प्रलयकर्तृत्वं षडक्षरस्यैवेति बोध्यम् ॥ ३ ॥

ॐकारस्य स्वरोदात्तः ऋषिर्ब्रह्मा सितम्वपुः छन्दो नुष्टुप्च गायत्री परमात्माऽधिदेवता ॥४॥ नकारः पीतवर्णश्च स्थानं पूर्वमुखं स्मृतम् ॥ इन्द्रोऽधि दैवतं छन्दो गायत्री गौमोक्षऋषिः ॥५॥

॥ भाष्यम् ॥

अथ प्रत्यक्षराणां ऋषि छन्द देवता कीर्तन मप्यावश्यकत्वा दाह ॥ ॐकारेति ॥ ॐकारस्य उदात्तस्वरः ॥ ब्रह्माऋषिः प्रवर्तकश्च अनुष्टुप् तथा गायत्री छन्दः परमात्मा शिवोदेवतेति ॥ ४ ॥ नकारस्य पीतवर्णः पूर्वमुखं स्थानम् इन्द्रोदेवता गायत्री छन्दः गौतमो ऋषिः प्रवर्तकश्चेति ॥ ५ ॥

॥ भाष्य प्रदीपम् ॥

परमात्मेति ॥ अथ शिवमद्वैतं तूरीयं मन्यन्ते स आत्मा स विज्ञेयः इति केनोपनिषच्छ्रुत्या तथा आकाशवत्सर्वगतं सुसूक्ष्मं शिवं प्रशान्तं अमृतं ब्रह्म स आत्मेति साण्डिल्योपनिषच्छ्रुत्यापि च उत्तमः पुरुषस्त्वन्यः परमात्मेत्युदाहृते ति गीतोक्त्यांपि च आत्मा परमात्मा शब्देन शिव एवोच्यतेति भावः ॥४॥५॥

सकारः कृष्णवर्णश्च स्थानम्त्वै दक्षिणं मुखम् ॥ छन्दोनुष्टुप्च गायत्री रुद्रोदैवतमुच्यते ॥६॥ शिकारो धूम्रवर्णोऽस्य स्थानम्त्वै पश्चिमं मुखम् ॥ विश्वामित्र ऋषि स्त्रिष्टुपछन्दोवै विष्णुदैवत्तम् ॥७॥

॥ भाष्यम् ॥

मकारस्य कृष्ण वर्णः दक्षिणंमुखं अनुष्टुप् तथा गायत्री छन्दः रुद्रोदेवता ॥६॥ शिकासस्य धूम्रवर्णः पश्चिमंमुखं विश्वामित्र ऋषिस्त्रिष्टुप् छन्दः विष्णुर्देवता ॥७॥

॥ भाष्य प्रदीपम् ॥

रुद्रोदेवतेति ॥ तत्रतावद्रोदयत्येव यस्सर्व्वा न्स्वस्मिन्भक्ति विवर्जितान् ॥ अतोरुद्रस्यरुद्रत्वं प्रोक्तञ्चैवमनीषिभि रीति स्मृत्या स्वस्मिन्भक्ति विवर्जितान् जनान्रोदयतीति रुद्र इतिवोध्यम् ॥६॥ विष्णुरिति ॥ तथा यच्चकिंचिज्जगत्यत्र दृश्यते श्रूयतेऽपिवा अन्तर्वहिश्चसर्वत्र व्याप्यनारायणः स्थितः ॥ योवेदादौ स्वरः प्रोक्तो वेदान्ते च प्रतिष्ठित स्तस्यप्रकृतिलीनस्य यः परः समहेश्वरेति स्मृत्या सर्वमवधार्य्यम् ॥७॥

वाकारो हेमवर्णोऽस्य स्थानञ्चैचोत्तरंमुखम् ब्रह्माऽधिदैवतं छन्दो वृहतीचाङ्गिराऋषिः ॥८॥ यकारोरक्त वर्णश्च स्थान मुर्द्ध मुखं विराट् छन्दोह्यार्ष भरद्वाजः स्कन्दो दैवत मुच्यते ॥९॥

॥ भाष्यम् ॥

वाकारस्य सुवर्णवर्णः उत्तरंमुखं ब्रह्मादेवता वृहती छन्दः अङ्गिरा ऋषिः ॥८॥ यकारस्य रक्तवर्णं उर्द्धमुखं विराट छन्दः कार्तिकेयो देवता भरद्वाज ऋषिः प्रवर्तकश्चेति ॥९॥

भाष्य प्रदीपम् ॥

ब्रह्मादेवतेति तदुक्तं ब्रह्मणः सृष्टकर्तृत्वं विष्णोश्चपालनं स्मृतम् संहर्ता रुद्रदेवश्च त्रिधाभिन्नो महेश्वरेति स्मृत्यात्रयाणा मंत्रैवान्तर्भावः ८ उर्ध्वमुखमिति या ईशान नामिकामूर्तिः पूर्वाभिमुखा सर्वश्रेष्ठाप्रकृतिभोक्ताक्षेत्रज्ञेस्थिता १—यांतव-

पुरुषसञ्ज्ञिका गुणाश्रया उत्तराभिमुखा अव्यक्तेस्थिता २—या अघोराख्यादक्षि-णाभिमुखामूर्तिः बुद्धितत्वेस्थिता ३—या वामदेवनामिका पश्चिमाभिमुखा अहं-कारेस्थिता ४—या सद्योजात नामिकामूर्तिः उर्ध्वमुखा मनसिस्थितेति बोध्यम् ॥९॥

न्यासमस्यप्रवक्ष्यामि सर्वसिद्धि करम्परम् ॥ सर्व पाप हरश्चैव त्रिविधोन्यासमुच्यते ॥१०॥ उत्पत्तिस्थिति संहार भेदतस्त्रिविधस्मृतः ॥ ब्रह्मचारीगृहस्थानां यती-नांक्रमशोभवेत् ॥११॥

॥ भाष्यम् ॥

अथ अङ्गन्यास करन्यास देहन्यासम्विना जपः न सम्यक् फल-दस्तस्येति स्मृत्या न्यासस्यावश्यकत्वादाह न्यासेति तथा च उत्पत्ति स्थिति संहृति भेदेन न्यासस्त्रिविधः क्रमशो ब्रह्मचारी गृहस्थ यतीनां कर्तव्यमिति विवेकः ॥ १० ॥ ११ ॥

॥ भाष्य प्रदीपम् ॥

ब्रह्मचारीणां वेदवेदाङ्गादि बहुनिकलाकौशलादि पठित व्यानित्याशायेन उत्पत्तिन्यासमुक्तं । गृहस्थानां पुत्रपौत्रादि सम्पादनकर्तृत्वात्स्थितिन्यास उदा-हृतः । सर्वकर्म्माणिसंत्यज्य सन्यस्यप्रव्रजेद्गृहादिति स्मृत्या यतीनां त्यागस्य प्रधानत्वात्संहृति न्यासमुक्त मितिभावः ॥१०॥११॥

अङ्गन्यास करन्यास देहन्यास इतित्रिधा ॥ मूर्द्धा-
दिपाद पर्यन्तं उत्पत्ति न्यास उच्यते ॥१२॥ पादादि-
मूर्द्धापर्यन्तं संहारोभवतिप्रिये ॥ हृदयास्पगलन्यासः
स्थिति न्यास उदाहृतः ॥१३॥ दक्षिणांगुष्ठ मारभ्य
वामांगुष्ठान्तएवहि ॥ न्यस्यतेयत्तदुत्पति विंपरीतस्तु
संहृतिः ॥१४॥

॥ भाष्यम् ॥

न्यासे त्रिविधो भेदमाह ॥ न्यासेति ॥ तद्यथा ॥ मूर्द्धा मारभ्य पादपर्यन्तं यन्न्यासः अङ्ग न्यासे उत्पत्ति न्यासः ॥ तथैव करन्यासे दक्षिणांगुष्ठ मारभ्य वा मांगुष्ठान्तं यन्न्यासस्तदुत्पत्ति न्यासः ॥ ब्रह्मचारीणामित्याशयः ॥ एवं अङ्गन्यासे पादमारभ्य मूर्द्धा पर्यन्तं यन्न्यासः संहृति न्यासः ॥ करन्यासे बामांगुष्ठमारभ्य दक्षिणांगुष्ठ पर्यन्तं संहृतिन्यासस्तु यतीनामिति विवेकः ॥ पुनः अङ्गन्यासे हृदयास्य गलन्यासः गृहस्थाना मङ्गन्यासः ॥ अंगुष्ठमारभ्य कनिष्ठिकान्तं द्वयों हस्तयोर्य न्यासस्सस्थितिन्यासः गृहस्थानामिति ॥१२॥१३॥१४॥

॥ भाष्य प्रदीपम् ॥

उत्पतिस्थिति संहृतिन्यासानांमध्ये स्थितिन्यासस्य स्वरूपं दर्शयितुमाह उत्पत्तिरिति ॥ तथाच ॥ अङ्गन्यासक्रमः ॥१२.१३॥१४॥

अंगुष्ठादिकनिष्ठान्तं न्यस्यते हस्तयोर्द्वयोः ॥ अतीवभोगदोदेवि स्थितिन्यासः कुटुम्बिनाम् ॥१५॥ शिरस्कन्द स्ततोदेहं सर्वमन्त्रेण संस्पृशेत् ॥ सदेहन्यास इत्युक्तः सर्वेषां सममेवहि ॥१६॥

॥ भाष्यम् ॥

स्थितिन्यासस्तु गृहस्थाना मतिभोग सुखदम् ॥१५॥ तथा देहन्यासः ब्रह्मचारी यती गृहस्थाणां मूलमन्त्रेण सर्वाङ्ग स्पर्शनं सर्वेषां सममेवेति बोध्यम् ॥ १६ ॥

॥ भाष्य प्रदीपम् ॥

ॐ हृदयायनमः नँ शिरसे स्वाहा मँ शिखायैवषट शिंकवचयोंहुँ वांनेत्रत्रयायवौषट यँस्त्रायफट् इत्यङ्गन्यासः अथ करन्यासोच्यते ॥ ॐ अंगुष्टाभ्यांनमः नँ तर्जनीभ्यांनमः मँः मध्यमाभ्यांनमः शिंअनामिकाभ्यांनमः वाँ कनिष्टिकाभ्यां नमः यँ करतलकर पृष्ठाभ्यांनमः इतिकरन्यासः ॥ ॐ नमः शिवायेतिमन्त्रेण सर्वाङ्ग स्पर्शनं देहन्यासः कुटुम्बिनां कर्तव्यमित्याशयः ॥१५॥१६॥

ऋषिर्ब्रह्मास्य मन्त्रस्य पङ्क्तीछन्दः प्रकीर्तितः ॥ महादेवोभवेद्देव स्तत्वार्थे विनियोजनम् ॥१७॥ प्रह्वत्वे नमसश्शक्तिः प्रणामोदैन्यपूर्वकः ॥ नमामिदेव देवेशं चतुर्णामिह सिद्धये ॥१८॥

॥ भाष्यम् ॥

अथास्य वेदचतुष्टयात्मक गायत्र्यर्थप्रतिपादकत्वा द्दष्ट्यादौ स्ताव-त्सकलपाठ फलकत्वेनाह ॥ ऋषिरिति ॥ तद्यथा ॥ असंकीर्त्यर्यदामन्त्री ऋषिश्छन्दश्चदैवतं नसम्यक् फलदस्तस्य निगदोप्यर्थपूर्वक इतिस्मृत्यन्त-रादितिभाव: ॥१७॥ तत्रतावत्पञ्चाक्षरो मनु:प्रोक्तो ॐकाराद्य: षडक्षर इत्यादि स्मृत्यन्तरादुद्धृतस्य वैदिक पञ्चाक्षर महामन्त्रस्य व्याख्यानं पञ्चाक्षर भाष्यामिधं वक्तुमुपक्रमते ॥ प्रह्वत्व इति ॥ तत्रैवंसति यस्मा-द्दैन्याच्छिव: प्रीतस्तद्दैन्यं हृदिलब्धये नमामिदेवदेवेशं सार्वभौमोप्यथा-न्यथेत्यादिस्मृत्युक्त दैन्यपूर्वकस्य हे देवदेवेश ! चतुर्वर्गसिद्धयेन मामीत्यर्थ: ॥ १८ ॥

॥ भाष्य प्रदीपन् ॥

अथ वेदादिस्तारको व्यय इत्यादि स्मृत्युक्त प्रणवघटितगाय त्र्यास्सकलवेद मूलकत्वादाह ॥ गायत्र्यर्थेति तत्रैवंसतीह सुपांसुलुगीति सूत्रेण ङसस्सुरादेशे भर्गस्य देवस्य वरेषु साधुषु वरेण्यं सवितुरिव ते जो रूपां शक्तिं धीमही त्यादिरर्थ: ॥१७॥१८॥१९॥

त्यागोहिन मसोवार्थ: आनन्द: प्रकृतेस्तथा ॥ अये-तिगमयेत्यर्थे तदातृप्तोह्यहंसदा ॥१९॥ वस्तुतस्तूर्य्य मेवस्या न्निर्गुणं ब्रह्मतत्परम् ॥ चतुर्थ्याभेदसम्बन्ध: कथ्यते प्रत्यगात्मनो: ॥२०॥

॥ भाष्यम् ॥

एवमर्थान्तराभिप्रायेणप्याह ॥ इत्यादि ॥ तत्रेत्थंसति साङ्गायेत्यादि मन्त्रपूर्वकत्वेन पत्रपुष्पादिकं मानसैर्व्वहिर्भावेनच समर्पयामीत्यर्थः ॥ ततश्च शिवशब्दस्यानन्दार्थक त्वात्तदर्थमामय स्वात्मानन्दे प्रापयेत्यर्थः ॥१९॥ अथापर मप्यर्थान्तर माह ॥ वस्तुतस्त्वति ॥ तथाचेह वेदवेद्ये शिवैकत्वे ब्रह्मेत्याहुर्नपुंसक मित्यादि स्मृत्यन्तराच्छिव-मद्वैतं तूरीयंमन्यन्त इत्यादि श्रुत्यन्तरा द्यदन्यदन्यत्रविभाव्यतेभ्रमादध्यासइत्याहुर मुम्निपश्चित इत्यादि स्मृत्यन्तराच्च प्रतिप्रातिलोम्येन मिथ्याध्यस्त प्रपञ्च रूपेणाञ्चति प्रकाशतइत्यर्थात्प्रत्यगात्मनोर्न्नामद्वासुपर्णेत्यादिश्रुत्युक्त जीवात्मेश्वरात्मनश्चैकत्वेन ममाप्ययस्वात्मनाता-त्म्यापन्नं कुर्वीतिपरमार्थः ॥२०॥ तथा पञ्चाक्षरस्य सृष्टिस्थितिलय

॥ भाष्य प्रदीपम् ॥

नन्वेवन्त ह्यद्वैत हानिरिति चेन्नेत्याह ॥ गायत्र्यर्थेति ॥ एवंन्तर्हि नहिविज्ञातुर्विज्ञाते विपरि लोपो वियत इत्यादिश्रुतेर्न्नाद्वैतहानिरित्यवधेयम् ॥ २० ॥ एकएव

वाकारेण भवेत्सृष्टिः शिकारेणतु पालनम् ॥ संहृतिश्चमकारेण त्रिधाभिन्नः सदाशिवः ॥२१॥ नकारोराज्यकर्ताच देवानां शाशकः परः ॥ यकारो युद्धकर्ताच स्कन्ददेवोयतोहिस ॥२२॥

॥ भाष्यम् ॥

कतृत्वमप्याह ॥ वाकारेति ॥ वाकारस्य ब्रह्मदैवत्वात्सृष्टि कतृत्वं शिकारस्य विष्णुदैवत्वात्पालनत्वं मकारस्य रुद्रदैवत्वात्सं हृतित्वञ्चसिद्धम ॥ तमसाकाल रुद्राख्यं रजसाकनकाण्डजम् सत्वेन सर्वगं विष्णुंगुणातीतो महेश्वरेति भारतोक्या त्रयाणामादि कर्तासदाशिवेतिपरमार्थतः ॥२१॥ इन्द्रदैवत्वा नकारस्यराज्य कतृत्वं यकारस्यस्कन्ददैवत्वाद्युद्धकतृत्वमपिसिद्धम् ॥२२॥

॥ भाष्य प्रदीपम् ॥

त्रिधाभिन्नो ब्रह्मविष्णु महेश्वरेति स्मृत्याशिवस्यैव सकर्तृत्वं सिद्धमिति भावः ॥ २१ ॥ २२ ॥

अष्टादशपुराणानां निष्ठाकाष्ठामहेश्वरे निग्रहानुग्रहेणैव रूपेणैवन चान्यथा ॥२३॥ रामरावणयोर्य्युद्धं शिवः पश्यत्यतन्द्रितः ॥ सेयं लीला शिवस्यैवमल्लयोरिव पश्यतः ॥२४॥

॥ भाष्यम् ॥

नन्वेतावतापि मतभेदेन पुराणाना मन्यदेवपरत्वमप्यस्ती नेत्याह ॥ अष्टादशेति ॥ एवंसति वेदार्थानि मदर्थानि पुराणानि नवीकुरू इत्यादिना ब्रह्मवैवर्ते यज्ञवैभव खण्डस्योत्तर भागे व्यासम्प्रति सदाशिवोक्त्याप्यष्टादशपुराणानामष्टादश विद्यानाञ्चमहेश्वर परत्वमेव स्फुटीकृतम् तत्रैवं सति

लक्ष्मीवाकुशचिवीयत्र मदोदर्य्याः पुरांगण इत्यादिस्कान्दोक्त्या निग्रहेण ब्रह्मदीनां रावणपरत्वोक्त्या शिवपरत्वम् ॥ एवं महापाशुपतनामप्रगृह्याण-रघुद्वहएतदासाद्यपौलस्त्यं जाहिमाशोकमर्हसी त्यादिनापाद्मेरामचन्द्रम्प्र-त्यनुग्रहेण वरदानफलोक्त्याविष्णु परत्वमपीतिविवेकः॥२३॥ ननुरामराव-णयोर्य्युद्धं रामरावणयोरिवे त्यादिस्मृत्या देवासुरत्वेनोभयोस्समकच्छत्वा-द्रावणस्या पिलीलापेक्षितेति नेत्याह ॥रामेति॥ तत्रैवं सतीहामुत्रतटे पूज्यं तल्लिङ्गंदेवदानवैरि त्यादिपाद्मोक्त्या मल्लयोरिवयुद्धयमानयोरनयोर्य्युद्धं पश्यतः शिवस्यैवलीला नतयोरितिवोध्यम् ॥२४॥ अथैवंसति पृथ्वीपीठ मित्याद्युभय विधत्वेनाने कविधप्रमाणेन सर्वैर्देवैरपि शिवएवैकः पूज्य

॥ भाष्य प्रदीपम् ॥

यदर्थातीति ॥ अतएव मुखं पञ्चभिराख्यातं वाहवो दशभिर्म्मता हृन्नाभि-पादपर्यन्तं त्रिभिर्गीतामृतं विदु रित्यादि स्मृत्या सर्वशास्त्रमष्टादशपर्वोक्त गीत-याप्यमृतात्मा सदाशिव एव गीयत इत्यवधेयम् ॥ २३ ॥ फलोक्त्येति तद्यथा ततो लब्धवरः कृष्णो जनयित्वा सुपुत्रकान्हत्वा कंसं च नरकं हत्वा अन्याश्चा-सुरभूभुजानित्यादि कूर्मोक्त्या तद्वरदानोत्तरं फलोक्त्यैव कथितो वंशविस्तारो भवते त्यादिविष्णु परत्वमपीत्याशयः॥ प्रवल इति ॥ कथमन्यथा नहि विष्णुः प्रणमति कस्मैचिद्विबुधोत्तम विनाह्यात्मा नमेवेति तस्माच्छम्भुं भजाम्यह मित्यादि व्यासम्प्रत्यर्ज्जुनोक्तिः कूर्म्मेदर्शिते सङ्गच्छते ॥२४॥ शापोत्तरमिति ॥ तद्यथा ॥ अहिल्येत्वं नविज्ञातापतिं स्वस्य शिलाभव ॥ सचेन्द्रोपि भगैर्युक्त स्सहस्रैरिति चाशप दित्यादि गौतम शापोत्तरं शैवेनतपसा सहस्राक्षोप्यभूदित्यतोप्यवधार्यम्

तस्माच्छ्रौत प्रमाणेन सर्वैः पूज्यस्सदाशिवः ॥ शिवाभ्यन्तरतस्सर्वे पूज्यादेवा न संशयः ॥२५॥ वरिष्ठोद्विपदां विष्णुर्व्वरिष्टोभूत्प्रजापतिः ॥ वरिष्टोदैवतैरिन्द्रो वरिष्ठास्सर्वजन्तवः ॥२६॥

॥ भाष्यम् ॥

इत्युपसंहरन्नाह ॥ तस्मादिति ॥ तत्रेत्थं सत्यपूज्यपूजनेचैव पूज्यानांचाप्यपूजने सद्योदैवकृतस्तत्र: दण्ड:पत्ततिदारुण इत्यादि दक्षयज्ञप्रमथने भारतोक्यापि शिवम्विनासर्वेषा मपूज्यत्वञ्च स्फुटीकृतम् ॥ २५ ॥ ननुवेदरनेकैरहमेववेद्य इत्यादि श्रुत्यासर्वेषां शिवरूप त्वेपि देह भावेन परत्वापरत्वेति विवेचयन्नाह वरिष्ठ इति ॥ तथा चेहद्विपदां देवमनुष्याणां मध्ये प्रवलोविष्णुः एवमजानदेवानां प्रजापति र्यक्षादीनामिन्द्र इत्यादिरित्यासापेक्ष्यतार ताम्येनोच्चावच्चत्वं सर्वेषां विवेक्तव्यम् ॥ २६ ॥ अथैवंसति रुद्राकारतयारुद्रो वरिष्ठोदेवता न्तरादि-

॥ भाष्य प्रदीपम् ॥

दण्डइति—तदुक्त आगमान्तरे—अन्यंदेवम्पूजयित्वा शिवं पश्चाघजेद्यदितस्य पूजाफलं व्यर्थं भुज्यते राक्षसैरित्य वगन्तव्यम् ॥२५॥२६॥२७॥ कालभैरवना-

इत्येवं सर्वतोरुद्रः प्रवलोनैवचापरः सहस्राक्षोयतश्चेन्द्रो कमलाक्षो हरिर्यतः ॥२७॥

ब्रह्मापञ्चमुखोजातः पश्चाज्जातश्चतुर्मुखः कामोद्यनङ्गताम्प्राप्तो भस्माभस्मत्वमागतः ॥२८॥

॥ भाष्यम् ॥

त्यादि स्कान्दस्मृते, रोदयत्येवयः सर्वान्स्वस्मिन्भक्तिविवर्जिता नित्यादि स्मृत्यन्तराच्च सर्वतोगरिष्ठोरुद्रशब्दाभिधेयशिवएवेत्यभिप्रेत्य पुनरुपसंहरन्नाह ॥ इत्येवमिति ॥ तत्रैवं सति अपित्वं हि सहस्राद्यो मत्प्रसादाद्भूष्य तीत्यादिना गौतम शापोत्तरं सदाशिवरदानोक्त्या हरिस्ते साहस्रं कमलवलिमेति महिम्नोक्त्याच विष्णवे सदाशिव वरदानोक्त्या तयोस्तत्त्वमवधार्य्यम् ॥ २७ ॥

एवमपरमपि तत्परत्वे प्रमाणमाह ब्रह्मेति तत्रेत्थंसति मत्समस्त्वं नसन्देहो ब्रह्मन्पञ्चमुखो भवेत्यादिना पसापरिश्रान्तं ब्रह्माणम्प्रति वरदानोक्त्या गर्वेणतस्य शिरच्छेदनोक्त्याच तथात्वम् एवं शिवकामदहनात्तस्यानङ्गत्वं भस्मासुरस्य भस्मत्वञ्चेत्यादि स्पष्टमेव सदाशिवस्य सर्वतः परत्वोपपादनमित्यवधेयम् ॥ २८ ॥

॥ भाष्य प्रदीपम् ॥

मानं पुरुषं प्राहिणोत्तदाततोममार ब्रह्मासौ कलाभैरवहिंसितेति स्कान्दोक्यातथा भस्मासुरभयेनैव शिवस्तत्रपलायितः ॥ पार्वतीरूपमास्थाय हरिर्मोहितवास्तथे तिस्मृत्यापि च शिवस्यसर्वतः परत्वमितिभावः ॥२८॥

स्तस्माज्जातोहरिर्यद्व त्तद्रुद्रः प्रजापतेः ॥ नखनिभिन्नमात्रेण हरेः पादोदकीयतः ॥२९॥ महादेवेतिनान्मावै नसमोनपरस्ततः तस्माद्ब्रह्मादयस्सर्वे शिवाभ्यन्तरतस्थिताः ॥३०॥

॥ भाष्यम् ॥

ननु ब्रह्मणो ललाटाज्जायमानत्वेन तस्यापकृष्टत्वमपीति मैवमित्याह स्तम्भादिति ॥ तत्रैवं सति ध्यानार्थञ्चैव सर्वेषां ललाटाद्भवतो भव इत्यादिस्मृत्या जाह्नवीतियतः ख्याता न ततो न्यूनता शिव इत्यादि-स्कान्दस्मृत्याच सर्वतः परत्वं शिवस्यैवेति बोध्यम् ॥२९ ॥ नन्वेव मपि देवत्वन्तु सर्वत्र समानमेवेति मैवमित्याह ॥ महादेवेति ॥ तत्रेत्थं सति घोणत्व वृषभत्व मर्चक वपुर्भार्या त्वमार्यापते वाणत्वं सखिता मृदङ्ग वहता इत्यादि स्मृत्याच सर्वदेवानां शिवाभ्यन्तरितत्व मेवाव-धार्यम् ॥ ३० ॥

॥ भाष्य प्रदीपम् ॥

ध्यानार्थमिति ॥ अतएव ब्रह्मरन्ध्रेशिवं ध्याये द्ब्रह्माणन्तु हृदिस्थितम् नाभौविष्णुं समाराध्य प्रजयेत्परदेवता मित्यादिस्मृत्यन्तरादवगन्तव्यम ॥२९॥३०॥ घोणत्वमिति तथाच अरण्ये गाण्डवैस्ततं दृष्ट्वाशम्भुः कृपाकरः वाराहं विष्णुमा-कल्पतत्रविव्याध सोर्जुनादित्यादिस्कान्दोक्त्याघोणत्वं तथारावणायवरं दातुंउद्यता-यशिवायवै सर्वस्वत्वरमाक्रांद्य विष्णुर्नन्द्यभवद्भृशमितिस्कान्दोक्त्या वृषभत्वं हरिस्तेसाहस्रं कमलवलिमाधायेति महिम्नोक्त्वा अर्चकत्वं तथा भस्मासुरवधे पार्वती रूपत्वाद्भार्य्यात्वं त्रिपुरवधेवाणत्वं एवं मोहिन्यामोहितः शम्भुः स्वर्णादीन् जनयन् विभुरितिस्कान्दोक्त्यासपित्वं विष्णुः सान्द्रमृदङ्गवादन पटुरितिस्कान्दो-क्त्यामृदङ्गवाद्यत्वं तथायदेकोने तस्मिन्निज मुदहरन्नेत्र कमलमितिमहिम्नोक्त्या-नयनार्पणत्वं शिवस्यार्द्धस्थिता गौर तदर्द्धोहरिरिष्यतेति स्मृत्योक्त्याशिवस्यार्द्धा-र्द्धशरीर भागित्वमितिबोध्यम् ॥३०॥

सिंहो वृषो मयूरश्च सर्प्पोवैमूषकस्तथा ॥ एतेवैरत्व मापन्ना शिवाज्ञातो विशंकिताः ॥३१॥ एवं ब्रह्मा च विष्णुश्च शिवाज्ञातस्त्वकम्पयन् ॥ प्राप्ता अपि विमुह्यन्ति किमन्येषां विचिन्तनम् ॥३२॥

॥ भाष्यम् ॥

ननु कथं जानीमस्सर्वनियन्तृत्वं शिवस्यैवेति पश्वाद्य विशेषेणा प्याह ॥ सिंह इति ॥ एवंन्तर्हि भीषास्माद्वातः पवते भी षोदयति सूर्य इत्यादि श्रुत्या भस्माङ्ग रागतो माया त्रिनेत्रत्वा द्विभेत्यल मित्यादि स्मृत्यन्तराच्च स्पष्टमेव श्रुतियुक्तिभ्यां शिवस्य सर्वनियन्तृत्वम् ॥३१॥ तथेह मायापाशनिवद्धत्वाद् ब्रह्माद्यापशवस्मृतेति स्मृत्यन्तराद्ब्रह्मादि विषयत्वेनाप्याह ॥ एवमिति ॥ तथाचेह जीवद्वयं ततो गृह्य चैकमाह महेश्वरी ब्रह्माभवेति विष्णुस्त्वं भवेत्याहद्वितीयक मित्याद्यंगुल्यो धृत कोशस्थ वृत्तान्तेन ब्रह्मवैवर्तेऽपि द्रष्टव्यम् ॥ ३२ ॥

॥ भाष्य प्रदीपम् ॥

निवद्धत्वादिति अतएव ब्रह्मवैवर्ते कतिपर्य्यन्तमेतस्याः सुत्रैः कार्य्यंकरोम्यहं कस्यप्रीत्यैश्रमोऽयम्मे कदास्योपरमोभवेत् इत्युक्तञ्च विधिम्प्रेक्ष्य प्रोवाचमधु सूदनः सम्यगुक्तंत्वयाब्रह्म न्ममाप्येतद्विरोचत इत्यादिनातयोर्विमोहवृत्तं महा-कैलाशोक्त्या तत्रैवोक्तमवधेयम् ॥३१॥३२॥

शिवाज्ञयावहिर्भूता ब्रह्माद्या दण्डहेतवः ॥ दक्षा-
ध्वरेयतः शम्भो र्विमुखाभ्रष्टताङ्गताः ॥२३॥

॥ भाष्यम् ॥

अथ ब्रह्मादीनां विषयत्वमपि दर्शयन्नाह ॥ शिवाज्ञेति ॥ तत्रैवंसति यज्ञे त्वग्नयोनैव दीप्यन्ते दीप्यते नैवभास्करः ॥ ग्रहानैव प्रकाशन्ते देवर्षि मनुजाः कुतः ॥ इत्यादि शान्ति पर्वणि महाभारतोक्त्यापि सदाशिवविमुखत्वा त्सर्वदेवानां भ्रष्टत्व मवधार्यम् ॥२३॥

॥ भाष्य प्रदीपम् ॥

भ्रष्टत्वति निहत्यमुष्ठिनादन्ता न्पूष्णश्चैवन्यपातयत् ॥ वन्देर्हस्तद्वयंछित्वा जिव्हामुत्पाट्यलीलया तथा विष्णुं सगरुडं समायातं महाबलं विव्याधनिशितैर्बाणै स्तम्भयित्वा सुदर्शन मितिकूर्म्मोक्त्यादक्ष प्रजापतिं हस्ताभ्यामाच्छायतिष्ठं त विष्णुंतद्धस्तावपिछित्वा यज्ञाद्बहिष्कृत इत्यर्थः ॥२३॥

ब्रह्मणश्च शिरश्छिन्नं विष्णोर्हस्तौ तथाछिनत् ॥
पुष्पोर्दन्तां स्तथाछित्वा नेत्रं चन्द्रस्य चाछिनत् ॥२४॥

॥ भाष्यम् ॥

ब्रह्मणः शिरच्छेदनत्वमपि दर्शयन्नाह ॥ ब्रह्मणेति ॥ पुरापञ्चमुखोभुत्वा गर्वितोऽसि सदाशिवम् ॥ कृतश्चतुमुख येन विस्मृतं ऽसितदद्भुत मित्यादि स्कन्दपुराणान्तर्गत केदारखण्डोक्त्या तथा समुत्थाय महाविष्णु भ्रामयित्वा त्रिवापुनः शूलंवक्षस्यथ हस्तौ छित्वायज्ञ द्बहिष्कृत इत्यादिनाबहुशो द्रष्टव्यम् ॥२४॥

॥ भाष्य प्रदीपम् ॥

गर्वितोऽसिइति ॥ विनिर्गतोऽसि शम्भोत्वं रुद्रनामाममात्मजः इतिगर्वेण संयुक्तं वचः श्रुत्वा महेश्वरः कालभैवनामानं पुरुषं प्राहिणोत्तदा ततस्तत्पञ्चमं वक्त्रं भैरवःप्राछिनद्रुषा ततोममारब्रह्माऽसौ कालभैरवहिंसिते तिस्कन्दपुराणान्तर्गत ब्रह्मखण्डोक्त्यासर्वंज्ञेयमिति भावः हस्तौछित्वेति ॥ शिवाज्ञया महाविष्णो गच्छ-त्वंनिधिसन्निधौ जगन्नाथेतिनाम्नावै पूज्योदारुमयम्वपु रित्यवधेयम् ॥३४॥

त्रिशिखोग्निर्य्यतो जात श्चाशित्रनेर्नाशिकान्तथा ॥
एवं यज्ञस्थ देवानां तत्तदङ्गान्व्य घातयत् ॥३५॥

॥ भाष्यम् ॥

ननुं किमेतद्यक्षमित्यादि केनोपनिष द्वृत्तमजानतोग्नेरि दानीं त्रि-शूलेन विनाशोनेत्याह ॥ त्रिशिखइति ॥ तत्रैवसति येचात्रदेवतायज्ञे यद्यदङ्गाभिमांनिन स्तेषामङ्गा निष्कृष्य वीरभद्रो व्यघातय दित्यादिना भारते बहुशः शान्तिपर्व्वणि द्रष्टव्यम ॥३५॥

॥ भाष्य प्रदीपम् ॥

अजानतइति ॥ तद्यथा ॥ यक्षरूपोमहादेवः कोशित्याहानलम्प्रति अग्निर्वा-हमस्मीति यक्षप्रत्याहसोऽपि च तस्मैप्रोवाच भगवान् तवकिंवीर्य्यंइत्यपि सर्वंइदं दहेयंहि यद्भुम्यांसमवस्थितम् इत्याहाग्निस्त्रिणन्तस्मै निधायपरमेश्वरः तद्दहेतीति भगवान्स्मय मानोभ्यभाषत अग्निस्सर्व्वजवेनैव नदग्धुं तृणमास्तिके तिसम्वादेन शिवतत्वमजानतोऽग्नेरित्यर्थः ॥३५॥ सर्वदेवतनुरिति ॥ विष्णुमूर्तिमुपाश्रित्य

तस्मात्सर्वं प्रयत्नेन शिवं यज्ञे प्रपूजयेत् ॥ तेनैव सङ्गतादेवा स्सर्वे पूज्या न संशयः ॥३६॥ शिवोदेवो द्विजो ब्रह्मा क्षत्रियस्तु हरिस्मृतः ॥ इन्द्रो वैश्यस्तथैवान्ये यक्षाद्याः शूद्रजातयः ॥३७॥

॥ भाष्यम् ॥

नन्वतः परं किंकरणीय मस्तीत्युपसंहन्नाह ॥ तस्मादिति ॥ तत्रैवंसति शिवहीना क्रियानैव दानहीना नभूमिपाइत्यादि स्मृत्या तथा ईश्वरस्सर्वभूतानां सर्वदेवतनुर्हरः पूज्यतेसर्वयज्ञेषु सर्वाभ्युदय सिद्धिदेति कूर्म्मस्मृत्यापि च सदाशिवस्य सकलयज्ञादौपूज्यत्वञ्च स्फुटीकृतम् ॥३६॥ एवमिह देवेषु जातिविशेषे णापि सदाशिवस्यसर्वोत्कृष्टत्वं हरे र्ब्रह्मणश्च देवत्वञ्चस्फुटी करिष्यन्नाह ॥ शिवइति ॥ एवन्तर्हि देव देवः शिवः प्रोक्तोनामतश्चार्थतस्तथा ॥ विचारेणाय मेवार्थ स्त्वयमेवा विचारणे त्यादि स्मृत्यापि सर्वोत्कृष्टत्वं सदाशिवस्यैवेति निर्णीतम् ॥३७॥

॥ भाष्य प्रदीपम् ॥

श्रुतिवाक्यानिकानिचित् एवं मूर्त्याभिधानेन द्वारेणैवमुनीश्वराः प्रतिपाद्यो महादेव स्स्थितस्सर्वासुमूर्तिष्विति स्मृत्या सर्व देवोपाशकानां फल दातृत्वं शिवस्यैचेतिबोध्यम् ॥३६॥ जातीति । संकराः सर्वदेवाश्च वृषलस्तु पुरन्दरः पिता महस्तुवैश्यश्च क्षत्रियः परमोहरिः ब्राह्मणो भगवान्रुद्रः सर्वेषामुत्तमोत्तमेतिपाराशरपुराणोक्त्या तथा ॥ ॐ कारोग्निः शिवसोमः पितरश्च प्रजापतिः विष्णुश्चैव रविश्चेति नवमें सर्वदेवता इतिनवसूत्राणां तत्साधकत्व मप्यवधार्य्यम् ॥३७॥ ननु प्रजा-

विप्राणां दैवतंशम्भुः क्षत्रियाणां हरिस्मृतः ॥ वैश्या-
नान्तु तथाचेन्द्रो शूद्राणां यक्षजातयः ॥३८॥

॥ भाष्यम् ॥

नन्वेवंसति जातिविशेणापि कैः कः पूज्य इत्यतोऽव्यवस्थामाह ॥ विप्राणामिति ॥ तत्रैवंसति ब्राह्मणैः क्षत्रियैर्वैश्यैः शूद्रैरपियथाविधि तत्तद्देवन्पूजयेतु सर्वैः पूज्यस्सदाशिव इत्यादि स्कान्द वाक्यादप्यन्येषां-सदाशिव साहित्येन पूजनं युक्तमित्यवधार्य्यम् ॥३८॥

॥ भाष्य प्रदीपम् ॥

पतेर पूज्यत्वं पूजंथजं विप्ररूपत इत्यादि वर्त्तर्हि कथं सदाशिवस्य सर्वपूज्यत्व मित्याह ॥ साहित्येनेति शिवेमध्यगते सूर्य्ये गणेश गिरिजाच्युत अग्निनैऋत्य वायव्ये शानेषु परिपूजये दित्यादिस्मृत्या ॥ तथा ॥ अपूज्या यत्र पूज्यन्ते पूजनीयोनपूज्यते त्रीणीतत्र प्रवर्तेत दुर्भिक्षं मरणं भय मित्यादिस्मृत्या च ॥३८॥

गङ्गागर्व्वापहणं कालकूटस्य भक्षणम् ॥ इन्द्रदो
भञ्जनञ्चापि कृतनं शिरसो विधेः ॥३९॥

॥ भाष्यम् ॥

अथ गङ्गायाः विष्णुपादोदकत्वाच्छिवेन शिरसा धृतत्वात्तन्माहा-त्म्यज्ञः शिव एवेति यत्पामराः कथयन्ति तन्नेत्याह गङ्गा गर्वेति ननुच विशाम्यहं हिपातलं श्रोतसो गृह्य शङ्करम् ॥ तस्यापलेपनं ज्ञात्वा क्रुद्धःस भगवान्हरः तिरो भावयितुंचक्रे बुद्धिंत्रिनयनस्तथेति वाल्मीको-

त्त्यात्रिज्ञातव्यम ॥ अनन्य साध्यत्त्वा ज्जगद्रक्षार्थं च कालकूटभक्षणं दक्षयज्ञे इन्द्रस्य वाहुस्तम्भनं विधेः पञ्चम शिरच्छेदन मितिभावः ॥३९॥

॥ भाष्य प्रदीपम् ॥

तथा ब्राह्मणानामधिपतिः शिव एव सनातन स्त्रांत्रयाणांहरिः प्रोक्त सोपिशंकर किंकरेति पाराशरोक्त्याद्रष्टव्यम्—विष्णु पादोद्भत्वेति ॥ तत्रदेवर्षिगन्धर्वा वसुधातल वासिनः भवाङ्गपतितं तोयं पवित्रमितिपस्पृशु इत्यादि वाल्मीकोक्त्या गङ्गा शिवजला न विष्णु जनेति भावः तथा दक्षिण्यधुनेवेश कालकूटो यमद्भूतः येनकेनाप्युपायेण कृष्णच्चे दस्यवारणा मिति शिवरहस्यांक्त्या ज्ञातव्यम् । ३९॥

रक्तपानं हरेस्तद्वत्करोटीश्रग्विधारणम् ॥ एवमादिनी चान्यानि महादेव कृतानि तु ॥४०॥

॥ भाष्यम् ॥

तथा ब्रह्मणस्तुशिरश्छित्वा विष्णोश्चरुधिरेणवै पूरयित्वाथ आगच्छ शीघ्रत्वं याहिभैरवेति स्कन्दपुराणोक्त्या रक्तपानत्वमित्याह ॥ हरेरिति । नारायण सहस्राणां ब्रह्मणामयुतस्यच कृताशिरकरोटीभि रनादिनिधनातथेति स्कन्दपुराणान्तर्गत प्रभासखण्डेक्त्या संहारकाले सर्वेषां मुण्डमालां धृत्वा महास्मशाने नृत्यतिरुद्रः एतादृशान्यपि बहुनि कर्म्माणितेनैव कृतानि तत्समःकोभवेदित्याशयः ॥४०॥

॥ भाष्य प्रदीपम् ॥

नारायणेति ॥ ननु संहर्ताचमहादेव स्तदानन्तानित्र धीन्हरीन ॥ इन्द्रादीनपरान्देवा स्तत्तदण्डेषुस्थितानि दिव्रह्मादि पुराणोक्त्या सर्वेषां नाय कत्वं कस्येवेतिवोध्यम् ॥४०॥

ब्रह्मचारी भवेन्मुण्डी शिखीदाराभिसंग्रहात् ॥ वाण-प्रस्थोजटीप्रोक्तस्तु य्योंन्यासीतु ज्ञानवान् ॥४१॥

॥ भाष्यम् ॥

ननु पञ्चत्रिंशतितत्त्वज्ञो यत्रकुत्र श्रमेनरो मुण्डीजटीशिचापि मुच्यतेनात्रसंशय इत्यत्र कस्तर्हि मुण्डीत्याह ॥ ब्रह्मचारीति ॥ तत्रैवंसति सकलवर्णेषु चौलादिकर्म्मयुक्तत्वेनमुण्डीत्वम् ॥ तथाशास्त्रविधिनादार संग्रहाच्छिखित्वम् ॥ एवंनखलोमादियुक्तत्वेन वाणप्रस्थत्वंजटित्वम् ॥ तथा त्यागः प्रपञ्चभूतस्य चिदात्मत्वावलोकनादितिरित्या तुर्य्यत्वेन सन्यासित्वञ्चेति चतुर्विधेष्वेव वर्णेष्वाश्रमचतुष्टयत्वंविवेक्तव्यम् ॥४१॥

॥ भाष्य प्रदीपम् ॥

विवेक्तव्यमिति ॥ कथमन्यथा गच्छत्वं मन्दमूर्खत्वं शिखानिष्क्रीयतांमठेनाप्यां कूपेपवांनञ्च नम्रोयतां धर्मवर्जित इत्यादि स्कान्दे कौपीनार्थं प्रतिपादनेनोक्तं तथा च अन्नार्थेजिह्म मुद्दिष्टं नमोक्षार्थं मितिस्थिति रितिविष्णु स्मृत्योक्त्या तथा नकर्म्मणाम नारम्भान्नैष्कर्म्यं पुरुषोधनुते न च सन्यसनादेव सिद्धिं समधिगच्छतीतिगीतोक्तथापि च ज्ञातव्यमित्यवधेयम् ॥४१॥

निर्व्याजी स्वीयधर्मज्ञो वेदज्ञस्तत्व पारगः ॥ विरक्तो वेषनिर्मुक्तो षडभिर्विप्रो मुनिर्भवेत् ॥४२॥

॥ भाष्यम् ॥

नन्वस्त्वेवं परंत्वेतावत्प्रबन्धेन सर्व्वतः परत्वं शिवस्यदर्शितन्तथाप्यत्र भूदेवत्व लक्षणं ब्रह्मणयमपि षट्गुणयुक्तत्वेन कीदृशमित्याह ॥

निर्व्याजीति ॥ तत्रताव द्यथान्तस्तथावहि रित्यादिश्रुत्या वहिरन्तर्निष्कपटः एवंयथोक्त स्नानसन्ध्येत्यादिना षट्कर्म्मयुक्तत्वेन स्वीयधर्मज्ञः तथा गायत्र्याद्यर्थ निपुणत्वेनवेदज्ञः एवं शास्त्रसज्जनसम्पर्क इत्याद्यष्टांगयोगयुक्तत्वेन तत्वज्ञत्वेसति वेदपारगः तथा पुत्रदाराप्तवन्धुनां संगमःपान्थसंगम इत्यादिरित्या विरक्तः ॥ एवं मृतानारी दरिद्रैस्तु दूषिताःपापविन्दवः इत्यादिरित्यावेषर्जितश्चेति षडंग योगयुक्तत्वेन विप्रोमननशीलत्वेनमुनिर्भवेदितिहि परमार्थः ॥४२॥

॥ भाष्य प्रदीपम् ॥

षट्कर्म्मयुक्तेति सन्ध्या स्नानं जपोहोमोदेवतानाञ्चपूजनम् आतिथ्यं वैश्ववेवञ्चषट् कर्म्माणिदिनेदिनेति पाराशरस्मृत्योक्त मवधेयम् योगयुक्तत्वेनेति ॥ एवंसति शास्त्रसज्जनसम्पर्को विचारोऽसङ्गभावना समता स्वच्छता सौम्या सप्तधाभूमिकामते त्वधिक सिद्ध भूमिकया ष्टांगयोग युक्तत्वेनेत्य वधार्य्यम् ॥४२॥

स्वकीयं परकीयम्वा शरीरं देवनामयम ॥ न कुर्यात्पादकैय्युक्तं हन्ति तं देवतापरा ॥४३॥

॥ भाष्यम् ॥

तस्मा च्छिवस्थानेशरीरेस्मि न्संस्थितः स्वात्ममायये त्यादिनास्मृत्यन्तरादप्यशिवेनाधर्म कर्मणा नावलिप्त मिदं शोमनम्वपुः कुर्य्यादित्याह । स्वकीयमिति किन्तु शुद्धेनम्मर्णादेवोभूत्वा देन्यजेदिति रीत्यैव वर्तितव्यम् । अन्यथा शरीरशाक्षिणी परादेवता तम्पुरुषं मलिनकर्म्मणाहन्ति नरकाद्यनिष्ठं प्रापयतीतिगत्यर्थोत्र हनिरित्याशयः ॥४३॥

॥ भाष्य प्रदीपम् ॥

अशिवेनेति ॥ तद्यथा शास्त्रवेदेनवर्ज्यानि कर्म्माणित्यशिवविदुरिति स्मृत्या पुनः सर्वेषां सर्वकार्य्येषु विवाहेपुत्र जन्मनि मांगल्येषुच सर्वेषु नधार्य्यं- गोपिचन्दन मितिनिर्णय सिन्ध्वोक्त्यापिती अमंगल कर्म्मणा अशिवंप्राप्नुवन्त्येव कुम्भीपाकादि लक्षणे तिस्मृत्याप्यवगन्तव्यम् ॥४३॥

नक्षतं विग्रहे कुर्यादस्त्रशस्त्र नखादिभिः ॥ यदि कुर्य्यात्तु चक्राद्यैः पतत्येव न संशयः ॥४४॥

॥ भाष्यम् ॥

अतएव आत्मघातन्तुयःकुर्य्या द्रौरवेपतति ध्रुव मित्यादि धर्मप्रब- न्धेप्युक्तमित्याह ॥ नक्षतमिति ॥ तद्यथा ब्राह्मणस्य तनुर्ज्ञेया सर्वदेव समाश्रये त्यादि भूदेवस्तप्तमुद्रान्तु चिन्हंकृत्वा विमूढधी रित्यादि वहुश- स्सर्वशास्त्रार्थ दर्शने चिदमत्र भाष्येपि द्रष्टव्यम् ॥४४॥

॥ भाष्य प्रदीपम् ॥

भूदेवेति ॥ अतएव निष्काशनं कुर्तांकस्य राज्याद्वानगराद्वहिरित्यादि प्रायश्चित्तकदम्बस्मृत्या तथा शिव केशवयोरङ्कांच्छूलचक्रादिकांस्तथा न धार- येन्मतिमा न्वैदिकेवर्त्मनिस्थिते तिस्मृत्यापिच ॥ भूदेवस्तप्तमुद्रान्तु चिन्हकृत्वा- विमूढधी इहजन्मनि दरिद्रस्या त्प्रेतः पश्चाद्भविष्यतीति स्मृत्या ज्ञातव्यम् ॥४४॥ सकलकर्म्मेति ॥ यथोक्तं स्नाने दाने जपे होमे वैश्वदेवे सुरार्चने घृत-

सर्व्वेषामेव भक्तानां शम्भोर्लिङ्गमनुत्तमम् ॥ शितेन भस्मना कार्यं ललाटे वैत्रिपुराड्रकम् ॥४५॥ तस्मात्स-

र्वप्रयत्नेन यथोक्तस्थानपूर्वकम ॥ यथोक्तध्यान संयुक्तो यथोक्तां देवतां स्मरेत् ॥४६॥

॥ भाष्यम ॥

ननुतर्हि स्नानोत्तरं सन्ध्यादौ सर्वैं किंकर्तव्यमस्तीत्याह ॥ सर्वेषामिति ॥ तथाचेह यस्यभाले विभूतिर्नो नांगे रुद्राक्षधारणम् नशम्भोर्भवनेपूजा सविप्रःश्वपचाधिके तिश्रुत्या ये भस्मधारणंत्यक्त्वा सन्ध्यांकुर्वन्तिमानवा स्तानानयन्तुनरके ष्विंतिघोरेषुपतत इत्यादिस्मृत्यन्तराच्च भस्मादि धारणस्यावश्यकत्वं सन्ध्यादि सकलकर्म्मसुदर्शितम ॥४५॥ एवमिह श्रुतयस्मृतयश्चैव युक्तयश्चेश्वरेश्वरम् वदन्ति तद्विरुद्धंयो वदेत्तस्मान्नचाधम इत्यादिस्मृत्यापि सकलसिद्धान्त सिद्धमर्थमुपसंहरन्नाह ॥ तस्मादिति ॥ तत्रैवंसति कुण्डस्थण्डिलसंयुक्त इत्यादिस्थाने पृथ्वीपीठ मित्यादि द्विविधध्यानयुक्तः सन्यथोक्तां तत्तत्स्थानानुगतां देवतांस्मरेदित्यर्थः ॥४६॥

॥ भाष्य प्रदीपम् ॥

त्रिपुंड्रः पूतात्मा मृत्युंजति मानवे तिस्मृत्य व्य वगन्तव्यम् ॥४५॥ कुण्डस्थण्डिलेति ॥ तत्रतावत्कुण्डंनित्यहवनार्थं स्थण्डिलन्तु वैश्वदेवार्थ मित्यर्थः तदुक्तं स्कान्दे तद्यथा गरुड पुराणे त्रिंशेध्याये शिवपूजनविधौगुरुडम्प्रति श्रीकृष्ण वाक्यम् शिवोदाता शिवोभोक्ता शिवःसर्वमिदं जगत् शिवोजयति सर्वत्र यःशिवः सोहमेवहियत्कृतं यत्करिष्यामि तत्सर्वं सुकृतंतत्र त्वंत्राता विश्वनेताच नान्योनाथोऽपिमे शिवेति वाक्यात्तथा नविप्रपादोदककर्दमानि नवेदशास्त्रप्रनिगर्जितानि

स्वाहा स्वधाङ्कारविवर्जितानि दरिद्रयुक्तानिगृहाणितानी त्यादि दालभ्य स्मृत्यासम्वादाद्विवेक्तव्यम् ॥४६॥

मन्त्राणां मन्त्रराजोयं यतश्चास्मिन्निरूपितः ॥ सर्वस्वं सर्वतो भद्रं सर्वतत्वैकदर्शनम् ॥ ४७ ॥ य इदं पठते

॥ भाष्यम् ॥

ननु किमत्र सर्व्वतो निगूढं निरूपितमित्याह मन्त्राणामिति ॥ तथाचास्य सर्वार्थग्राहकत्वेन मन्त्राणां मन्त्रराजोयमित्यादि स्कान्दस्मृत्यापि चषडक्षरस्य मन्त्रराजत्वमववार्यमितिभावः ॥४७॥ अथ वेदाभ्यासेषु-यत्पुण्यं यत्पुण्यंयज्ञकर्म्मणि तत्पुण्यंलभतेमर्त्यो राजमन्त्रस्यपाठत इत्यादिस्कान्दस्मृत्या प्यावश्यकत्वे नात्रफलाधिक्यमपिदर्शयितु

॥ भाष्य प्रदीपम् ॥

निगूढमिति ॥ पञ्चाक्षरश्चगायत्री श्रौतंमन्त्रद्वयंस्मृतं उभयोर्दैवतंयस्मा न्महादेवोमहेश्वरेति स्मृत्या यथा सर्व्वदेवाधि पत्यत्वं शिवस्य तथैव सर्वमन्त्राधिपत्यत्वं षडक्षरस्यैवेतिबोध्यम् ॥ ४७ ॥ फलाधिक्यत्वं ॥ तथाच कैवल्यमार्गदीपोय

नित्यं ध्यायन्नभ्यास तत्परः ॥ एक काल द्विकालम्बा त्रिकालम्वाथमानवः ॥४८॥ इहैवंजन्मनामुक्तःशिवज्ञानी विमुच्यते ॥ लब्ध्वेप्सितान्यथाकामान्कैवल्यञ्चापि यद् ध्रुवम् ॥४९॥

इति श्री शिवरहस्ये षडक्षर मन्त्रराजस्तोत्रं सम्पूर्णम् ॥

॥ भाष्यम् ॥

माह ॥ यइममिति तत्रैवंसति यः पुरुषोयथा कालं यथोक्तनियमेन यथोक्त ध्यानपूर्वकत्वेनच पठेत्तस्यफलाधिक्यं सर्व्वतोगरिष्ठत्वेनविवेक्त व्यमितिभावः ॥४८॥ ननुचात्र किमस्य पाठाच्छ्रवणध्यानतश्च फलाधिक्यमित्याह ॥इहैवेति॥ तथा चेहैव जन्मना ऋणत्रयविमुक्तत्वेन जीवन्मुक्तस्सन्विमुच्यते ऽनावृत्तिलक्षणं कैवल्यं लभत इत्यर्थः ॥तद्यथा॥४९॥

पञ्चाक्षस्य पद्यस्य राजमन्त्राभिधस्यवै ॥
सर्वस्व दर्पणम्भाष्यं रचितंतत्वहेतवे ॥
इति विस्तरादुपरम्पत इति शिवम् ॥

इति श्रीमत्पदवाक्य प्रमाणपारज्ञयोगिवर्य्यविप्रराजेन्द्रविरचितं सर्व्वश्वदर्पणाभिधं पञ्चाक्षरभाष्यं समाप्तम् ॥

॥ भाष्य प्रदीपम् ॥

मविघ्नासिन्धुवाडवः महापातक दावाग्नि स्सोयं मन्त्रः षडक्षरेति स्कान्दस्मृत्या फलाधिक्यमिति भावः ॥४८॥ ननू र्व्वारुकमिव वन्धनान्मृत्योर्मुक्षीये त्यादि श्रुतौ दृष्टान्तमुक्त न्दर्दिहकेनकर्म्मणा कैवल्याधिकारी स्वतएवभवतीत्यभिप्रेत्याह ॥ ऋणत्रयेति ॥ तद्यथा देवोपासनयादेवं पैत्रन्तु पुत्रतोजयेत् ऋष्यादितोजयेदार्षं कैवल्यात्सर्वतोजयेदि त्यादिविस्तरादुपरम्यत इतिशिवम् ॥४९॥

इतिश्रीमद्योगिवर्य्यविप्रराजेन्द्रात्मज पं० कालिकेश्वरदत्त विरचिता भाष्यप्रदीपिका समाप्ता ॥

३ ४ ९ १
अग्निप्रहाङ्कभूसंख्ये वैक्रमीये सुवत्सरे ॥
लिखितं ग्रन्थमेतद्धि कलिकेश्वर शर्म्मणा ॥

श्री गणेशाय नमः ॥ नत्वा सदा शिवं देवं गुरुं शङ्कररूपिणम् ॥ पञ्चाक्षरस्य भाष्यस्य भाषार्थं क्रियते मया ॥ १ ॥

दोहा

श्री सदाशिवदेवको योगिराज शिरनाय।
पञ्चाक्षर अस्तोत्रका भाषा करों बनाय ॥

(ॐनमः शिवाय) यह मन्त्र सात कड़ोर जो मुक्ति देनेवाले शैवमन्त्र हैं उन सब मन्त्रोंसे श्रेष्ठ है जैसे सव देवोंमें महादेव श्रेष्ठ हैं वैसे ही सव मन्त्रोंमें यह मन्त्र श्रेष्ठ है चलते फिरते खाते सोते बैठते उठते सदा जो इस मन्त्रका अभ्यास करते हैं उनको और कर्म्म करें या नहीं करें कुछ उससे विशेष फल नहीं होता ॥१॥

जिसने इस मन्त्रका अभ्यास अपने हृदयमें स्थिर कर लिया है वह सब सुन चुका और सब कर चुका कोई कर्म्म उसको करना बाकी नहीं है ॥२॥

जितना शिवज्ञान है और विद्या आहार है सब इस षडक्षर मन्त्रके सोलभागके एक भागका वरावरी नहीं कर सकते जैसे वटके वीजमें महावट वृक्ष रहता है वैसे ही इस मन्त्रमें सब विद्या और सब ज्ञान भरा हुआ है ॥३॥

आगे इस मन्त्रका प्रति अक्षरका ऋषिछन्द देवताका कथ करते हैं क्योंकि बिना ऋषिछन्द देवताकीर्तनके जप करनेसे पूर्ण फल नहीं

होता है ॐकारका उदात्तस्वर ब्रह्म ऋषि (प्रवर्तक) श्वेतवर्ण अनुष्टुप् तथा गायत्री छन्द परमात्मा शिवदेवता हैं परमात्मा शब्द शिवका वाच है केनोपनिषदकी श्रुति कहती है कि शिव एक समाधिमें प्राप्त होनेवाला आत्मा जानवे योग्य है और शाण्डिल्योपनिषदकि श्रुति कहती है कि आकाशतव्यापक सूक्ष्मशिव अमृत ब्रह्म आत्मा है तथा गीतामें भी श्रीकृष्णचन्द्रने अर्जुनके प्रति कहा है कि उत्तम पुरुष हमसे अन्य परमात्मा है जो तीनों लोकमें व्यापक हो कर सबका पालन करता है ॥४॥

नकारका पीतवर्ण पुर्वमुख इन्द्रदेवता गात्री छन्द गौतमऋषि हैं ऋषिका अर्थ है कि जिससे लोकमें विस्तृत हो ॥५॥

म कारका कृष्णवर्ण दक्षिण मुख अनुष्ठुप और गायत्रीछन्द रुद्रदेवता हैं रुद्र उनका नाम इस कारणसे है कि उनके भक्तिसे विमुखजनोंको रुलाते है ॥६॥

शिकारका धूम्रवर्ण पश्चिममुख विश्वामित्र ऋषित्रिष्टुप छन्द विष्णुदेवता है जो कुछ इस जगतमें देखने सुननेमें आता है सो सब विष्णु हैं और जो वेदोंके आदिमें कहागया है जिसको वेदान्त ब्रह्म आत्मा परमात्मा नामसे कहता है वही महेश्वर शिव हैं ॥७॥

वाकारका सुवर्णके सदृशवर्ण उत्तरमुख ब्रह्मादेवता बृहतीछन्द अङ्गिराऋषि हैं सदाशिवके दक्षिण अङ्गसे ब्रह्मा वामअङ्गसे विष्णु अग्रभागसे रुद्र तीनोंको उत्पन्न कर स्पष्टिपालन संहारका आज्ञा दिये ॥८॥

य कारका लालवर्ण उर्ध्वमुख विराट्छन्द कार्तिकेय देवता भरद्वाजऋषि हैं जो ईशान नामकी मूर्ति पूर्वाभिमुखा सर्वश्रेष्ठ प्रकृति (माया) का भोक्ता क्षेत्रज्ञमें रहती है। और जो तत्पुष नामवाली दूसरी मूर्ति है गुणोंके आश्रयमें उत्तर मुख होकर मायामें स्थित रहती और जो अघोर नामिका तीसरी मूर्ति है सो दक्षिण मुख होकर बुद्धिमें रहती है और जो वामदेव नामवाली चौथी मूर्ति है पश्चिम मुख होकर अहंकारमें रहती है और जो सद्योजात नामवाली पाँचवीं मूर्ति उर्ध्वमुख हो कर मनमे रहती है ॥९॥

न्यासके बिना मन्त्र जपका पूर्णफल नहीं होता है अतः न्यासका भेद आगे कहते हैं न्यास तीन प्रकारका है उत्पत्ति[१] स्थिति[२] संहृति[३] ब्रह्मचारीको वेद वेदाङ्ग आदि अनेक विद्यावोंको अपने हृदयमें उत्पन्न करना है अतः उनको उत्पत्ति न्यास करना—और गृहस्थको स्थिर हो कर पुत्रपौत्रादिकोंका रक्षा करना अतः उनके लिये स्थिति न्यास कहा गया और सब कर्मोंको नाशकर त्यागी हो कर रहनेसे यतीके लिये संहृति न्यास है ॥१०॥ ॥११॥

मस्तकसे आरम्भकर पैरतक जो खतम हो उसको उत्पत्ति न्यास कहते हैं और करन्यासमें दक्षिण हाथके अंगुष्ठसे जो आरम्भ हो और वाँम अङ्गुष्ठतक खतम हो उसको उत्पत्ति न्यास कहते हैं ब्रह्मचारीके लिये हैं ॥

और पैरसे आरम्भ हो मस्तक तक जो खतम हो उसको संहृति

न्यास कहते हैं वांम अगुष्ठसे आरम्भ कर दक्षिण अंगुष्ठतक खतम करना संहृति है यतीके लिये ॥

हृदय मुख गदनसे जो आरम्भ किया जाय सो स्थिन्यास है और कन्यासमें दोनों हाथके अंगुष्ठसे आरम्भकर कनिष्ठिका तक जो न्यास है सो स्थिति न्यास गृहस्थोंके लिथे अति आनन्ददायक है

॥१२॥ ॥१३॥ ॥१४॥ ॥१५॥

(ॐनमः शिवाय) इस मन्त्रसे सब अङ्गोंको छूना यह देह न्यास तीनोंके लिये एक ही तरह का है ॥१६॥

प्रत्यक्षका ऋषिछन्द देवताका कथन करके आगे समस्त मन्त्रका ऋषिछन्द देवता कहते हैं मन्त्र पाँच अक्षरका है आदिमें ॐकार लगानेसे छः अक्षरका होता है।

ॐनमःशिवाय

इस मन्त्रका ब्रह्मा ऋषि हैं पङ्क्ती छन्द है महादेव देवता हैं ज्ञान प्राप्ति प्रयोजन है ॥१७॥

संसाररूपी दावानलसे तप्त दीन होकर अर्थ धर्म काम मोक्षके प्राप्तिकेतु मैं नमस्कार करता हूँ ॥१८॥

और एकर्थ इस मन्त्रका यह है वहिर्मात्रसे अङ्ग परिवारके साथ पूजन करके मैं यह चाहता हूँ कि शिव अर्थात् कल्यान रुप मैं हो जाउँ ॥१९॥

और फिर भी एक अर्थ यह है कि यह जीव केवल शिव है मन

बुद्धि चित्त अहंकारके बन्धनमें पड़कर जीव सुख दुःखका भोक्ता होता है इस बन्धनसे छूटकर मैं शिवरूप हो जाऊँ ॥२०॥

पुनः एक अर्थ यह है कि वाकारका ब्रह्मा देवता हैं अतः सृष्टिकर्ता वाकार है और शिकारका विष्णु देवता हैं अतः पालनकर्ता हैं मकारका रुद्र देवता हैं अतः संहारकर्ता है नकारका इन्द्रदेवता होनेसे राज्यकर्ता है यकारका स्कन्ददेवता होनेसे सेनापति होकर युद्धकर्ता है वही षड़क्षर मन्त्र वाच्यदेव सदाशिव सब रूप होकर सब कार्य करते हैं उनको मैं नमस्कार करता हूँ ॥२१-२२॥

पुराण अठारहोंका निष्ठा (भक्ति) काष्ठा परत्व वर्णन शिवमें है निग्रह (क्रोधसे दण्ड) अनुग्रह (तपसे वरदान) दोनों रूपसे उन्हींका परत्व है पुराण अठारह उपपुराण अठारह महाभारत अठारह पर्व भगवद्गीता अठारह अध्याय विद्या अठारह यह सब अठारह ही क्यों हुए तो लिखा है कि पाँचसे शिवका पाँचो मुख दशसें दशो बाहु दोसे पैर एकसे हृदय शिवरूप सब है ॥२३॥

राम रावणका युद्ध शिवके प्रभावसे है कैसे कि रावणको तपसे प्रसन्न हो कर वर दिये और जानकी हरणके वाद अगस्त्य ऋषिके उपदेशसे राम शिवका आराधन तप किये दोनोंको वर देकर लड़ा दिये शिव देखनेवाला हैं अतः शिवका लीला है राम रावणका नहीं है जैसे दो पहलवान लड़ते हैं सब लोग देखते हैं तो पहलवानोंका लीला नहीं है देखनेवालोंका है ॥२४॥

वेदसे भी शिव ही पूज्य हैं उनके पूजनके वाद ही और देव पूज्य हैं पृथ्वी अर्घा हैं आकाश जो लिङ्गाकार है सो शिवह मेघ जलधारा है तारागण पुष्प हैं इस स्कन्दपुराणके कथनसे सर्वमय वही शिव हैं और दक्ष यज्ञमें प्रथम पूजा विष्णुका हुआ शिवका पूजा नहीं हुआ तो सब देवोंका अंगभंग हुआ इस भारतके उक्तिसे भी शिव प्रथम पूज्य हैं २५

सब जीव शिवका अंश हैं और (सर्वं शिवमयं जगत) सब जगत शिवमय है इस भावसे तो सब पूज्य हैं परन्तु व्यवहारिक दशामें सब द्विपदमें विष्णु श्रेष्ठ हैं और उनके वाद प्रजापति उनके वाद इन्द्र आदि देवता वाद उनके यक्ष गन्धर्वादि वाद मनुष्य मनुष्योंमें ब्राह्मण वाद क्षत्रि वैश्य शूद्रादि और सबसे श्रेष्ठ शिव हैं क्योंकि जो इन्द्रको सहस्राक्ष बनायें विष्णुको कमलाक्ष बनाये ॥२६-२७॥

ब्रह्मा आदि सृष्टिमें पाँचमुखका हुए शिवसे अभिमान किये तो शिवने भैरवको आज्ञा दिये कि पाँचवा शिरका काटलो चतुर्मुख हो गये कामदेवने सब देवोंके सदृश शिवको समझकर आया शिवके तृतीय नेत्रसे भयंकर अग्नि निकलकर भस्मकर अङ्गरहित कर दिये भस्मासुर उन्हींके वरदानसे शिरपर हाथ रखते ही भस्म हो गया फिर दूसरोंकी कौन गीनती है ॥२८॥

बहुत लोग कहते हैं कि ब्रह्माके ललाटसे शिव हुए अतः उनका पुत्र हुए सो नहीं ब्रह्माको सृष्टि करनेकी शक्ति देनेके लिये ललाटसे

आविर्भाव हुए और सब लोग शिवका ललाटहीमें ध्यान कर इसलिए नहीं तो खम्भासे नृसिंह हुये तो क्या खम्भा नृसिंहका पिता कहा जा सकता है ? कदापि नहीं जैसे वामनावतारका नख ब्रह्माण्ड कटाहमें लगा वहाँसे गंगा निकली इससे उनका चरणामृत नहीं हुई गंगा पहले ही से रही ॥२९॥

सब देव हैं तो उनका नाम महादेव देव देव देवोंका भी देवता है जैसे स्कन्दपुराणमें लिखा है कि विष्णु भगवान शिवके लिये अर्जुनके गुप्त वनवासके समय शूकर रूप हुये सर्वस्ववर दानप्राप्त करनेके लिये नन्दीरूप हुये हजार कमलोंसे नित्य शिवपूजनका नियम किये एक कमल घट जानेपर अपना नेत्र चढ़ाकर अर्चक हुये त्रिपुर वधके समय वाण हुये मोहिनी अवतार धारणकर सखी भाव हुये नित्य प्रदोषकालमें मृदंग बजाते हैं शिवके ऊपर अपना नेत्र चढ़ाये तबसे कमलाक्ष हुये शिवके आधा भगवती भगवतीके आधा विष्णु शिवके अर्द्धाङ्ग शरीरका भागी हुये और जजुर्वेदमें लिखा है कि सृष्टिके आदिमें ब्रह्माको वेद दिये अतः शिवके भीतर ही सब देव हैं ॥३०॥

भगवतीका वाहन सिंह शिवका वाहन वृषभ भूषण सर्प कार्तिकेयका वाहन मयूर गणेशका वाहन मूँस यह सब परस्पर विरोधी होते हुये भी उनके भयसे कम्पित रहते हैं जैसे वेदकी श्रुति कहती है जिनके भयसे वायु बहते हैं सूर्य उदय लेते हैं अग्नि वरते हैं

मृत्यु मारते हैं इन्द्र राज्य करते हैं ऐसे महादेवको जो स्मरण करते हैं सो घोर पापसे छूट जाते हैं ॥३१॥

इसी प्रकार ब्रह्मा विष्णु भी उन्हींके आज्ञासे सृष्टि पालन करते हैं दूसरोंको क्या कहना है ब्रह्मवैवर्तमें लिखा है कि एक समय ब्रह्मा विष्णु दोनों शिवके पास महाकैलाशमे जाकर अपने-अपने कामसे इस्थिपा दिये वाद उन दोनोंकी बड़ी दुर्दशा हुई किसी तरहसे फिर उनके आज्ञासे अपने कामपर आये तो फिर दूसरोंका क्या कहना है ॥३२॥

शिवको छोड़कर दक्षने यज्ञ किया शान्तिपर्व महाभारतमें लिखा है कि जब शिवके क्रोधसे वीरभद्र निकलकर दक्षका यज्ञ नाश करनेको आये तब अग्नि सूर्य चन्द्रमा आदि सब ग्रह भाग चले सूर्यका दाँत तोड़ लिये अग्निका हाथ काटकर जिभ उखाड़ लिये विष्णु भगवानका सुदर्शनचक्र स्तम्भन कर वाणोंसे वेधन कर दिये और सब देवोंका एक एक अङ्ग भंग किये दक्षका शिर तथा विष्णु भगवानका दोनों हाथ काट लिये ॥३३॥

स्कन्दपुराणके केदारखण्ड और ब्रह्मखण्डमें लिखा है कि एक समय ब्रह्मा पाँच मुखका हुए और शिवसे गर्व किये शिवने भैरवको आज्ञा दिया कि पाँचवाँ शिर काट लो और विष्णुका हाथ काटकर घुमा कर फेक दिये जो समुद्रके किनारे जगन्नाथ नामसे विख्यात हैं और सूर्यका दाँत चन्द्रमाका नेत्र काट लिये ॥३४॥

और अग्नि तीन शिरका हुए अश्विनी कुमारका नासिका काट लिये जिस जिस अङ्गका अभिमानी जो देवता रहे उन सबोंका वह अङ्ग काट लिये केनोपनिषद्में लिखा है कि एक समय सब देवता शिवको छोड़कर स्वतन्त्र होना चाहते रहे शिव यक्षरूपसे आविर्भाव हुये अग्नि वायु उनके समीप भेजे गये उन्होंने दोनोंके आगे एक एक तृण रख दिया और कहा कि हे अग्नि ! भस्म करो हे वायु ! तुम ग्रहण करो अग्नि नहीं जला सके वायु तृणको नहीं हिला सके लज्जित हो लौट आये वाद इन्द्र गये तो अन्तर्ध्यान हो गये आकाशमें हिमवानके पुत्रीको देख पूछते भये कि कौन यक्ष है भगवतीने कहा कि यही ब्रह्म परमात्मा है इन्हींके रहते तुम सब अपना काम कर सकते हो ॥३५॥

विष्णु मूर्ति द्वारा ब्रह्म मूर्ति द्वारा अग्नि मूर्ति द्वारा तत्तदेव मूर्ति द्वारा वेदशास्त्रमें प्रतिपादन महादेवहीका है सब देवरूप होकर वही ग्रहण करते हैं और फल देते हैं अतः सब कर्मोंमें प्रथम उन्हींका पूजन करना चाहिये वाद अङ्ग परीवारमें और देव पूज्य है ॥३६॥

शिव देव हैं ब्रह्मा द्विज हैं हरि क्षत्री हैं इन्द्र वैश्य हैं यक्ष यम शूद्र हैं देव देव शिव है नामसे अर्थसे भी हैं और पराशर उपपुराणमें लिखा है कि सब देवता वर्णसंकर हैं इन्द्र शूद्र है ब्रह्मा वैश्य हैं हरि क्षत्रिय है भगवान रूद्र ब्राह्मण हैं उनमें ब्रह्मगत्व ब्राह्मण कुलमें जन्म लेनेसे नहीं है ब्रह्मरूप होनेसे है और यज्ञोपवीतके नवसुत्रोंका

नव देवता उन्हींके साधक हैं अतः सर्वश्रेष्ठ शिव हैं ॥३७॥

ब्राह्मणका देवता शिव क्षत्रीका विष्णु वैश्यका इन्द्र शूद्रोंका यक्षादि देवता हैं और सब देव भक्तोंको शिव पूज्य हैं शिवको मध्यमें और अग्नि नैऋत्य वायव्य ईशानमें सूर्य गणेश गीरीजा विष्णु यथाक्रमसे पूज्य हैं क्योंकि अपूज्यका जहाँ पूजा हो और पूज्यका पूजा न हो तहाँ दुर्भिक्ष मरण भय उपस्थित होता है और पराशर उपपुराणमें लिखा है कि ब्राह्मणोंका अधिपति शिव हैं क्षत्रियोंका विष्णु सो विष्णु भी शिवका किंकर हैं इत्यादि प्रमाणोंसे सब देव-भक्तोंको प्रथम उपास्यदेव शिव हैं ॥३८॥

गङ्गाका गर्व हरण किये कालकूटसे वेवदानव मनुष्योंका रक्षा किये दक्ष यज्ञमें इन्द्रका बाहुस्तम्भन किये ब्रह्माका पंचम शिर काट लिये फिर उनके बराबर कौन हो सकता है बहुत लोग शास्त्रतत्वसे अनभिज्ञ कहते हैं कि गंगा विष्णु पादोदकी है शिवने चरणामृत समझकर धारण किया परन्तु गंगा जब अभिमान करके वहाँसे चलि तब शिवको क्रोध हुआ और उनको आकाशहीमें रोक देनेका विचार किये परन्तु किसी तरहसे शिवके जटातक पहुँची कई हजार वर्ष उसीमें रह गई वाद भगीरथके बहुत प्रार्थनासे शिव प्रसन्न हो जटासे बाहर किये सात बुन्द निकली तीन. शिवजला गंगा पूरवको गई और तीन पछिमको गई और एक भगीरथके रथके पीछे पीछे चल कर पृथ्वीमें पहुँची सब पृथ्वीतलवासी स्नान मार्जनके लिये चले

यह समझकर शिवके अंगसे गिरा हुआ जल पवित्र है इस वाल्मीकीके वाक्यसे गंगा शिवजला हुई विष्णुजला हुई ॥३९॥

और ब्रह्माके कपालमें विष्णुके रुधिरसे भर लावो ऐसा भैरोको शिवने आज्ञा दिया स्कन्दपुराणके प्रभास खण्डमें लिखा है कि अन्तकालमें रुद्रके वक्त्रसे वारह सूर्य निकलक सचराचर स्वर्ग पातालको भस्म कर देते हैं सब देवोंका मुण्डमाला बनाकर महा स्मशानमें एक रूद्र ही रह जाते हैं इत्यादि ऐसे ऐसे बहुत काम शिवने किया है जो और देवोंसे असाध्य है फिर उनके बराबर कौन हो सकता है इत्यादि ॥४०॥

गृहस्थाश्रम सब आश्रमोंका मूल है और इसीके भीतर चारो आश्रम है प्रथम मुण्डन संस्कार होनेसे मुण्डी वाद विहाकर गृहस्थ वाद पुत्र पौत्रादि हो जानेपर जटी होकर वानप्रस्थ वाद उसके सब संकल्प नष्ट हो जानेपर ज्ञानी (संन्यासी सब काम्यकर्मोंका न्यास अर्थात् त्यागको संन्यास कहते हैं काषाय धारण अन्नके लिये है मुक्तिके लिये नहीं ऐसा विष्णुस्मृतिका और गीताका वाक्य है और गीतामें भी काम्यकर्मोंका न्यास (त्याग) को ही संन्यास कहा है ॥४१॥

(निर्व्याजी)१ वाहर भीतर कपटरहित होना (स्वीयधर्मज्ञः)२ सन्ध्या स्नान१ जप२ होम३ देवपूजन४ आतिथ्य५ वलिवैश्यदेव६ षटकर्मयुक्त होना (वेदज्ञः) वेदका गूढ़ार्थ जानकर गायत्रीका अर्थ

जानना (तत्वपारग)४ अष्टांग योग युक्त होकर ज्ञानप्राप्त करना (विरक्तः)५ पुत्र स्त्री आदि परीवारमें रहते हुए उनसे विरक्त रहना (वेषनिर्मुक्तः) ६ वेषाभिमानी नहीं होना इन छः कर्मोसे ब्राह्मण मुनीश्वर हो जाता है ॥४२॥

अपना या दूसरेका शरीर देवतामय है इस शरीरमें तत्तदिन्द्रियो का साक्षी देवता रहते हैं अतः इसको शास्त्र वेदोक्त वर्जित कर्म्मोंमें नहीं ले जाना और ले जानेसे इस देहका साक्षी देवता क्रोध करके अशिव (अमङ्गल) रूप कुम्भीपाकादि नरक प्राप्त करते हैं गोपीचन्दनसे उर्द्ध पुड्रादि धारण अमङ्गल बेष है निर्णयसिंधु धर्म-शास्त्रमें लिखा है कि बिबाह पुत्रजन्म आदि मङ्गल कार्य्योंमें गोपीचन्दन नहीं धारण करना क्योंकि श्रीकृष्णचन्द्रके देह सम्पात होनेपर आठ पट्टरानी उनके साथ सती हुई हैं जहाँ का मृत्तिका लगाकर वह सती हुई हैं वही गोपीपचन्दन हुआ है विस्तारसे इस विषयको देखना हो तो हमारा संग्रह किया हुआ सिद्धान्तरत्नाकरका प्रथम खण्ड देखिये ॥४३॥

इस देहको सस्त्र अस्त्र नख आदिसे नहीं काटना और त्रिशूल चक्रादि चिह्नोंसे अङ्कित नहीं करना यदि करते तो पतित हो जाता है प्रायश्चित कर्म्म तथा निर्णय सिंधु धर्म शास्त्रोंमें बर्जित किया है जो चक्र त्रिशूलादिसे अङ्कित हों उनको राजाका धर्म है कि अपने राज्यसे अथवा ग्रामसे निकाल दे शिवका चिह्न त्रिशूल विष्णुका चिह्न चक्र

गणेशका चिह्न अंकुश सूर्यका धन्वाबान शक्तिका बरछी आदि धारण करना अवैदिक मार्ग है वेदमें किसी जगह इसका विधान नहीं है कलिके पापी ब्राह्मणादि वर्ण त्रिशूल चक्रसे अंकित होंगे उस पापसे दरिद्र और मरने पर प्रेत होंगे जो लोग वैदिक प्रमाण देते हैं कि (अतप्तनूर्नत दामोहणते) ऋगवेदकी श्रुति है इसका व्यासादि महर्षियोंने इस प्रकार अर्थ किया है कृच्छ्र चान्द्रायणादि व्रतोंसे जो तप्ततनु नहीं हुये सो स्वर्गको नहीं जाते चक्रादिकोंसे जो दग्ध बाहू होते हैं सो दग्धतनु हैं तप्ततनू नहीं हैं इत्यादि ॥४४॥

सब देव भक्तोंको वैदिक मार्गसे उपासना द्वारा स्नानकर सन्ध्याके समय विभूति धारणा करना चाहिये पूर्वकालके जितने वैष्णव ऋषि हुये जैसे नारद, पर्वत, ध्रुव, प्रह्लाद, भृगु, आदि सो सबोंने बिभूति, रुद्राक्ष, धारण कर बिष्णुभगवानका उपासना किये हैं उपनिषद् बेद पुराणोंमें भी लिखा है कि जिसके ललाटमें बिभूति न हो अङ्गोमें रुद्राक्षमाला न हो गृहमें शिवका पूजा न हो वह चाण्डालसे भी अधिक निन्दनीय है और यमका वचन अपने दूतोंके प्रति है कि जो बिभूति धारण किये बिना सन्ध्या आदि कर्म्म करते हों उनको यत्न पूर्वक नरकमें ले आना-इत्यादि ॥४५॥

अनन्य मनसे शिवका पूजन करके प्रार्थना करना कि एक शिव ही दाता, भोक्ता, और सब जगतमय हैं जहां देखिये सब शिव हैं जो शिव हैं वही मैं हूँ जो कुछ सुकृत दुःकृत किये हैं या करते

हैं और करेंगें सो सब शिवमें अर्पण कर देना और आप ही रक्ष है आपसे अन्य दूसरा नहीं है इस गरुड़ पुराणके बचनसे सब देव भक्तोंको शिवका आराधन करना परमावश्यक है ॥४६॥

सब मन्त्रोंका राजा यह मन्त्रराज षड़क्षर मन्त्र है क्योंकि इसमें बीज रूपसे सब स्थित है इस मन्त्र राजस्तोत्रका भाष्य सर्व तत्वैक दर्शन नामक श्रीमद्योगिवर्य्य विप्रराजेन्द्र स्वामिजीने बनाया ॥४७॥

शिव ध्यानयुक्त हो कर जो इस स्तोत्रका अर्थ ज्ञान पूर्बक तीनों काल अथवा एक काल भी पाठ करेंगें सो इसी जन्मसे तीनों ऋण (देवऋण[1]) (पितृऋण[2]) (ऋषिऋण) से मुक्त हो कर कैवल्य ज्ञानको प्राप्त कर शिवरूप हो कर मुक्त हो जायगें ॥४८॥ ॥४९॥

इति श्री भाषाटीका समाप्त

॥ नित्यं शुद्धं निराभासं निराकारं निरञ्जनम् ॥
॥ नित्यबोधं चिदानन्दं गुरुं ब्रह्मनमाम्यहम् ॥

श्री कालिकेशस्य गुरोर्गिरातो बिनिर्गतोयो बहुशोधितस्य । अयोमये यन्त्रवरे सुयत्नात्सु यन्त्र्यतंधर्म धुरन्धरेण ॥ सुरेन्द्र नारायणसिंह जेन । श्री जीवनारायण नामकेन ॥ प्रकाशितं द्रब्य ब्ययेन सर्वं लोकोपकारायथ कीर्तिहेतवे ॥

वेदा[४] ङ्क[९] ग्रह[९] भू[१] संख्ये वैक्रमीये सुवत्सरे ।
कलिकत्ता नगर्य्यांच प्रवासी प्रेस मुद्रितम् ।

—०—

मूल चतुर्थखण्डका शुद्धिपत्र

अशुद्ध	शुद्ध	पृ०	पं०
दिग्वसा	दिग्वासा	३	२
दाक्कृत्	दाह्कृत्	५	३
मेव्वापि	मेघाख्यं	५	६
श्यान्येपि	श्चान्येपि	७	५
याथार्य्यं	याथार्थ्यं	११	६
नोपाल	नेपाल	१६	८
मुनश्च	मुनयश्च	२५	५
त्वाह्लिङ्ग-भ्यर्य्य	त्वाल्लिंगे-भ्यर्च्य	२७	६
स्यिङ्ग	लिङ्ग	२८	९
महेश्वरम्	महेश्वरः	४२	५
ज्ञेयः	धेयः	१२१	८
योग्रं	चोग्रं	१३२	५
सहा	समहा	१५०	२
बर्णा	बर्षाया	१५१	२
कुबेरे	कुबेरेण	१५७	३

टीकाका शुद्धिपत्र

अशुद्ध	शुद्ध	पृ०	पं०
इन्द्र	नइन्द्र	७	४
व्यपक	व्यापक	६	८
कौषेर	कौवेर	३२	६
तोपा	तोया	११३	४
भील	भलि	११४	२
जचल	अचल	११४	१०
जगघोने	जगद्योने	११८	१
वाशुवा	वाशुदेवा	१४६	४
वृत्रकी	वृत्रको	१५१	७
अदितने	अदितीने	१५४	६
लोककी	लोकको	१६२	३
भवान	भगवान	१६७	२
होनेसे	होनेके	१६८	१
नामस	नामसे	१७३	७

पुस्तक मिलनेका पता—

पं० कालिकेश्वर दत्त,

राज्य डुमरांव, जिला आरा

दूसरा पता—

श्री बाबू जीवेन्द्रनारायण राय देवश

लालगोला राज्य, जिला—मसुदाबाद